विषय सूची

1.	1	**आर्थिक दृष्टिकोण, संभावनाएं और नीतिगत चुनौतियां**
	1	प्रस्तावना
	3	वृहत आर्थिक समीक्षा और दृष्टिकोण
	12	मुद्रास्फीति और धन
	15	बाह्य क्षेत्र
	13	कीमतें और मौद्रिक प्रबंधन
	18	कृषि
	19	विकास-राजकोषीय नीति की चुनौतियां
	21	हर व्यक्ति का दुख दूर करना : जनधन, आधार, मोबाइल संख्या त्रयी समाधान
	25	वृद्धि, निजी और सार्वजनिक निवेश
	28	बैंकिंग क्षेत्र की चुनौतियां
	32	मेक इन इंडिया के अंतर्गत निर्माण, सेवाएं और इसकी चुनौतियां
	34	व्यापारिक चुनौतियां
	37	जलवायु परिवर्तन
	39	महिलाओं का सशक्तिकरण: नारीशक्ति को बेड़ियों से मुक्त करना
	41	सहयोगात्मक संघवाद और चौदहवें वित्त आयोग की सिफारिशें
2.	44	**राजकोषीय रूपरेखा**
	44	प्रस्तावना और सारांश
	45	पृष्ठभूमि और इतिहास के सबक
	48	मध्यावधि रणनीति
	49	लघु अवधि मुद्दे
	50	निष्कर्ष
3.	52	**हर आँख से आंसू पोंछना: जैम नम्बर त्रिसूत्री समाधान**
	52	परिचय
	53	सब्सिडी किसे दी जाए?
	57	केरोसीन का मामला
	63	भोजन का मामला
	64	नकद अंतरण से सुलभ होने वाली संभावनाएं
	64	जैम नंबर–त्रिसूत्री समाधान
4.	66	**निवेश वातावरण: अवरूद्ध परियोजनाएं, बकाया ऋण और इक्विटी समस्याएं**
	66	परिचय
	67	अवरूद्ध परियोजनाओं का स्टाक और उनके अवरूद्ध होने का डर
	68	रुकी परियोजनाओं का विश्लेषण
	71	भारतीय अभिलक्षणों युक्त तुलन-पत्र सिन्ड्रोम
	73	फर्म इक्विटी पर तुलन-पत्र सिन्ड्रोम का क्या प्रभाव पड़ता है?
	75	नीतिगत सबक

5. 77 ऋण, संरचना तथा दोहरा वित्तीय नियंत्रण: बैंकिंग सेक्टर का एक निदान

77 परिचय

78 देयता पक्ष पर वित्तीय नियंत्रण

79 आस्ति पक्ष पर वित्तीय नियंत्रण

91 बैंकिंग और ऋण का तुलनात्मक विश्लेषण

85 क्या सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक कार्य निष्पादन में एक समान है?

88 नीतिगत निहितार्थ

6. 89 सार्वजनिक निवेश को दुरूस्त करना: रेल के माध्यम से

89 परिचय

89 बढ़ते सरकारी निवेश का समग्र निष्कर्षों और निजी निवेशों पर प्रभाव

91 रेल में सार्वजनिक निवेश का मामला

101 नीतिगत सिफारिशें–मुख्य पहलू

7. 102 भारत में क्या निर्माण करें? विनिर्मित उत्पाद या सेवाएं?

102 परिचय

103 क्षेत्रगत वांछनीय विशेषताएं जो संरचनागत परिवर्तन के प्रेरक के रूप में काम कर सकती हैं

105 विनिर्माण क्षेत्र का स्कोर कार्ड

111 सेवा क्षेत्र का स्कोर कार्ड

114 स्कोर कार्ड का सारांश और निष्कर्ष

8. 117 कृषि संबंधी वस्तुओं के लिए राष्ट्रीय बाजार–कतिपय मुद्दे व उनका समाधान

117 परिचय

117 एपीएमसी अनेकानेक शुल्क, काफी मात्रा में और अपारदर्शी तरीके से प्रभारित करती है, इस प्रकार वे राजनीतिक शक्ति का एक स्रोत बनी हुई है।

118 आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 बनाम एपीएमसी अधिनियम

119 मॉडल ए.पी.एम.सी. अधिनियम

120 कर्नाटक मॉडल

120 मॉडल ए.पी.एम.सी. अधिनियम की कमियां

120 कृषि उत्पादों के लिए राष्ट्रीय बाजार सृजित करने के वैकल्पिक उपाय

121 साझा बाजार स्थापित करने के लिए संवैधानिक प्रावधानों का उपयोग करना

9. 122 कार्बन सब्सिडी से कार्बन कर की ओर: भारत का पर्यावरण संबंधी कार्य

122 प्रस्तावना

123 अप्रत्यक्ष कार्बन कर के रूप में पेट्रोल और डीजल पर उत्पाद शुल्क

125 अन्य देशों की तुलना में भारत की स्थिति?

125 पेट्रोल और डीजल कारों एवं कोयला उपकर से कार्बनडाइऑक्साइड के उत्सर्जन की कमी

125 कोयला उपकर को कार्बन उपकर में बदलना

128 निष्कर्ष और मुख्य संदेश

10. 129 चौदहवां वित्त आयोग–भारत में राजकोषीय संघवाद के लिए निहितार्थ

129 प्रस्तावना

129 चौदहवें वित्त आयोग की मुख्य सिफारिशें

131 राजकोषीय संघवाद के लिए चौदहवें वित्त आयोग की सिफारिशो के निहितार्थ–आगामी व्यवस्था

134 राजकोषीय स्वायत्तता और राजकोषीय संभावना में संतुलन

137 चेतावनी और निष्कर्ष

टिप्पणियां

आर्थिक समीक्षा में निम्नलिखित सांख्यिकी/इकाइयों का प्रयोग किया गया है:

बी सी एम	बिलियन क्यूबिक मीटर	कि. ग्रा.	किलोग्राम
बी यू	बिलियन यूनिट	हे.	हेक्टेयर
एम टी	मिलियन टन	बी बी एल	बिलियन बैरल प्रति लीटर
लाख	1,00,000	बिलियन	1,000 मिलियन/100 करोड़
मिलियन	10 लाख	ट्रिलियन	1,000 बिलियन/100,000 करोड़
करोड़	10 मिलियन		

आभारोक्ति

आर्थिक समीक्षा का प्रकाशन सामूहिक कार्य और सहयोग का परिणाम है। मुझे इसके प्रकाशन से संबंधित समन्वयन कार्य में आनंदी सुब्रह्मण्यन और एन.के. सिन्हा द्वारा सहायता प्रदान की गई। इस सर्वेक्षण में योगदान करने वाले में आर्थिक प्रभाग से ये शामिल हैं: एच.ए.सी. प्रसाद, डी.एस. कोलमकर, ईला पटनायक, आनंदी सुब्रह्मण्यन, के.एल. प्रसाद, ए.एस. सचदेवा, रजत सच्चर, राजश्री रे, एंटनी सिरियक, आर. सतीश, पी.के. अब्दुल करीम, एन.के. सिन्हा, प्रिया नायर, राजमल, जे.के. राठी. के.एम. मिश्रा, रंगीत घोष, अभिषेक आचार्य, कपिल पाटीदार, सैयद जुबैर हुसैन नकवी, नेहा यादव, आकांक्षा अरोड़ा, रवि रंजन, दीपक कुमार दास, विजय कुमार, एम. राहुल, रोहित लाम्बा, सिद्धार्थ इयपन जॉर्ज, सुतीर्थ रॉय, वी.के. मान, रियाज़ ए. खान, शोबीन्द्र अक्कई, सलाम श्यामसुंदर सिंह, मो. आफताब आलम, संजय कुमार दास, सुभाष चंद, प्रवीण जैन, नरेंद्र जेना, प्रद्युत कुमार पाइने, ज्योत्सना मेहता, कणिका ग्रोवर और राजेश।

इस सर्वेक्षण के प्रकाशन में विभिन्न अधिकारियों और विशेषकर राजीव महर्षि, सौरभ चंद्रा, सुधीर कुमार, अरविंद मोदी, के.पी. कृष्णन, यूकेएस चौहान और अरूणेश चावला; तथा अनेक बाह्य सहयोगकर्ता जिनमें अनंत स्वरूप, अपूर्वा गुप्ता, बिमल जालान, देवेश कपूर, फान झांग, हर्षवर्धन सिंह, जीन ड्रेज, जोश फेल्मेन, कार्तिक मुरलीधरण, कृष्णमूर्ति सुब्रह्मण्यम, मनीष सभरवाल, मोहित देसाई, मुतुकुमार मणि, नमिता महरोत्रा, नंदन निलेकनी, निक स्टर्न, निशा अग्रवाल, पी.एस. श्रीनिवास, पार्थ मुखोपाध्याय, प्रांजुल भंडारी, प्रताप भानुमेहता, रघुराम राजन, राजीव लाल, राकेश मोहन, रीतिका खेड़ा, रिचार्ड बुलॉक, रोहिणी मलकानी, सज्जीद चिनॉय, संदीप सुतानकर, सोनल वर्मा, टी.वी. सोमनाथन, तुषार पोद्दार और विजय केलकर के नाम उल्लेखनीय हैं, से प्राप्त टिप्पणियों और सुझावों से अत्यधिक लाभ प्राप्त हुआ है।

उपर्युक्त के अतिरिक्त, भारत सरकार के विभिन्न मंत्रालयों, विभागों और संगठनों ने अपने संबंधित क्षेत्रों में योगदान किया है। अगम अग्रवाल, साधना शर्मा, सुरेश अरोड़ा, अमित, रजत वर्मा और आर्थिक प्रभाग के कर्मचारियों से सक्षम प्रशासनिक सहायता प्राप्त हुई। अमरनाथ और अनुवादकों की उनकी टीम ने हिंदी अनुवाद किया तथा शालिनी शेखर ने इस प्रपत्र का उपयुक्त रूप में संपादन किया। मिंटो रोड और मायापुरी स्थित भारत सरकार के मुद्रणालयों में सर्वेक्षण के अंग्रेजी और हिंदी पाठों का मुद्रण संपन्न हुआ।

अरविंद सुब्रह्मण्यन
मुख्य आर्थिक सलाहकार
वित्त मंत्रालय, भारत सरकार।

प्राक्कथन

आर्थिक समीक्षा सरकार और सरकार से बाहर के अनेक सहयोगियों के साथ-साथ विदेश स्थित विश्लेषणकर्त्ताओं का सामूहिक प्रयास है। लेकिन, सबसे अधिक यह समीक्षा आर्थिक कार्य विभाग के आर्थिक प्रभाग के समर्पित कर्मचारियों के परिश्रम का परिणाम है। मैं उन सब के प्रति आभार व्यक्त करता हूं और उन्हें धन्यवाद देता हूं कि उन्होंने कड़ी मेहनत, लगन और सभी समय सीमाओं को प्रसन्नतापूर्वक पूरा किया, और विभिन्न नियमों एवं व्यक्तियों से निभाते हुए अपने कार्य को अंजाम दिया।

सभी आर्थिक समीक्षाओं पर तत्कालीन मुख्य आर्थिक सलाहकार की छाप होती है। यही बात इस समीक्षा के साथ भी है। लेकिन परिवर्तन करने की इच्छा का निरंतरता बनाये रखने की जरूरत के साथ संतुलन होना चाहिए ताकि समय, सनक, फैशन और राजनीति की कसौटी पर खरी उतरी परंपराओं का सम्मान किया जा सके और उनसे सीख ली जा सके।

अंतरर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष की वर्ल्ड इकॉनोमिक आउटलुक से प्रेरित हो कर यह समीक्षा अपनी पूर्ववर्ती समीक्षाओं से संरचनागत दृष्टि से भिन्न है और इसे दो खंडों में प्रस्तुत किया गया है। खंड एक में दृष्टिकोण और संभावनाओं पर चर्चा करने के साथ-साथ महत्वपूर्ण नीतिगत सरोकारों की चर्चा करने वाले अनेक विश्लेषणात्मक अध्याय शामिल हैं। खंड दो में अर्थव्यवस्था के सभी प्रमुख क्षेत्रों में हुए हालिया घटनाक्रमों पर चर्चा की गई है और सभी सांख्यिकीय सारणियां एवं आंकड़े दिये गये हैं। एक तरह से, खंड 1 दूरदर्शी है लेकिन हालिया घटनाक्रम से हासिल नज़रिए से जो सीखा गया है, वह खंड 2 का विषय है।

इस समीक्षा के खंड 1 की विषय सामग्री तय करते समय एक चुनौती यह थी कि भावी पीढ़ियों के धुंधले से दावों का, वर्तमान समय की महत्वपूर्ण और स्पष्ट मांगों के साथ कैसे तालमेल बिठाया जाए? दूसरी तो स्थायी चुनौती है: गहराई या विस्तार?

जॉन मेनर्ड कीन्ज़ की एक मशहूर उक्ति है कि ''महत्वपूर्ण'' और ''अत्यावश्यक'' के बीच अन्तर करना जरूरी होता है। ऐसे मौके पर जब एक नई सरकार सत्तासीन है और अपना पहला पूरा बजट प्रस्तुत करने जा रही है, समय एवं संसाधनों से जुड़ी कठिनाइयों को देखते हुए, इस समीक्षा पर कीन्ज़ की सलाह का अच्छा-खासा असर हुआ है। इस समीक्षा में, विस्तृत कार्य क्षेत्र रखने की भूल करते हुए भी वर्तमान का पक्ष लिया गया है, भले ही इसका परिणाम गहन विश्लेषण की तुलना में सरसरी परीक्षण करने की स्वतंत्रता लेना ही क्यों न रहा हो।

इस समीक्षा के मुख्य विषय हैं- ''अवसर पैदा करना और असुरक्षा के हालात कम करना''। विकास अनेक आर्थिक, और सच कहें तो कई अन्य उद्देश्यों को पूरा करने की पूर्वापेक्षा है। सच तो यह है कि विकास के लाभों को बढ़ाने के लिए सरकार की सहायक कार्रवाई की जरूरत होगी, लेकिन, विकास के बिना आमदनी की संभावनाएं कम हो जाती हैं। अब गरीबी और साधनहीनता कम करने पर चलने वाली बहस अधिकाधिक और आम तौर पर ''क्या'' के बारे में कम होती है और इस बारे में ज्यादा होती है कि व्यापक आर्थिक विकास के लिए प्रत्यक्ष सरकारी सहायता ''किस तरह बेहतरीन तरीके'' से काम आ सकती है। विकास और वितरण की तुलना करना एक गलत चयन है और हमेशा से गलत ही होना चाहिए था।

खंड एक की शुरूआत भारतीय अर्थव्यवस्था के वृहद आर्थिक दृष्टिकोण और संभावनाओं पर लिखे गए अध्याय से होती है जो ''अवसर पैदा करने और असुरक्षा के हालात कम करने'' पर केंद्रित नीतिगत मुद्दों पर संक्षिप्त चर्चा का संदर्भ तय करती है। इन मुद्दों पर आगे नौ अध्यायों में विस्तारपूर्वक चर्चा की गई है।

विकास के लिए वृहद आर्थिक स्थिरता और इसके लिए राजकोषीय स्थिरता की जरूरत होती है (अध्याय 2)। राजकोषीय रूपरेखा पर भी पुन:विचार किए जाने की जरूरत है क्योंकि यह सरकार का पहला पूरा बजट है और क्योंकि चौदहवें वित्त आयोग की सूचित सिफारिशें भी हैं जो केन्द्र-राज्य के राजकोषीय संबंधों पर निर्णायक प्रभाव डाल सकती हैं। इसके बाद ''हर आंख से आंसू पोंछने'' पर भी एक अध्याय है जहां इस बात पर ध्यान केंद्रित किया गया है कि सहायता प्रदान करने का बेहतरीन तरीका क्या है और इस संबंध में प्रौद्योगिकी क्या भूमिका निभा सकती है।

इन अध्यायों में इन विषयों पर बात की गई है: रुकी हुई परियोजनाओं की स्थिति और भविष्य में निजी और सरकारी निवेश पर उनके प्रभाव (अध्याय-4); बैंकिंग व्यवस्था की संक्षिप्त स्थिति और इसके सुधार के निहितार्थ (अध्याय-5); और भारत के भावी विकास को प्रेरित करने में रेलवे की भूमिका (अध्याय-6)। ''मेक इन इंडिया'' के नारे को लेकर बड़ी अकादमिक परिचर्चा हो रही है जिसमें विनिर्माण और सेवा क्षेत्र के बीच चल रही बहस पर प्रकाश डाला जा रहा है और परिवर्तनकारी क्षेत्रों के बारे में नई सोच सामने आ रही है (अध्याय-7)। इन क्षेत्रों पर चर्चा को पूरा करने वाला एक ऐसा अध्याय भी है जो कृषि क्षेत्र में मौजूद हजारों बाजारों से हटकर एक साझा बाजार निर्मित करने के बारे में है (अध्याय-8)।

जलवायु परिवर्तन आर्थिक विकास के लिए बहुत महत्वपूर्ण होता जा रहा है और यह चुनौतियां खड़ी करता है। इन पर अध्याय-9 में चर्चा की गई है। अध्याय 10 में केन्द्र-राज्य के राजकोषीय संबंधों में हो रहे जबर्दस्त परिवर्तन पर चर्चा की गई है। इसमें चौदहवें वित्त आयोग की सिफारिशों के निहितार्थों का आरंभिक विश्लेषण दिया गया है।

संक्षिप्त जानकारी चाहने वाले पाठकों के लिए दृष्टिकोण सम्बन्धी अध्याय उपयोगी होगा जबकि कई लोगों के लिए विस्तृत अध्याय काफी रुचिकर होंगे। खंड-1 में कुछ पुनरावृत्ति हुई है, लेकिन जब हम अनेकानेक पाठकों के लिए लिखते हैं तो ऐसा होना अपरिहार्य है।

इस समीक्षा में अकादमिक और नीतिगत दोनों ही स्वरूप के नए विचारों और नए नज़रिए पर बल दिया गया है। समय और संसाधनों की कमी का अर्थ है कि नए विचार संभवत: कठोर शैक्षिणक मानकों पर खरे न उतर पायें। लेकिन नीति पर नई रोशनी डालने के उद्देश्य से हमारा रवैया यही रहा है कि नए आंकड़े प्राप्त किए जाएं अथवा पुराने आंकड़ों को नए रूप में पेश किया जाए ताकि उन में संबंध तय किया जा सके और जहां भी संभव हो, नई अंतर्दृष्टि प्राप्त की जा सके। हमारा उद्देश्य है कि नई बहस और परिचर्चा शुरू की जाए जिससे नीति निर्माण की प्रक्रिया समृद्ध हो और उम्मीद है कि इसके परिणामों में सुधार होगा।

इस समीक्षा में, इसकी गंभीरता बनाए रखते हुए, शुष्क अर्थशास्त्र को अखबारी लेखों (या कहें तो, ब्लॉग) जैसा ही दिलचस्प बनाने का प्रयास करते हुए, इसे पठनीय बनाने की कोशिश की गई है। प्रिय पाठक, यह विषय शुष्क हो सकता है, लेकिन नीरस नहीं होना चाहिए।

अरविन्द सुब्रह्मण्यन
मुख्य आर्थिक सलाहकार,
वित्त मंत्रालय, भारत सरकार।

संकेताक्षर

जीडीपी	सकल घरेलू उत्पाद
जीएसटी	वस्तु और सेवा कर
सीपीआई	उपभोक्ता मूल्य सूचकांक
जीटीआर	सकल कर राजस्व
आरबीआई	भारतीय रिजर्व बैंक
सीएसओ	केन्द्रीय सांख्यिकी कार्यालय
एमओएसपीआई	सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय
मनरेगा	महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम
एफआरबीएम	राजवित्तीय उत्तरदायित्व एवं बजट प्रबंधन अधिनियम
सीएसटी	केन्द्रीय ब्रिकी कर
जेएएम	जन धन योजना–आधार–मोबाइल
एएसईआर	शिक्षा रिपोर्ट की वार्षिक समीक्षा
एलपीजी	लिक्विफाइड पेट्रोलियम गैस
बीपीएल	गरीबी रेखा से नीचे
एवाईटी	अंत्योदय अन्न योजना
एपीएल	गरीबी रेखा से ऊपर
पीडीएस	सार्वजनिक वितरण प्रणाली
डीबीटी	प्रत्यक्ष लाभ अंतरण
एमएसपी	न्यूनतम समर्थन मूल्य
एनएसएसओ	राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण कार्यालय
आईएफएससी	भारतीय वित्तीय प्रणाली संहिता
यूएनडीपी	संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम
यूएनआईडीओ	संयुक्त राष्ट्र औद्योगिक विकास संगठन
डब्ल्यूडीआई	विश्व विकास संकेतक
जीजीडीसी	ग्रोनिनगन ग्रोथ एंड डव्ल्पमेन्ट सेन्टर
जीएमसी	कृषि उत्पाद बाजार समिति
वैट	मूल्य वर्द्धन कर
एफडीआई	विदेशी प्रत्यक्ष निवेश
एमओपी एंड एनजी	पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस मंत्रालय
जीएचजी	ग्रीन हाउस गैस
गिज	अन्तरराष्ट्रीय जर्मन सहयोग अभिकरण
पीएमजीएसवाई	प्रधान मंत्री ग्राम सड़क योजना
एनटीकेएम	निवल टन प्रति किलोमीटर
पीकेएम	यात्री किलोमीटर
आरआईआरआई	तार्किक निवेशक रेटिंग इंडेक्स
ब्रिक्स	ब्राजील, रूस, भारत, चीन
सीपीआईडब्ल्यू	उपभोक्ता मूल्य सूचकांक (औद्योगिक श्रमिक)
एमएमडीआर	खदान एवं खनिज पदार्थ (विकास तथा विनियमन)
एमबी	श्रम कार्यालय
डीसी	आर्थिक गणना
एएसआई	उद्योगों का वार्षिक सर्वेक्षण
आईएमएफ	अंतरर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष
यूएसईआईए	अमेरिकी ऊर्जा सूचना प्रशासन
ओपेक	पेट्रोलियम निर्यातक देशों का संगठन
टीओटी	व्यापार की शर्तें
डब्ल्यूपीआई	थोक बिक्री
सीएमआईई	भारतीय अर्थव्यवस्था मॉनीटरिंग केंद्र
आईसीआर	ब्याज कवरेज अनुपात
पीपीपी	सार्वजनिक निजी भागीदारी
एनडीए	राष्ट्रीय लोकतांत्रिक गठबंधन
एसएलआर	सांवधिक नकदी अनुपात
पीएसएल	प्राथमिकता उधार क्षेत्र
आरओए	परिसंपत्तियों पर प्रतिलाभ
एसएआरएफईएसआई	वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्निर्माण तथा प्रतिभूति ब्याज का प्रर्वतन
एसएमई	लघु और मध्यम उद्यम
एसईजेड	विशेष आर्थिक क्षेत्र
सीबीडी	प्रतिकारी शुल्क
एसएडी	विशेष अतिरिक्त शुल्क
आईसीएआर	भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
डब्ल्यूटीओ	विश्व व्यापार संगठन
एफटीए	मुक्त व्यापार करार
टीपीपी	ट्रांस प्रशांत भागीदारी
टीटीआईपी	ट्रांस अटलांटिक व्यापार और निवेश भागीदारी
आरसीईपी	क्षेत्रीय व्यापक आर्थिक भागीदारी
आसियान	दक्षिण–पूर्व एशियाई राष्ट्र संघ
यूएनएफसीसीसी	जलवायु परिवर्तन संबंधी संयुक्त राष्ट्र संघ फ्रेम वर्क अभिसमय
आईपीसीसी	जलवायु परिवर्तन संबंधी अंतर सरकारी पैनल
एचडीआई	मानव विकास सूचकांक
जीआईआई	लैंगिक असमानता सूचकांक
एनएफएचएस	राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण
ईएलए	उपलब्धि का प्रत्याशित स्तर
वीईसीएम	वेक्टर एरर करेक्शन माडल
वीएआर	वाहक स्वत: पश्चगमन
पीपीपी	क्रय शक्ति क्षमता
डीएफसी	समर्पित माल ढुलाई कोरीडोर
कैपेक्स	पूंजीगत व्यय
वीएसई	बोम्बे स्टॉक एक्सचेंज
ईबीआईटी	ब्याज और कर से पहले आय
एनएचएआई	भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण
यूएमपीपी	अल्ट्रा मेगा विद्युत परियोजनाएं
एलपीवीआर	राजस्व न्यूनतम वर्तमान मूल्य
आईएसवी	भारतीय व्यवसाय स्कूल
एएनबीसी	समायोजित निवल बैंक ऋण
एनपीए	अनर्जक आस्तियां
सीआरएआर	पूंजी तथा जोखिम भारित आस्ति अनुपात
पीएसबी	सरकारी क्षेत्र के बैंक

आर्थिक समीक्षा 2014-15

खण्ड I

भारत सरकार
वित्त मंत्रालय
आर्थिक कार्य विभाग
आर्थिक प्रभाग
फरवरी, 2015

आर्थिक दृष्टिकोण, संभावनाएं और नीतिगत चुनौतियां

01
अध्याय

1.1 प्रस्तावना

सुधार और अनुकूल वैदेशिक माहौल के लिए राजनीतिक जनादेश ने अवसर का एक ऐसा ऐतिहासिक क्षण सृजित किया है जो भारत को द्विअंकीय विकास की राह पर ले जाएगा केंद्र द्वारा नियंत्रित नीतियों में निर्णायक परिवर्तनों के साथ-साथ अन्य क्षेत्रों में सतत्, व्यापक और सृजनात्मक विकास से युगांतरकारी सुधारों की शुरूआत हो सकती है।

अब जब नई सरकार अपना पहला पूर्ण वर्षीय बजट पेश कर रही है, एक असाधारण अवसर हमारे सामने खड़ा है। भारत एक ऐसे बिंदु पर आ पहुंचा है जहां से यह द्विअंकीय मध्यावधिक विकास पथ पर अग्रसर हो सकता है। कई राष्ट्रों के इतिहास में ऐसा बहुत कम हुआ है। इसी विकास पथ के चलते आज भी गरीब और कमजोर वर्ग के ''हर आंख से आंसू पोंछने'' के बुनियादी उद्देश्यों को पूरा करने के साथ-साथ अधिकाधिक युवा, मध्यवर्गीय और महत्वाकांक्षी भारत के लिए अवसर पैदा होंगे जिससे वे अपनी असीमित क्षमता को साकार कर सकें।

यह रास्ता इसीलिए खुला है क्योंकि तथ्य और भाग्य भारत के पक्ष में है। वृहद् अर्थव्यवस्था अधिक स्थिर हो गई है, सुधारों की शुरूआत हो गई है, विकास में गिरावट खत्म हो गई है और अर्थव्यवस्था अब पुनरुद्धार के पथ पर है, वैदेशिक माहौल अनुकूल है और अन्य प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं के सामने खड़ी चुनौतियों ने भारत को उत्सुक निवेशकों की आंख का तारा बना दिया है। भारी चुनौतियां अभी भी बरकरार है, जिन्हें इस सर्वेक्षण में नज़रअंदाज नहीं किया गया है, लेकिन आर्थिक परिवर्तन के लिए मिले भारी जनादेश के कारण आशा जागी है कि इन चुनौतियों का मुकाबला किया जा सकता है। संक्षेप में, भारत आगे बढ़ने के लिए तैयार है।

किसी भी आर्थिक सर्वेक्षण को प्राथमिकताएं तय करने, समान रूप से समावेशी होने और विवादित रूप में चयनात्मक होने के दोषों से बचने की समस्या से जूझना पड़ता है। तद्नुसार इस सर्वेक्षण में दो प्रमुख विषयों पर ध्यान दिया गया है-अवसरों का सृजन और असुरक्षा को कम करना-क्योंकि ये दो मुद्दे आज में बहुत महत्व रखते हैं और इनके संबंध में ही कई प्रमुख नीतिगत चुनौतियां हैं जिनका समाधान नई सरकार को करना है।

आर्थिक सर्वेक्षण के इस खंड की रूपरेखा इस प्रकार है। एक संक्षिप्त वृहद् आर्थिक समीक्षा और दृष्टिकोण अगले व्यापक विषयों और नीतिगत चर्चाओं के लिए संदर्भ का कार्य करेगी। कहना न होगा कि आय और संपदा के वितरण में सबसे निचले स्तर पर जीवन यापन कर रहे लोगों के उत्थान के लिए और उस वितरण में प्रत्येक व्यक्ति के लिए अवसर मुहैया कराने के लिए आर्थिक विकास का बहुत महत्व है।[1] तीव्र, सतत् और व्यापक विकास के लिए मजबूत बृहद आर्थिक बुनियाद जरूरी है, जिसका आधार राजकोषीय अनुशासन और विश्वसनीय मध्यावधिक राजकोषीय संरचना है। इन पूर्वापेक्षाओं को भाग 1.2 और 1.6 में वर्णित किया गया है।

लेकिन ''हर आंख से आंसू पोंछने'' के लिए सुचारू रूप से कार्य करने वाले, सुलक्षित, लीकेज प्रूफ ऐसे सुरक्षा जाल के रूप में सरकार से सकारात्मक सहायता की जरूरत होती है जो न्यूनतम आय मुहैया कराये और प्रतिकूल झटकों से संरक्षण दे। यह बात ग्रामीण भारत के बारे में भी सच है जहां किसानों और मजदूरों की आर्थिक स्थितियां खराब हैं। नीतिगत मुद्दा अब ''क्या'' नहीं है बल्कि यह है कि कैसे बेहतरीन ''प्रावधान और संरक्षण'' किया जाए और इस संबध में प्रौद्योगिकी आधारित प्रत्यक्ष लाभ अंतरण महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगे (भाग 1.7 में वर्णित)।

---

[1] Bhagwati, J. and Arvind Panagariya, "*Why Growth Matters: How Economic Growth in India Reduced Poverty and the Lessons for Other Developing Countries*", 2013, A Council on Foreign Relations Book, Public Affairs Books.

पसीना और प्रेरणा, निवेश और कार्यदक्षता, दीर्घावधिक विकास को निर्धारित करते हैं। लेकिन भारत में निजी क्षेत्र के निवेश के माहौल पर पिछले दशक के अनुभव के बादल मंडरा रहे हैं। अनेक कारक-त्रुटिपूर्ण कारपोरेट तुलनपत्र, कमजोर बैंकिंग व्यवस्था, अर्थतंत्र से निकलने में कठिनाई और अवसंरचना में सरकारी निजी भागीदारी (पीपीपी) मॉडल के दोष-निजी क्षेत्र के निवेश को आगे बढ़ने से रोक सकते हैं। निजी निवेश दीर्घावधिक विकास का मुख्य प्रेरक होना चाहिए। लेकिन अल्प से मध्यावधिक संदर्भ में जैसे-जैसे लगभग प्रचण्ड समस्याओं का समाधान होगा, सरकारी निवेश विशेषकर रेलवे द्वारा किए गए निवेश को उत्प्रेरक की भूमिका निभानी होगी। ये मुद्दे और बैंकिंग व्यवस्था किस प्रकार एक सहायक भूमिका निभाए, भाग 1.8 और 1.9 में चर्चा का केंद्र है।[2]

अधिकतर अर्थव्यवस्थाओं में, विशेषकर एशिया में युद्धोत्तर काल में विनिर्माण और व्यापार विकास के प्रेरक रहे हैं। भारत के संदर्भ में उस अनुभव की मान्यता भाग 1.10 का केंद्र है जो मेक इन इंडिया के संदर्भ में महत्व प्राप्त कर चुका है। इसलिए अगले भाग में व्यापार से संबंधित चुनौतियों की बात की गई है।

भाग 1.12 तथा 1.13 जो जलवायु परिवर्तन और लिंग समानता के बारे में हैं, ऐसे मुद्दे हैं जिन्हें भारत नजरअंदाज नहीं कर सकता और करना भी नहीं चाहिए। ये मुद्दे विकास और अवसरों की समानता से जुड़ी चुनौतियों का केंद्र बिंदु हैं। कमजोर वर्गों के संरक्षण के उद्देश्य में इस तथ्य का ध्यान रखा जाना चाहिए कि जहां भारत अधिकाधिक युवा, मध्यवर्गीय और महत्वाकांक्षी है, वहीं ये अभी भी हठधर्मी पुरूष हैं।

ये सभी नीतिगत मुद्दे और चुनौतियां इस खंड के अध्याय 2-10 में वर्णित हैं। अंतिम खंड केंद्र-राज्यकोषीय संबंधों को विशिष्ट स्वरूप प्रदान करने के संबंध में है। इसमें चौदहवें वित्त आयोग की सिफारिशों की जटिलताओं के प्रारंभिक विश्लेषण की व्यवस्था की गई।

आगामी बजट को लेकर बड़ी-बड़ी उम्मीदों के चलते, एक सवाल का सीधा-सीधा जवाब दिये जाने की जरूरत है: क्या भारत को भारी भरकम सुधारों की जरूरत है? युद्धोत्तर काल के वर्षों के संबंध में विभिन्न देशों के प्रमाण यह बताते हैं कि भारी भरकम सुधार किसी भी बड़े संकट के दौरान अथवा उसके बाद हुए। इसके अलावा, मजबूत लोकतंत्र में जहां कुछ करने, किये हुए को खत्म करने और काम को रोकने वाली संस्थाएं अनेकानेक भागीदार हों, वहां भारी भरकम सुधार केवल अपवादस्वरूप ही होते हैं, नियमानुसार नहीं। आज का भारत संकटग्रस्त नहीं है और निर्णय लेने वाली सत्ता अत्यधिक से और निराशाजनक रूप से बिखरी हुई है।

शक्ति के अनेक संचालक न सिर्फ ऊर्ध्व रूप से बिखरे हुए हैं जो राज्यों की शक्ति में प्रतिबिम्बित होता है बल्कि नीति बनाने का कार्य भी अनुप्रस्थ रूप से बिखरा हुआ है। उच्चतम न्यायालय और नियंत्रक एवं महालेखापरीक्षक ने नीतिगत कार्रवाई करने और कार्रवाई न करने के बारे में निर्णायक प्रभाव छोड़ा है।

इसके अलावा कुछ महत्वपूर्ण सुधार जैसे कि कर प्रशासन में सुधार अथवा कारोबार करने में आसानी संबंधी सुधार धीमे और कठिन हैं जिनके लिए उनके कार्यान्वयन में दृढ़ता और सहनशक्ति की जरूरत होती है। ये बात मैक्स वैबर के मशहूर कथन ''सख्य सतह में धीरे-धीरे छिद्रण'' की याद दिलाती है।

इसलिए भारी भरकम सुधार, जैसा भी परंपरागत तौर पर इन्हें समझा जाता है, सरकार की सुधारात्मक कार्रवाइयों का मूल्यांकन करने के लिए अनुचित और अव्यवहार्य मानक हैं।

इतना ही जरूरी यह भी है कि सरकार द्वारा प्राप्त जनादेश राजनीतिक अवसर के लिए एक विशेष रास्ता बना दे जिसे त्यागा न जाए। भारत को ''दृढ़, व्यापक और सृजनात्मक विकास'' के रास्ते पर चलना होगा लेकिन कुछ क्षेत्रों में ठोस कदम उठाने होंगे जो निर्णायक तौर पर विगत से भिन्न होने का संकेत दें और जिनका उद्देश्य मुख्य समस्याओं का समाधान करना जैसे कि निवेश जुटाना, प्रतिस्पर्धी, निश्चित और स्वच्छ कर नीति माहौल तैयार करना, सब्सिडियों को युक्तिसंगत बनाना और विनिवेश में तेजी लाना।

इस प्रकार वैबर का ज्ञान कार्रवाई न करने या कार्रवाई को टालते रहने का लाइसेंस नहीं हो सकता। ऐसे क्षेत्रों में निर्भीक उपाय करना जहां केंद्र द्वारा नीतिगत रस्सी आसानी से खींची जा सकती है, उसके साथ-साथ अन्य क्षेत्रों में विकास करने से ऐसी स्थिति पैदा हो जाएगी जो समय बीतने पर भारी भरकम सुधारों की ओर ले जाएगी। यही एक उपयुक्त मानक है जिसके संदर्भ में भावी सुधारों का मूल्यांकन किया जाना चाहिए।

[2] वित्तीय क्षेत्र के मुद्दों पर पिछले वर्ष की समीक्षा में विस्तारपूर्वक चर्चा की गई थी।

1.2 वृहत् आर्थिक समीक्षा और संभावनाएं

वृहत् आर्थिक मूलभत सिद्धांतों में नाटकीय सुधार हुआ है जो ज़मीनी आधार पर और विभिन्न देशों की तुलना में दिखाई देता है।

हम बदलती वृहत् आर्थिक परिस्थितियों से शुरूआत करते हैं। भारत का बदलता परिस्थितियां नाटकीय रूप से सकारात्मक है (चित्र 1.1)। वर्ष 2013 के उत्तरार्द्ध से मुद्रास्फीति में 6 प्रतिशतांक से अधिक की गिरावट हुई है और चालू लेखा घाटा 2012-13 की तीसरी तिमाही के स.घ.उ. के 6.7 प्रतिशत की चरम सीमा से घटकर आगामी वित्त वर्ष में अनुमानित 1.0 प्रतिशत पर आ गया है। विदेशी पोर्टफोलियो प्रवाहों (अप्रैल 2014 से 38.4 बिलियन अमरीकी डॉलर) ने रुपए को स्थिर किया है, दीर्घावधिक ब्याज दरों पर अधोगामी दबाव बना रखा है जो 10 वर्षीय सरकारी प्रतिभूतियों पर प्राप्त आय में भी दिखाई दिया है और इसने इक्विटी मूल्यों में उछाल को बढ़ावा दिया है (रुपए मूल्य में अप्रैल से 31 प्रतिशत और अमरीकी डॉलर मूल्य में और भी अधिक उछाल जिसकी वजह से यह उभरते बाजारों में शीर्षतम स्तर पर पहुंच गया है। लगभग 12 तिमाहियों के गिरावट के दौर में आर्थिक विकास दर औसतन 6.7 प्रतिशत रही लेकिन 2013-14 से यह औसतन 7.2 प्रतिशत पर बढ़ रही है और यह विकास के नए अनुमानों पर आधारित है (इनकी व्याख्या कैसे करें इसके लिए बॉक्स 1.1 देखें)।

इन सुधारों के परिणामस्वरूप भारत की वृहत आर्थिक स्थिति अब अन्य देशों की तुलना में बेहतर है। चित्र 1.2 में समग्र वृहद साधनहीनता सूचकांक (एमवीआई) दिखाया गया है जिसमें देश का राजकोषीय घाटा, चालू लेखा घाटा और मुद्रास्फीति का संयुक्त रूप है। इस तरह यह सूचकांक विभिन्न देशों और विभिन्न समयावधियों में तुलना दिखाता है। वर्ष 2012 में भारत 22.4 के सूचकांक मूल्य द्वारा यथामापित सबसे कमजोर देश था, जिसकी मुद्रास्फीति दर 10.2 प्रतिशत, बजट घाटा 7.5 प्रतिशत और चालू लेखा घाटा स. घ.उ. का 4.7 प्रतिशत था जो अन्य देशों के मुकाबले बहुत अधिक था। वर्ष 2014 में तुर्की ने उच्च चालू लेखा घाटे (लगभग 8 प्रतिशत) के चलते भारत को पछाड़ दिया। आज भारत की स्थिति में बहुत सुधार हो गया है और भारत ने एमवीआई में काफी सुधार दिखाया है जबकि कई अन्य देश यथास्थिति बनाए हुए हैं अथवा कई की स्थिति में मामूली सुधार हुआ है या बहुत गिरावट हो गई है (रूस)। भारत अभी भी निवेशक रेटिंग श्रेणी (बीबीबी) के संदर्भ में देशों की औसत से बदतर स्थिति में है लेकिन अभी भी बहुत से उभरते बड़े बाजारों वाले देशों की तुलना में बेहतर स्थिति में है।

यदि किसी देश की स्थिति/क्षमता का मूल्यांकन करने में वृहद् आर्थिक स्थिति एक महत्वपूर्ण कारक है, वहीं इसका वास्तविक और भावी विकास दूसरा कारक है। इसलिए सापेक्ष आर्थिक स्थिति की तुलना करने का एक आसान तरीका है कि वृहद् आर्थिक साधनहीनता सूचकांक के साथ ''रैशनल इनवेस्टर रेटिंग्स इंडेक्स (आरआईआरआई)'' को भी इस्तेमाल किया जाए।[3] प्रतिस्पर्धी गंतव्यों से जुड़े जोखिमों और लाभ का मूल्यांकन करते समय, सुविज्ञ निवेशक न सिर्फ वृहद् आर्थिक स्थिरता (जो जोखिमों के बराबर ही है) पर, बल्कि विकास पर भी ध्यान देता है जो निश्चित रूप से प्रतिलाभ और प्रतिफल को निर्धारित करते हैं।

ऊपर चित्र 1.3 में यह सूंचकंक भारत और विकास सहित अनेक अतुलनीय देशों जिसमें बीआरआईसीएस, अन्य उभरते प्रमुख बाजारों (तुर्की) तथा भारत की निवेशक रेटिंग (बीबीबी) और श्रेणी (ए) में शामिल देशों के बारे में है। भले ही भारत का विकास पुरानी विधि से मापा जाए या नई विधि से मापा जाए (देखें बोक्स 1.1), भारत इस सूचकांक में भारी सुधार दर्शाता है।

भारत अन्य देशों के मुकाबले सर्वाधिक आकर्षक अन्य देशो में से एक है। भारत अपनी निवेश ग्रेड श्रेणी के लिए भी औसत से ऊपर दर्जे पर है, और साथ ही, इसके ऊपर की निवेश श्रेणी के औसत से भी ऊपर हैं (नए विकास अनुमानों के आधार पर) बीआरआईसीएस में केवल चीन ही भारत से ऊपर है।

बृहत आर्थिक स्थिरता के साथ-साथ उच्च बढ़ते विकास की संभावना और सच्चाई भारत को आगे ले जाने का आश्वासन है।

---

[3]आरआईआरआई का आकलन देश के स.घ.उ. की वृद्धि दर और इसके वृहद् आर्थिक संकेतकों का औसत निकाल कर किया जाता है; उत्तरोक्त के राजकोषीय घाटे, चालू लेखा घाटे और मुद्रास्फीति (सभी नकारात्मक संकेतों सहित) की औसत के रूप में मापा जाता है। इस तरह विकास और वृहद् आर्थिक स्थिरता को समान भारांश दिया जाता है। यह आंकड़ा जितना अधिक होगा, निवेशक रेटिंग उतनी ही बेहतर होगी। चूंकि डब्ल्यूईओ के अद्यतन अनुमान सभी देशों के लिए सार्वजनिक रूप से उपलब्ध नहीं होते, यह आंकड़े सिटी ग्रुप से प्राप्त किये गये हैं और 2015 के संबंध में 58-60 अमरीकी डालर प्रति बैरल तेल की कीमत का अनुमान लगाते हुए जनवरी में अद्यतन किए गए हैं। अन्य स्रोतों से प्राप्त आंकड़े आरआईआरआई के लिए ऐसे ही अनुमान देते हैं।

चित्र 1.1क: डब्ल्यूपीआई तथा सीपीआई मुद्रास्फीति, अप्रैल 2013 से जनवरी 2015 (प्रतिशत)

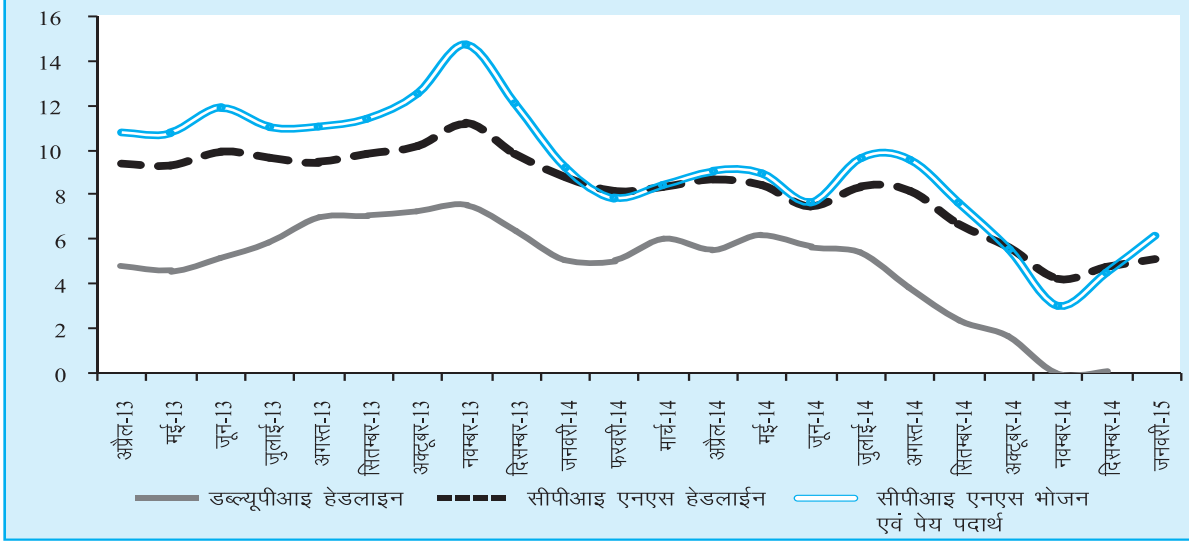

चित्र 1.1ख: चालू खाता शेष तथा निवल विदेशी निवेश, 2004-05 पहली तिमाही से 2014-15 दूसरी तिमाही (स.घ.उ. का प्रतिशत)

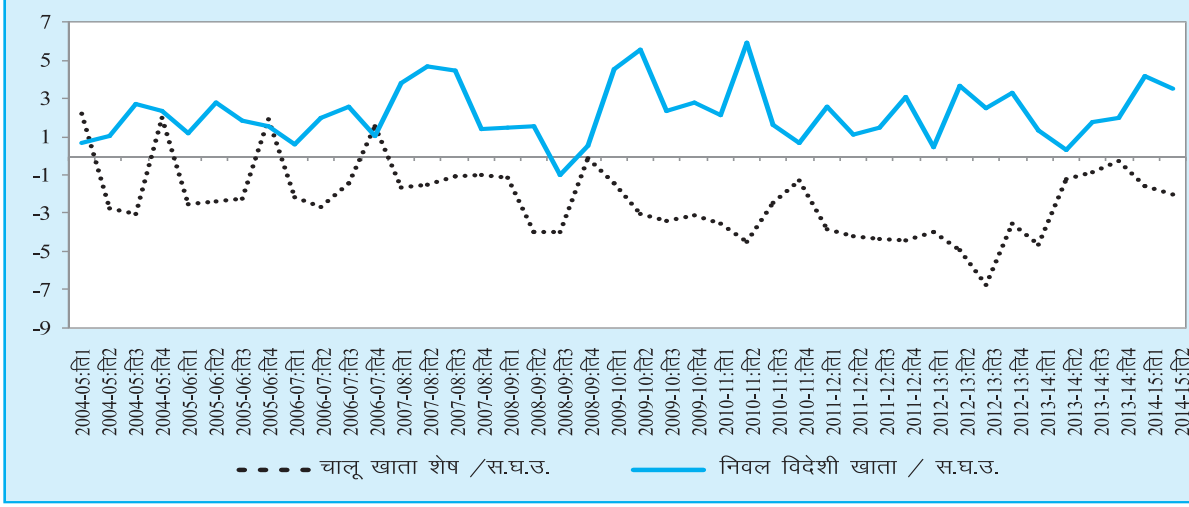

चित्र 1.1ग: दैनिक स्टॉक मूल्य (निफ्टी), जनवरी 2013 से फरवरी 2015

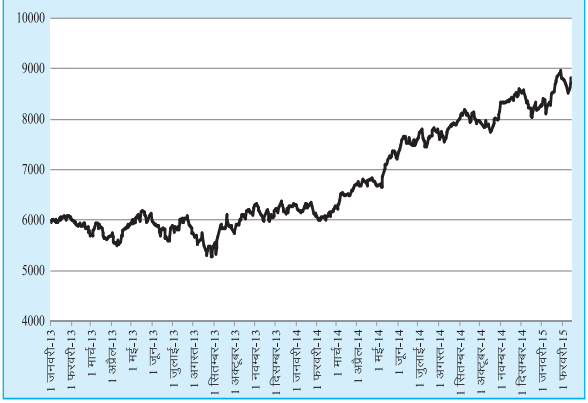

चित्र 1.1घ: त्रैमासिक स.घ.उ. वृद्धि 2005-06 ति.1 से 2014-15 ति.4 (प्रतिशत)

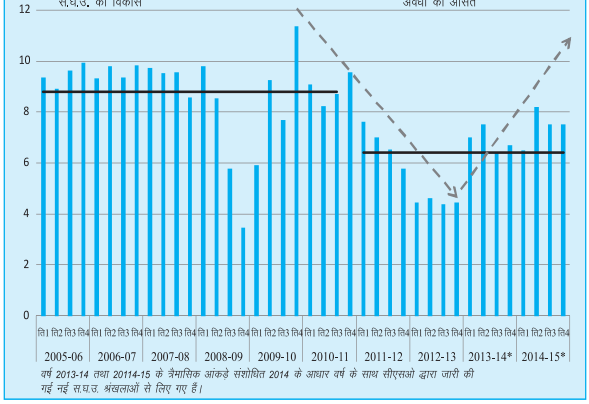

वर्ष 2013-14 तथा 20114-15 के त्रैमासिक आंकड़े संशोधित 2014 के आधार वर्ष के साथ सीएसओ द्वारा जारी की गई नई स.घ.उ. श्रंखलाओं से लिए गए हैं।

***स्रोत* : आर्थिक सलाहकार कार्यालय, औद्योगिकी पॉलिसी और संवर्धन विभाग, केन्द्रीय सांख्यिकी कार्यालय, भारतीय रिजर्व बैंक और केन्द्रीय स्टॉक एक्सचेंज।**

चित्र 1.2: वर्ष 2010-15, चुनिन्दा उभरते बाजार देशों के बृहद संवेदनशील सूचकांक

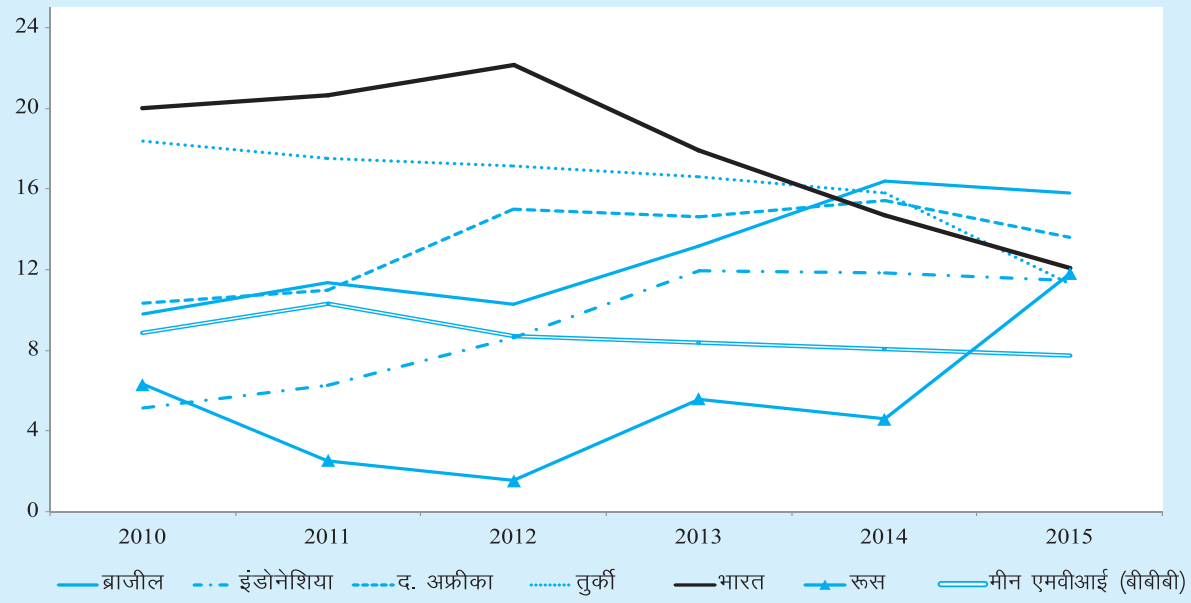

चित्र 1.3: 2010-2015 तक चुनिन्दा उभरते बाजार देशों के युक्ति मूलक निवेशक निर्धारण सूचकांक, 2010-2015

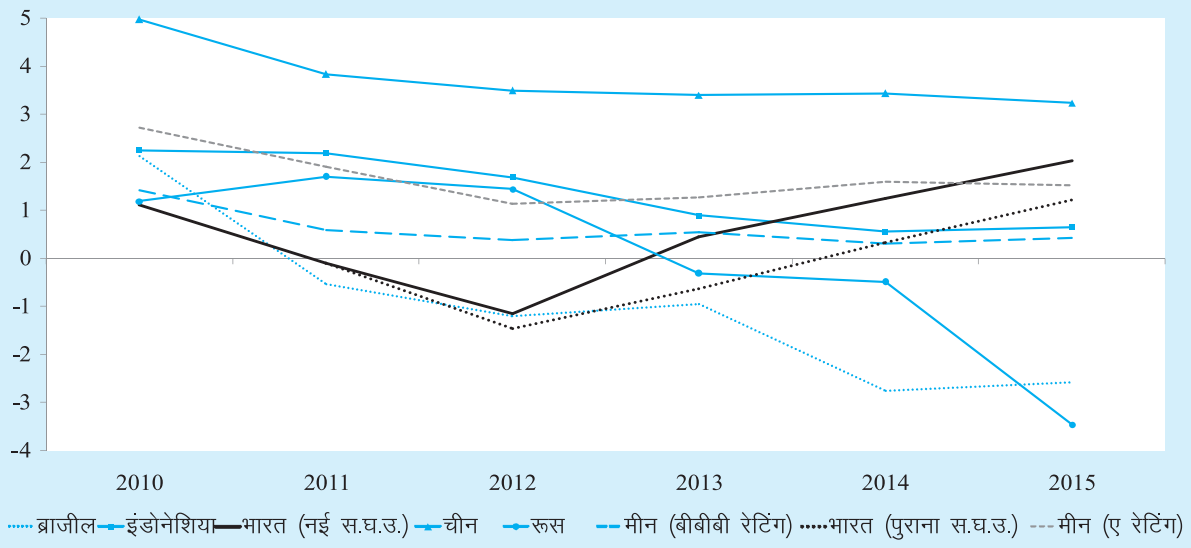

1.2क. वृहत आर्थिक प्रबंधन और नीतिगत सुधार

अनेक क्षेत्रें में सुधारों की शुरूआत की गई है, जिनमें से मुख्य क्षितिज पर हैं ट्रेड शॉक के समर्थन योग्य वृहत आर्थिक प्रत्युत्तर समुचित रूप से वृद्धित सरकारी बचतों और निजी खपत के दूरदर्शी मिश्रण की ओर इशारा करता हैं

नई सकार के नीतिगत सुधारों-वास्तविक और संभावित-ने पूरे विश्व का ध्यान अपनी और आकर्षित है ये सुधार, जिनका संचित प्रभाव, निवेश और विकास के पुनर्जीवन पर विशेष रूप से हो सकता है, को बाक्स 1.2 में दर्शाया गया है। हांलॉकि वृहत आर्थिक प्रबंधन भी उतना ही महत्वपूर्ण है जिसका आकलन सरल विश्लेषण परक अर्थों में किया जाना चाहिए।

जून 2014 से कच्चे तेल की कीमतों और अन्य जिन्सों में आई सूची 50-55 प्रतिशत की गिरावट के परिणाम स्वरूप ट्रेड शॉक स्थिति का अत्यधिक अनुकूल वातावरण भारत के पक्ष में आया है। मानक वृहत आर्थिक मैनुअल से जो आदेश

बॉक्स : 1.1 : स॰घ॰उ॰ और स॰घ॰उ॰ वृद्धि के संशोधित अनुमान

नए अनुमानों के बावजूद साक्ष्यों में ताल मेल और इस बात की साबधानी बरतनी चाहिए कि भारत को विकसित होती अर्थव्यवस्था की बजाए पुनरूद्धार करते रही अर्थव्यवस्था के रूप से देखा जाए।

30 जनवरी को, केन्द्रीय सांख्यिकी कार्यालय ने स॰घ॰उ॰ की नई श्रृंखला जारी की जिसमें आधार वर्ष के 2004-05 से बदल कर 2011-12 किए जाने के साथ-साथ अधिक आंकड़ों का इस्तेमाल किया जाना और बेहतर विधि का प्रयोग शामिल था (समीक्षा के खण्ड 2 के अध्याय-1 विस्तार से बताया गया है)। स॰घ॰उ॰ के नए अनुमान वर्ष 2011-12 स 2014-15 तक के लिए दिए गए हैं।

इन अनुमानों को किस नज़रिए से देखा जाए? पहले, आंकड़ों और विधियों में सुधार होने से भारत स॰घ॰उ॰ के अनुमान लगाने में अंतरराष्ट्रीय मानकों के समान स्तर पर आ गया। भारत इस बात में अनोखा है कि स॰घ॰उ॰ के संशोधनो के कारण आंकड़े कम हो जाने हैं न कि अधिक होते है जैसाकि कई देशों में दिखा जाता है। 2011-12 जो नया आधार वर्ष है, के स॰घ॰उ॰ स्तर के मुख्य अनुमान वस्तुतः पहले अनुमानिक आंकड़ो से 2 प्रतिशत कम है।

तथापि, विकास के अनुमान और अधिक विचार किया जाना जरूरी बना रहे हैं। दूसरी ओर, 2013-14 के मुबाबले 2014-15 के विकास अनुमान, बेहतर होते निवेशक माहौल और सुधार कार्रवाइयों के अनुरूप और संभव भी दिखाई दे रहे हैं।

दूसरी ओर, सही दिशा और स्तर के संदर्भ में 2013-14 के विकास अनुमान पेचीदा दिखाई दे रहे है। नए अनुमानों के अनुसार वर्ष 2013-14 के दौरान बाजार मूल्यों में वृद्धि 1.9 प्रतिशत से बढ़कर 6.9 प्रतिशत हो गई (आधार मूल्यों पर विकास के लिए 1.5 प्रतिशतता बिन्दु)।

अर्थव्यवस्था के अन्य विकासों के साथ इन आंकड़ों का समायोजन करना कठिन प्रतीत होता है। वर्ष 2013-14 एक कठिन वर्ष था। निवेश प्रवाह अत्यधिक था, ब्याज दरें कठोर थी, समय कम था- और यह देखना कठिन है कि किसी अर्थव्यवस्था की विकास दर को ऐसी परिस्थितियों में कैसे गति प्रदान की जाए। वर्ष 2013-14 के दौरान वस्तुओं के आयात में भी 10 प्रतिशत की स्पष्ट गिरावट आयी जिसमें सोने के आयात में भी भारी गिरावट दर्ज की गई। विकास में जो उछाल आया है उसका कारण आयात में आया उछाल है, न कि आयात में आयी गिरावट। यह उछाल घरेलू मांग पर अत्यधिक भरोसा करना था क्योंकि सकल बाह्य मांग का अंशदान अत्यधिक नकारात्मक था।

यह विकास उछाल, लगता है, बचत और निवेश अनुपात में अत्यधिक गिरावट को भी साथ में लिए हुए था, उदाहरण के लिए सकल निर्धारित पूंजी संरचना जो वर्ष 2011-12 में 33.6 प्रतिशत थी वह वर्ष 2013-14 में गिरकर 29.7 प्रतिशत रह गई जबकि सकल घरेलू बचत 33.9 प्रतिशत से घटकर 30.6 प्रतिशत रह गई। पेचीदगी यह है कि संकट वर्ष 2013-14 के दौरान विकास उछाल भारी उत्पादकता उछाल भी थी जिसे वृद्धिमान पूंजी अनुपात में देखा गया, जिसमें लगभग 30 प्रतिशत की गिरावट आयी और कुल घटक उत्पादकता विकास जिसमें दो प्रतिशत बिन्दुओं से भी अधिक वृद्धि हुई। आंकड़ों से पता चलता है कि वर्ष 2013-14 के दौरान निजी कारपोरेट निवेश में अत्यधिक वृद्धि हुई। ऐसा लगता है कि इसका कारण स्ट्रैस्ड् बैलेंसशीट और स्टाल्ड परियोजनाएं थीं।

नईश्रृंखलाओं को समझने के कुछ क्लू, निम्नलिखित चार्ट में दिए गए हैं जो नईश्रृंखला के बीच के भेद को वास्तविक ळक्च् विकास दर और डिफलेटर से संबंधित भेद को समाप्त करते हैं। इस अपघटन को क्षेत्रवार रूप में दर्शाया गया है।

वर्ष 2013-14 के दौरान उत्पन्न उत्पन्न दोश्रृंखलाओं के बीच और विनिर्माण क्षेत्र के बीच की भारी विसंगतियों जहां कि इसकी गंभीरता 6 प्रतिशत बिन्दुओं तक है: यहां तक कि 2012-13 के दौरान विनिर्माण में दोश्रृंखलाओं के बीच का डायवर्जेन्स 5 प्रतिशत बिन्दुओं तक है। ळक्च् के विनिर्माण शेयर के स्तर में उछाल का कारण नई मैथडोलोजी है। परन्तु यह अभी तक अस्पष्ट है कि विकास की दर को पूर्व के अनुमानों और विनिर्माण विकास के अन्य संकेतकों से इतना अधिक डायवर्ज क्यों होना चाहिए (अर्थात् औद्योगिक उत्पादन का सूचकांक इस तथ्य को स्वीकार करने के बावजूद कि बाद वाला इंडेक्स एक आयतन इंडेक्स है, और पहले वाला एक मूल्य वृद्धित इंडेक्स है भारी विषमताएं हैं। स्पष्ट है कि इन मुद्दों की वृहत्तर विस्तृत परीक्षा किए जाने की जरूरत है।

जब तक कि विश्लेषण और तुलनाओं के लिए विस्तृत आंकड़ाश्रृंखला उपलब्ध नहीं हो जाती और जब तक नए बेस की संगत भूमिकाओं में परिवर्तन नहीं हो जाता तब तक नए आंकड़े और संवर्धित मैथेडोलाजी और गत कुछ वर्षों से विकास विवरण को पूरा समझने में कठिनाई का सामना करना पड़ेगा। प्रगति कर रही भारतीय अर्थव्यवस्था को देखने के लिए अद्यतन आंकड़ों को विश्लेषणपरक दृष्टि से देखने की जरूरत है क्योंकि उन्हें एक ही बार देखने का मौका मिलेगा लेकिन साक्ष्यों के तालमेल और सतर्क सलाहकार प्रवाहमान भारतीय अर्थव्यवस्था के बजाय उसकी व्याख्या के पक्ष में है।

चित्र: आर्थिक वृद्धि के नए एवं पुराने अनुमानों में अन्तर, 2012-13 तथा 2013-14 (प्रतिशत)

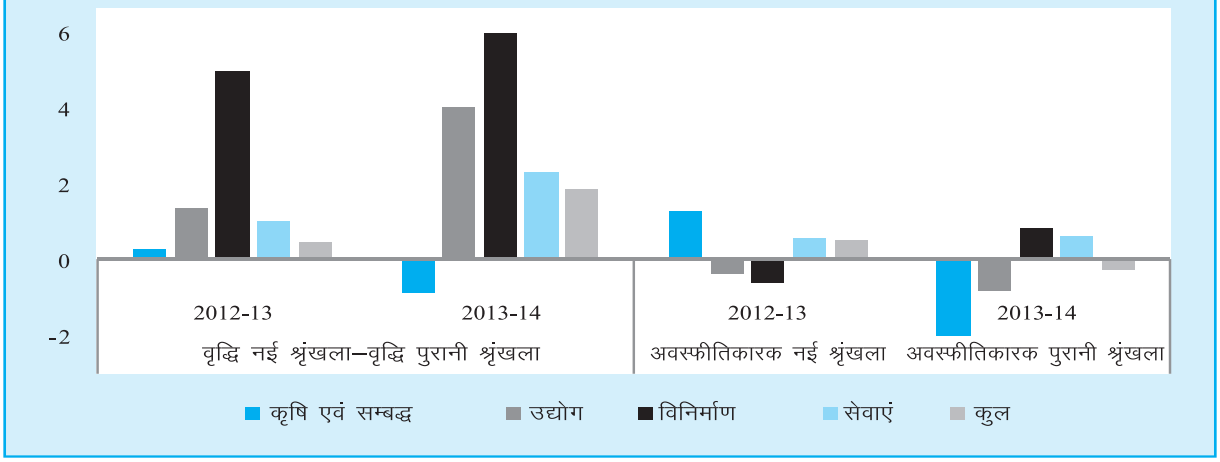

स्रोत : केन्द्रीय सांख्यिकी कार्यालय।

स्वीकृत हुआ है वह ट्रेड शॉक स्थिति के प्रत्युत्तर में उनकी प्रकृति के द्वारा निर्धारित किया जाना चाहिए: एक सकारात्मक शॉक जिसे स्थायी तौर पर प्राप्त किया जाए, को वृहत्तर खपत वृद्धि को बढ़ावा देना चाहिए क्योंकि देश की स्थायी आय में वृद्धि है; दूसरी ओर अस्थायी सकारात्मक शॉक से वृहत्तर बचत होनी चाहिए। भारत ने क्या किया?

शॉक की प्रकृति के बारे में अनिश्चितता को देखते हुए भारत समुचित रूप से बाड़बंद हो गया है। निम्न चित्र 1.4 में अन्तर्राष्ट्रीय कच्चे तेल की कीमतों में आयी गिरावट की तुलना पेट्रोल और डीजल की घरेलू रीटेल कीमतो में आयी संगत गिरावट के साथ की गई है। वर्ष 2014 के जून माह के अन्त से अन्तर्राष्ट्रीय कीमत में लगभग 50 प्रतिशत की गिरावट आयी है इस में से लगभग 17 प्रतिशत (संपूर्ण) गिरावट का लगभग 34 प्रतिशत) ग्राहकों को दे दिया गया, जबकि शेष सरकार ने अपने पास रख लिया। दूसरे शब्दों में कहें तो ट्रेड शॉप के टर्म्स का 66 प्रतिशत सरकार की बचत में गया ओर शेष ग्राहकों को दे दिया गया (जैसा कि खण्ड 1.12 में दर्शाया गया है) इस संबंध में सरकार की कार्रवाई से वस्तुत: कार्बन कर के रूप में सहायता की जा रही है)। कीमतों के भावी उतार-चढ़ाव के बारे में अनिश्चितता के लिए वृहत आर्थिक प्रत्युत्तर में बचत और खपत के साथ समुचित संतुलन बना लिया है। और पहले का पक्ष लेना है, बशर्ते कि भविष्य में उच्चतर तेल कीमतों के प्रभाव को सहन करने के लिए आवश्यक साधन मिल जाए।

1.2 ख. विकास की संभावनाएं

थोड़े समय के लिए निम्नतर तेल कीमतों से निम्नतर मूल्य वृद्धि और निम्नतर मूल्य वृद्धिपरक अपेक्षाओं द्वारा सुविधा से सम्पन्न समान मौद्रिक नीति से, और सामान्य मानसून की भविष्यवाणी से विकास को गति मिलेगी। मध्यवधि संभावनाओं को ''बैलेंसशीट सिंड्रोम विद इंडियन केरेक्टेरस्टिक्स'' द्वारा अनुकूलित किया जाएगा जिसमें निजी क्षेत्र पूंजी निवेश में तीव्र वृद्धि को होल्डबैक करने की संभावना है।

आने वाले वर्ष के दौरान वास्तवित जीडीपी विकासदर को बाजार कीमतों के आधार पर लगभग 0.6-1.1 प्रतिशत बिन्दु जो वर्ष 2014-2015 की तुलना में अनुमानित किया जाएगा। इस वृद्धि के लिए चार घटकों की जरूरत पड़ेगी, पहला सरकार ने अनेक सुधार शुरू किए हैं और अन्य अनेक की योजना बना रही है (बॉक्स 1.2)। उनका संचित विकास प्रभाव सकारात्मक रहेगा।

वृद्धि के लिए और प्रेरण मुद्रास्फीति में जारी अनुकूलन द्वारा प्रदत्त बढ़ती हुई आर्थिक सुविधा तेल की घटती हुई कीमतों द्वारा दी जाएगी। कर कटौतियों के प्रभावों को अनुरूप करने और तेल की कीमतों में गिरावट आने से परिवारों की खर्च करने की शक्ति में वृद्धि होगी। खपत और वृद्धि में उछाल आएगा। तेल उत्पादन में एक महत्वपूर्ण इनपुट भी है और घटती हुई कीमतें लाभ मार्जिनों के लिए सहारा होगी और इसलिए कारपोरेट सेक्टर की तुलनपत्रों में भी सहायता प्रदान करेगी। गिरती हुई इनपुट लागतें थोक मूल्य सूचकांक में परिलक्षित होती हैं जो जनवरी 2005 में अवस्फीति को दर्शाता है।

मुद्रास्फीति में और अधिक गिरावट और उसकी परिणामी आर्थिक सुविधा से वृद्धि के लिए लाभ संवेदी सेक्टरों में परिवारों के खर्च को प्रोत्साहित करके और फर्मों के ऋण बोझ घटाकर, उनके तुलनपत्रों को सशक्त करके दोनों द्वारा नीतिगत समर्थन मिलेगा। अंतिम अनुकूल वेग वह मानसून होगा जिसका पिछले वर्ष की तुलना में सामान्य रहने का पूर्वानुमान किया गया है। वर्ष 2014-15 के लिए आधार के रूप में नए प्राक्कलन का प्रयोग करके यह वर्ष 2015-16 में 8.1-8.5 प्रतिशत के बाजार मूल्य पर वृद्धि अन्तर्निहित होती है।

सभी बोटों को उठाने के लिए वृद्धि की शक्ति मुख्यत: से इसके रोजगार सृजन की संभावना पर निर्भर करेगी। दीर्घकालिक रोजगार रुझानों पर आंकड़ों की व्याख्या करना डाटा स्रोतों के विस्मयकारी बहुलता, कार्य प्रणाली और कवरेज के कारण कठिन होता है (बाक्स 1.3 देखें)। एक संभावित निष्कर्ष यह है कि वर्ष 1990 के दशक की तुलना में वर्ष 2000 के दशक में दीर्घकालिक रोजगार वृद्धि में संभवत: गिरावट रही है और संभवत: वृद्धि के रोजगार में लचीलापन लाने में कमी रही है। अर्थात् वृद्धि की निर्दिष्ट मात्रा के कारण विगत की तुलना में अपेक्षाकृत कम जॉब सृजित हुए हैं। यह स्पष्ट तथ्य है कि श्रमिक बल वृद्धि (अनुमानत: 2.2-2.3 प्रतिशत है) रोजगार वृद्धि (लगभग 1½ प्रतिशत) से अधिक है इसलिए रोजगार अवसर सृजित करने की चुनौती महत्वपूर्ण रहेगी।

1.2ग सुधारों के दृष्टिकोण

आगामी माहों के दौरान अनेक सुधार भारी निवेश और वृद्धि में मददगार होंगे। बजट प्रावधान में वित्तीय समेकन मध्यावधि फ्रेमवर्क में अन्त: स्थापक कार्रवाईयों की प्रक्रिया जारी रहनी चाहिए। 2004 के लिए भारत के जीडीपी राशियों पर समग्र राजस्व का प्राक्कलन आईएमएफ द्वारा 19.5 प्रतिशत किया गया है। इसके लिए तुलनाकर्ता देशों में विद्यमान स्तरों की ओर जाना आवश्यक होता है जो उभरते हुए एशियाई अर्थव्यवस्थाओं के लिए 25% और जी 20 में उभरते हुए बाजार देशों के लिए 29 प्रतिशत के रूप में आकलित है। इसी दौरान व्यय नियंत्रण यह सुनिश्चित करने के दौरान

चित्र 1.4: ईंधन: अन्तर्राष्ट्रीय और घरेलू मूल्यों में गिरावट, अप्रैल 2014 से फरवरी 2015 (लीटर/रूपए एवं बैरल/अमरीकी डॉलर)

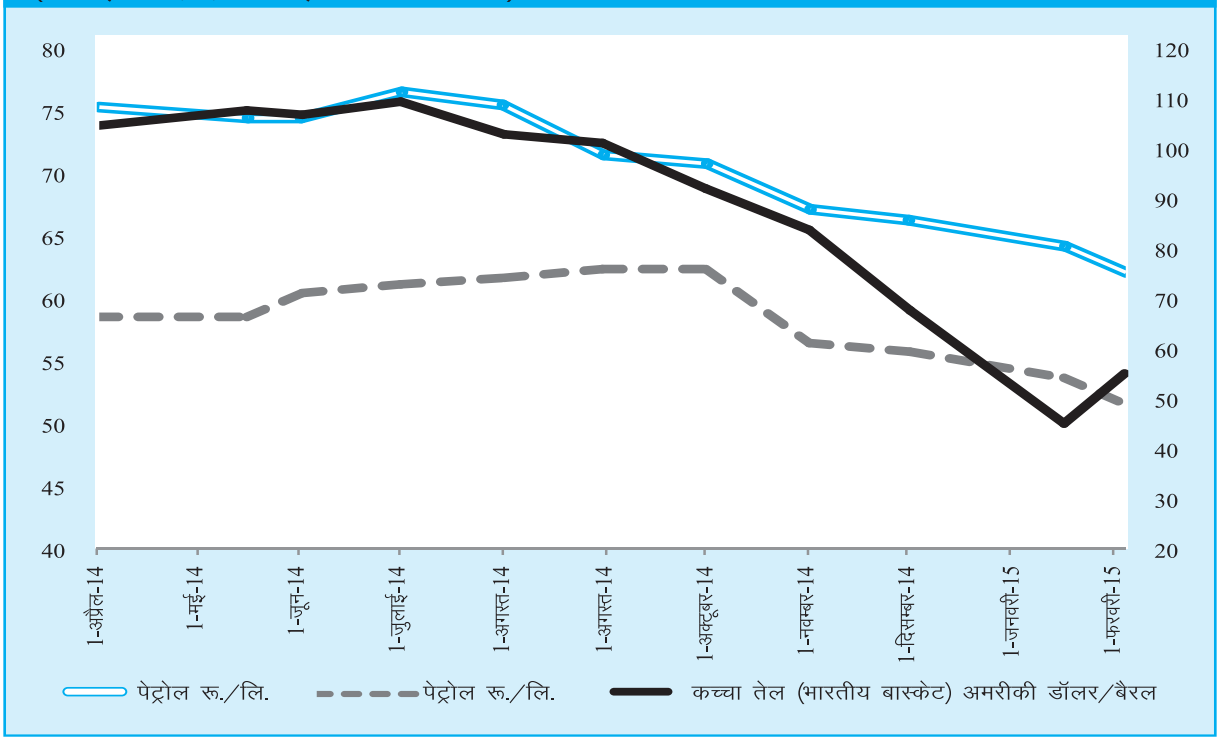

स्रोत **: पीपीएसी, पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस मंत्रालय तथा पीआईबी, भारत सरकार।**

टिप्पणी **: पेट्रोल और डीजल की कीमतें अखिल भारतीय औसत पर आधारित हैं।**

[4].http://www.skymetweather.com/content/weather-news-and-analysis/el-nino-scare-abandoned-normal-indian-monsoon-likely-in-2015/

बाक्स 1.2 : नई सरकार की सुधार संबंधी कार्रवाईयां

मई 2014 से जबसे नई सरकार सत्ता में आयी है उसने अनेक नए सुधारात्मक उपायों की शुरूआत की है जिनका पर्याप्त संचित प्रभाव हो सकेगा।

इनमें शामिल हैं:-

- पेट्रोलियम क्षेत्र में नए निवेशों की सुविधा के लिए डीजल की कीमतों को डीरेगुलेट करना;
- गैस कीमतों को 4.2 अमेरीकी डालर प्रति मिलियन ब्रिटिश थर्मल यूनिट को 5.6 अमेरीकी डालर बढ़ाना और मूल्य निर्धारण करने को पारदर्शिता के साथ स्वत: ही अन्तर्राष्ट्रीय कीमतों के साथ जोड़ना ताकि वृहत्तर गैस आपूर्ति के लिए प्रोत्साहन प्रदान किए जा सकें और परिणामस्वरूप विद्युत क्षेत्र को संकट से उबारा जा सके;
- ऊर्जा उत्पादों पर कर लगाना। चूंकि अक्टूबर से तेल की गिरती कीमतों का लाभ उठाते हुए डीजल और कोयले पर लगने वाले उत्पाद शुल्क में चार गुना वृद्धि की गई थी। लगभग 70 हजार करोड़ रुपए की संग्रहण के अलावा (वार्षिक आधार पर), इस कार्रवाई से सकारात्मक पर्यावरणात्मक परिणाम प्राप्त होंगे जैसा कि खण्ड 11 में उल्लिखित है।
- रसोई गैस की सब्सिडी को पूरे देश में सीधे उपभोक्ता के खाते के अन्तरित करना।
- व्यय प्रबंधन आयोग का गठन करना जिसने अपनी अंतरिम रिपोर्ट व्यय विभाग को युक्ति-युक्त संगत बनाने के लिए प्रस्तुत कर दी है।
- बोलियों के द्वारा कोयला क्षेत्र में सुधार लाने के लिए अध्यादेश पारित करना।
- वस्तु और सेवाकर (जीएसटी) पर राजनीतिक सहमति प्राप्त करना जिससे संविधान संशोधन विधेयक के विधायी पैसेज को अनुमति मिलेगी।
- वित्तीय अन्तर्वेशन के लिए मुख्य कार्यक्रम शुरू करना-प्रधान मंत्री जन-धन योजना-जिसके अंतर्गत फरवरी के मध्य तक 12.5 करोड़ नए खाते खुल चुके हैं;
- आधार कार्यक्रम के अंतर्गत कवरेज का विस्तार करने के लिए निरंतर प्रयास करना, एक बिलियन भारतीयों के नामांकन का लक्ष्य, फरवरी के प्रारंभ तक 757 मिलियन भारतीयों की जैव पहचान (बायो आइडेंटीफिकेशन) हो चुकी है और 139-आधार संबद्ध बैंक खाते खोले जा चुके हैं;
- रक्षा क्षेत्र में एफडीआई सीमा को बढ़ाना;
- सोने पर मात्रात्मक प्रतिबंधों को समाप्त करना;
- भूमि अर्जन को सरल बनाने के लिए अध्यादेश जारी करना, जिससे व्यापार करने की लागत को सुविधाजनक बनाया जा सके, और यह सुनिश्चित किया जा सके कि किसानों को उनकी जमीन का उचित मुआवजा मिल गया है;
- राजस्थान में श्रम सुधारों के लिए राष्ट्रपति परिसंपत्ति को सुविधा प्रदान करना, राज्यों द्वारा और अधिक सुधार प्रयासों के लिए उदाहरण प्रस्तुत करना, और अनेक श्रम विधियों को समेकित करना व उन्हें पारदर्शी बनाना; तथा
- बीमा में एफडीआई कैप को 49 प्रतिशत तक बढ़ाकर अध्यादेश पारित करना विनिवेशों का कार्यक्रम चालू करना जिसके अंतर्गत कोल इंडिया में 10% सरकारी जोखिम पब्लिक को दिया गया था, लगभग 22500 करोड़ रुपए की प्राप्तियां जिसमें से 5800/- करोड़ रुपए विदेशी निवेशकों से प्राप्त किए गए थे।
- खनन और खनिज पदार्थ (विकास और विनियम (एमएमडीआर) संशोधन अध्यादेश 2015 पारित करना देश में अब तक के गतिरोधि त खनन क्षेत्र को पूनर्जीवित करने में एक महत्वपूर्ण कदम है आवंटन के लिए नीलामी की प्रक्रिया अत्यधिक पारदर्शिता और राज्यों के लिए भारी राजस्वों में परिनियामक होगी।

समेकित होना चाहिए कि आर्थिक सहायताओं के प्रावधान में लीकेजों को दूर करने और लक्षित प्रक्रिया में सुधार करने से इसमें सार्वजनिक खपत से सार्वजनिक निवेश के रूप में परिवर्तन आया है।

निवेशकों के लिए कानूनी निश्चितता और विश्वास दिलाने के लिए कोयला, बीमा और भूमि संबंधी अध्यादेशों को संसद द्वारा अनुमोदित विधान में परिवर्तित करने की आवश्यकता है। इसके साथ-साथ माल और सेवा कर (जीएसटी) लागू करने के लिए संवैधानिक संशोधन को भी संसद द्वारा पहले विधान में परिवर्तित किया जाना और उसके बाद राज्यों के अनुमोदन द्वारा पुष्ट किए जाने की आवश्यकता है। सीमित छूट के साथ अन्तरराष्ट्रीय प्रतिस्पर्धात्मक स्तरों पर निर्धारित एकल जीएसटी दर (संपूर्ण राज्यों और उत्पादों के लिए) इसकी प्रो. वृद्धि, प्रो. अनुपालन और प्रो. एकल बाजार सृजक संभावना को अधिकतम करेगी।

यद्यपि आधुनिक और व्यापक अप्रत्यक्षकर प्रणाली के लिए रूपरेखा जीएसटी की सहायता से तैयार की जा रही है, फिर भी प्रत्यक्ष कर के संबंध में समान प्रयास करना अपेक्षित है।

बाक्स 1.3 : रोजगार वृद्धि और रोजगार में लचीलापनः प्रमाण क्या है?

रोजगार वृद्धि और आर्थिक वृद्धि के सापेक्षिक इसके लचीलेपन के प्राक्कलन अति व्यापक है। तथापि प्रयोगात्मक रूप से यह कहा जा सकता है कि रोजगार वृद्धि और इसमें लचीलापन 1990 के दशक की तुलना में 2000 के दशक में कमी हुई है। चूंकि श्रमिक बल में वृद्धि रोजगार वृद्धि से अधिक है इसलिए श्रमिक आमेलन एक चुनौती होगी। सुधारों और तीव्र आर्थिक वृद्धि को पूरा करना महत्वपूर्ण होगा।

यदि नए जीडीपी आकलन बढ़ा दिए गए हैं तो मौजूदा आर्थिक विकासों, रोजगार वृद्धि आकलन पैटर्नों की हमारी समझ के बारे में प्रश्न चुनौती से कम नहीं है। भारत में रोजगार वृद्धि पर आकलन लगभग विस्मयकारी है। विभिन्न समयावधि के लिए आंकड़े विभिन्न स्रोतों से प्राप्त होते हैं जिनके कवरेज नमूना आकार अलग-अलग कार्य प्रणालियों के होते हैं। इनका वर्णन नीचे तालिका में किया गया है।

तालिका : विभिन्न डाटा स्रोतों की आवधिकता, कवरेज और जनसंख्याआकार

क्र.सं.	डाटा स्रोत	आवधिकता	सेक्टर कवरेज	जनसंख्या/नमूना
1.	जनगणना	दशकीय	संपूर्ण	जनसंख्या
2.	श्रम ब्यूरो (एलबी)	वार्षिक	संपूर्ण	नमूना (वर्ष 2013-14) के सर्वेक्षण में 1.37 परिवार, 6.80 व्यक्ति।
3.	राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण (एनएसएस)	पंचवर्षीय	संपूर्ण	नमूना (वर्ष 2011-12 के दौर में 1.02 परिवार, 4.57 व्यक्ति।
4.	आर्थिक जनगणना (ईसी)	कोई निर्धारित अवधि नहीं	सभी स्थापनाएं जिसमें असंगठित क्षेत्र भी शामिल है और इसमें फसल उत्पादन पौधारोपण, लोक प्रशासन, रक्षा और अनिवार्य सामाजिक सुरक्षा शामिल नहीं है।	नमूना (वर्ष 2014 की आर्थिक जनगणना में 25 लाख परिवार, 56 मिलियन स्थापनाएं
5.	उद्योगों का वार्षिक सर्वेक्षण (एएसआई)	वार्षिक	कारखाना अधिनियम 1948 की धारा 2ड(i) और 2ड(ii) के अधीन पंजीकृत सभी कारखाने और केंद्रीय विद्युत प्राधिकरण (सीईए) से पंजीकृत बिजली के उत्पादन संभरण और वितरण में लगे सभी विद्युत उपक्रम	वर्ष 2012-13 के सर्वेक्षण में 2.17 लाख कारखाने

टिप्पणी : (1) जनगणना में नियोजित व्यक्तियों को मुख्य और सीमांतक के रूप में वर्गीकृत किया जाता है

(2) राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण में रोजगार का मुख्य और गौण दोनों स्थितियों का लेखा जोखा होता है।

(3) श्रम ब्यूरो के सर्वेक्षण से हम 15 वर्ष और इससे अधिक आयु वर्ग की जनसंख्या का आकलन करते है।

(4) वर्ष 2000-01 से 2003-04 तक के एएसआई आंकड़ों के लिए, जनगणना क्षेत्र को आशोधित किया गया था ताकि इसमें 200 और इससे अधिक कामगारों के बजाय 100 और इससे अधिक नियोजित कामगारों की यूनिट शामिल की जा सके। अतः 2000-01 के बाद के आंकड़े पिछले दौर के आंकड़े से तुलना योग्य नहीं है।

1990 के दशक और 2000 के दशक के लिए जीडीपी वृद्धि से संबंधित रोजगार वृद्धि के लचीलेपन और रोजगार वृद्धि के बारे में ये स्रोत हमें क्या बताते हैं? संबंधित परिणाम नीचे तालिका में संक्षेप में दर्शाए गए हैं।

तालिका: रोजगार वृद्धि और रोजगार लचीलापन

	जनगणना		राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण		श्रम ब्यूरो	आर्थिक जनगणना		उद्योगों का वार्षिक सर्वेक्षण	
	1991 to 2001	**2001 to 2011**	**1993-94 to 1999-2000**	**1999-00 to 2011-12**	**2011-12 to 2013-14**	**1990 to 1998**	**1998 to 2014**	**1990-91 to 1998-99**	**2003-04 to 2012-13**
रोजगार में परिवर्तन (मिलियन)	88.4	79.2	25.5	73.4	9.15	12.9	44.4	0.43	5.07
रोजगार वृद्धि	2.5	1.8	1.1	1.4	1.0	2.1	2.7	0.6	5.7
जीडीपी वृद्धि	5.7	7.7	6.8	7.3	4.6	6.1	6.6	5.5	10.7
रोजगार में लचीलापन	0.44	0.24	0.16	0.19	0.22	0.35	0.41	0.12	0.54

कुल अति प्रयोगात्मक निष्कर्ष पूर्णतया अस्पष्ट प्रक्कलनों से निकाले जा सकते है। सकल रोजगार वृद्धि 1990 के दशक में 2 प्रतिशत अधिक रही है। यद्यपि राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण के आंकड़े भिन्न भिन्न दर्शाते है, फिर भी जनगणना और आर्थिक जनगणना इस संबंध में परस्पर काफी जनदीक है। दोनों ही जनगणनाओं और राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण के अनुसार 2000 के दशक में रोजगार वृद्धि में 1.4 और 1.8 प्रतिशत के बीच गिरावट आई है। इसके प्रतिफल संगठित उद्योग में रोजगार वृद्धि के आंकड़े 1990 के दशक की तुलना में 2000 के दशक में पर्याप्त उच्चतर रोजगार वृद्धि के साथ प्रतिशत अस्थायी पैटर्न दर्शाते है।

वृद्धि के रोजगार संबंधी लचीलेपन के लिए वैसे ही पैटर्न का सुझाव दिया गया है अर्थात 1990 के दशक में लगभग 0.35-0.44 का उच्चतर लचीलापन और 2000 के दशक में लगभग 0.2 की गिरावट दर्शाती है। श्रम ब्यूरो से प्राप्त सर्वाधिक नवीनतम आंकड़े यह संकेत देते हैं कि वर्ष 2011-12 तक भी रोजगार संबंधी लचीलापन कम रहा है। रोजगार आमेलन प्रमाणिक रूप से विगत दशक में कम सफल था।

जिस पर ध्यान न देते हुए डाटा स्रोत का प्रयोग किया जाता है, यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि रोजगार वृद्धि श्रमिक बल में वृद्धि से पीछे है। उदाहरण के लिए वर्ष 2001 से 2011 के बीच जनगणना के अनुसार श्रमिक बल में वृद्धि 2.23 प्रतिशत थी (पुरुष एवं महिलाओं को जोड़कर)।

यह इस दशक में किए गए रोजगार वृद्धि के अधिकांशत: आकलनों से कम है जो कि लगभग 1.4 प्रतिशत है। अधिक तीव्र रोजगार अवसर सृजन करना स्पष्ट रूप से प्रमुख पॉलिसी चुनौती है। रोजगार के लचीलेपन की संगणना में रोजगार और वृद्धि के आंकड़ों के मध्य कवरेज की संगतता यथासंभव मात्रा में सुनिश्चित की जाती है। उदाहरण के लिए आर्थिक गणना डाटा के लिए विनिर्माणकारी जीडीपी का प्रयोग प्रसंगिक आधार के रूप में किया जाता है। उद्योगों का आर्थिक सर्वेक्षण संबंधी आंकड़ों के लिए कुछ मूल्य वर्धन (विनिर्माणकारी जीडीपी द्वारा अवस्फीति) का प्रयोग संगणनाओं के आधार के रूप में किया जाता है।

[1]रोजगार लोचता के परिकलन में, रोजगार और विकास डाटा के बीच कवरेज की संगति संभावित सीमा तक सुनिश्चित की जाती है। उदाहरण के लिए, ईसी डाटा के लिए विनिर्माण जीडीपी संगत बेस के रूप में प्रयुक्त की जाती है जबकि ए.एम.आई. सकल मूल्य वृद्धि (विनिर्माण जी.डी.पी. द्वारा अपस्फीति कारक) को परिकलन में आधार के रूप में प्रयुक्त किया जाता है।

References: Misra, Sangita and Anoop K Suresh *"Estimating Employment Elasticity of Growth for the Indian Economy"*, 2014, RBI Working Paper Series 6.

Mehrotra, Santosh "Explaining Employment Trends in the Indian Economy: 1993-94 to 2011-12", 2014, Economic and Political Weekly, XLIX(32).

इसका उद्देश्य प्रतियोगी, पूर्वसूचनीय, स्पष्ट और छूट युक्त कम कर नीति का ऐसा विधान तैयार करना होना चाहिए जिससे पूंजीगत लागत, प्रोत्साहन बचत में कमी आए और करदाता के लिए इसका अनुपालन सुविधाजनक हो।

सरकार और भारतीय रिजर्व बैंक को मुद्रा स्फीति नियंत्रण में वर्तमान लब्धियों को समेकित करने के लिए आर्थिक नीति फ्रेमवर्क अनुबंध तैयार करना और एक ऐसी संस्थागत व्यवस्था को संहितावद्ध करना चाहिए जो वस्तुत: व्यवहार में हो। यह इस बात का संकेत होगा कि सरकार और भारतीय रिजर्व बैंक दोनों ही निम्न और स्थिर मुद्रास्फीति के उद्देश्यों की पूर्ति में संयुक्त रूप से प्रयासरत हैं। मजदूरी और भूमि कानूनों के सुधारों और कारोबार करने की लागतों को घटाने के लिए राज्यों और केंद्र को संयुक्त रूप से प्रयास करना आवश्यक होगा (स्पष्टीकरण के लिए वर्ष 2014-15 के छमाही आर्थिक विश्लेषण का बॉक्स 3 देखें) जीएसटी को लागू करने संबंधी अद्भुत बदलाव की संभावना और प्रत्यक्ष लाभ देने वाली प्रौद्योगिकी-जिसे जेएएम (जन धन-आधार-मोबाईल) संख्या त्रयी समाधान को कम नहीं आंका जाना चाहिए।

1.3 मुद्रास्फीति और धनराशि

मुद्रास्फीति संबंधी प्रक्रिया में संरचनात्मक परिवर्तन पर निम्नतर तेल कीमतों और कृषि कीमतों तथा मजदूरियों में मंदन के कारण अभी कार्रवाई जारी है। ये परिवर्तन प्रभावशाली ढंग से उन्नत परिवार मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं में साथ-साथ परिलक्षित हो रहे हैं।

अर्थव्यवस्था से भारतीय रिजर्व बैंक की मुद्रा स्फीति लक्ष्य 0.5-1 प्रतिशत तक प्रभावित होने की संभावना होती है, और इससे आर्थिक नीति को और अधिाक सरल बनाने का मार्ग खुलता है।

जैसा कि छमाही आर्थिक विश्लेषण 2014-15 में विस्तार से दिया गया है। मुद्रा स्फीति की गति ने बाजार भागीदारों और नीति निर्माताओं को आश्चर्य चकित किया जिसमें भारतीय रिजर्व बैंक भी है। तिमाही औसत के आधार पर मौसमी रूप से समायोजित और वार्षिक आधार पर मापित वृद्धि लागभग 15 प्रतिशत से घटकर 5% से कम रह गई है। (चित्र 1.5)[5] यह रूचि कर है कि खाद्य मूल्यों में तेजी अत्यधिक कम हो गई है और यह समग्र मुद्दा स्फीति के स्तर से नीचे है।

आगे बढ़त हुए यह तीन क्षेत्रों मे गति तीन महत्वपूर्ण विकासों के कारण अवरोधित हो सकती है जो भारत में मुद्रास्फीति प्रक्रिया में संरचनात्मक परिवर्तन का संकेत कच्चा तेल (कूड ऑयल) कृषि और मुद्रास्फीति की संभावनाएं।

कच्चे तेल की कीमतों के आगामी माहों में हितकर रहने की संभावना है। वस्तुतः (कच्चे तेल स्थल) के लिए आईएमएफ और ब्रेंट और वेस्ट टेक्सेज इंटरमीडिएट क्रूड के लिए यूएस ऊर्जा सूचना प्रशासन (ईआईए) द्वारा किए गए प्राक्कलनों का औसत यह दर्शाता है कि तेल की कीमतें वर्ष 2014-15 की तुलना में वर्ष 2015-16 के दौरान लगभग 29 प्रतिशत कम होगी (59 अमेरीकी डालर बनाम अमेरिकी डालर 82) (चित्र 1.6)

यह जोखिम कि तेल की कीमतों में गिरावट आने से यह संभावना हमेशा मौजूद रहती है कि यह स्वतः ही बढ़ जाएगी जिसका कारण भौगोलिक, राजनैतिक परिदृश्य में अचानक घटित होने वाली गतिविधियां है। तथापि अनुकूलित तेल कीमतों की निरन्तरता से कम से कम तीन घटकों अर्थात कमजोर सार्वभौमिक मांग, बढी हुई आपूर्ति और सार्वभौमिक आर्थिक तथा नकदी स्थिति के लिए अत्यधिक संभाव्य प्रतीत होती है। विश्व अर्थव्यवस्था के प्रमुख क्षेत्रों में धीमे विकास के कारण मांग कमजोर रहेगी जिसमें चीन और यूरोप भी शामिल है। आपूर्ति में परिवर्तन देखा गया है जो अमेरिका में कच्चे तेल और शैल गैस उत्पादन में बृद्धि और ओपेक की अल्पविक्रेता अधिकार में सहवर्ती कमी से संबद्ध है। यह उल्लेखनीय है कि इसका प्रमुख उत्पादक सऊदी अरब है (जिसने अन्य स्रोतों से आपूर्ति में वृद्धि पर प्रतिक्रिया न करने का निर्णय लिया है) इसके अतिरिक्त कीमतों का लगभग 60 से 65 प्रति बैरल अमेरिकी डालर पर आंकलित शैल उत्पादन की सीमांत लागत बढ़ाते हुए निर्धारण किया जा सकता है।

अन्ततः अमेरिका में असाधारण निम्न ब्याज चक्र की में प्रत्याशित समाप्ति और भावी दर वृद्धियों की संभावना से तेल को अधिक समय तक ने रखकर उसे बाहर निकालना और उसके द्वारा आपूर्ति को और बढ़ाना तथा कीमतों को कम रखना उचित होगा उच्चतर दरों के कारण वित्तीय परिसम्पत्तियों का पुनर्नियतन यू॰एस॰ वित्तीय इंस्ट्रमेंट में एक वर्ग आवश्यक वस्तुओं से विशेष रूप से तेल से दूर होगा।

वर्ष 2000 का एक पाठ अनुदेशात्मक है। यह दशक, उन्नत देशों में विद्यमान तुल्यकालिक आर्थिक नीति द्वारा सृजित नकदी आधिव्य के कारण आंशिक वस्तु मूल्यों में पूर्णरूप से वृद्धि का साक्षी है। उस तुल्यकालन को परिवर्तनकारी दीर्घ-आर्थिक मार्गों द्वारा खंडित किय गया है। जिसमें बसूली के कारण एक तरह सामान्य आर्थिक नीति में प्रत्यार्वतन होगा और दूसरी ओर यूरोप और जापान जहां नीतियां शिथिल हो सकती है, वस्तुतः यदि चीन अपेक्षाकृत सस्ते क्रेढिट और मूल्य द्वारा विनिमय दर के माध्यम से इसे कम करता है और इस पर अपनी अनुकूल प्रतिक्रिया करता है, तो वैश्विक नकदी की स्थिति में पुनः कभी हो सकती है लेकिन यूएस तब भी कठिनाई के दौर (टाइट्रेनिक मोड) में रहेगा।

दूसरी बात वह है कि तेल की कीमतों के अतिरिक्त, भारत की मुद्रा स्फीति कृषि, विदेशी और घरेलू दबाबों से निर्धारित होगी। विश्व बैंक के अनुमानों के अनुसार वैश्विक कृषि कीमतें मंद रहेगी जिसमें वर्ष 2014 की तुलना में वर्ष 2015 में 4.8 प्रतिशत की कमी हो सकती है। इसका महत्वपूर्ण

[5] Figure 1.5 is based on the new, re-based (from 2010 to 2012) CPI index.

[6] Arezki, R & Olivier Blanchard, "*The 2014 oil price slump: Seven key questions*", January 2015 accessed at http://www.voxeu.org/article/2014-oil-price-slump-seven-key-questions.

चित्र 1.5: सीपीआई में घट-बढ़ (आधार 2012) दिसम्बर 2012 से दिसम्बर 2014 (प्रतिशत)

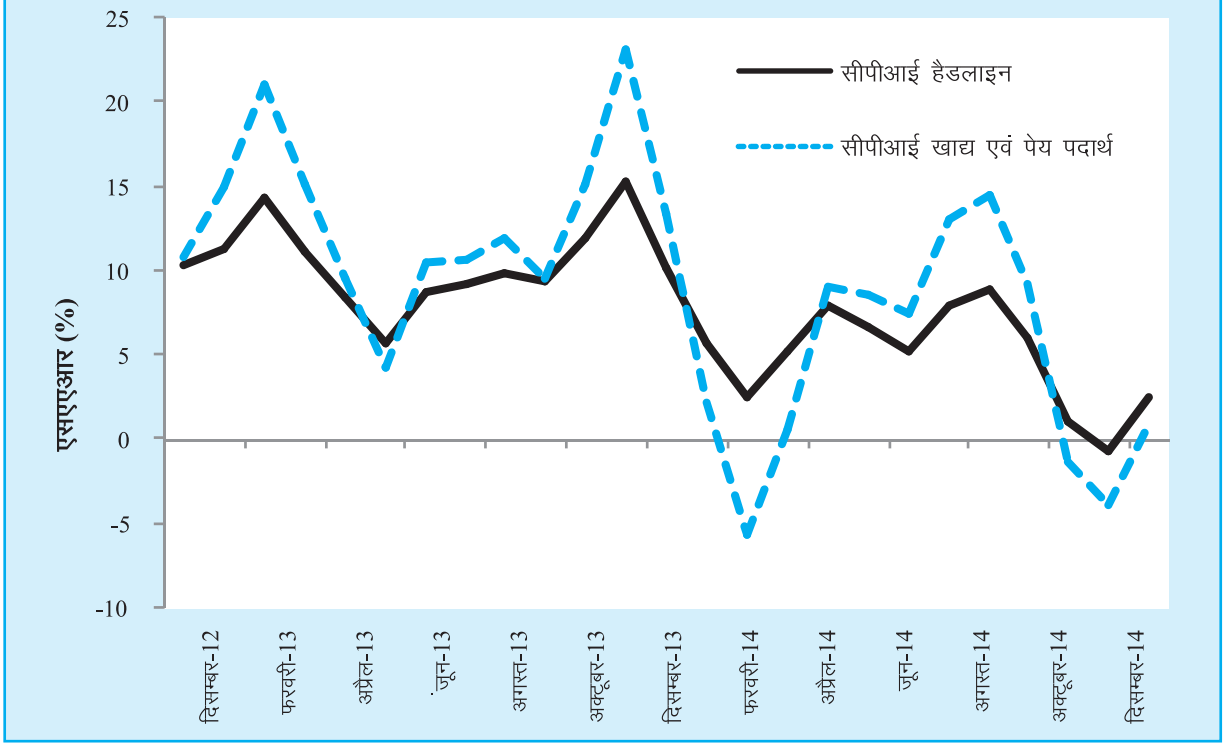

स्रोत : सीएसओ

चित्र 1.6: दिसम्बर 2017 तक ब्रेंट क्रूड का वायदा मूल्य (प्रति बैरल अमरीकी डॉलर

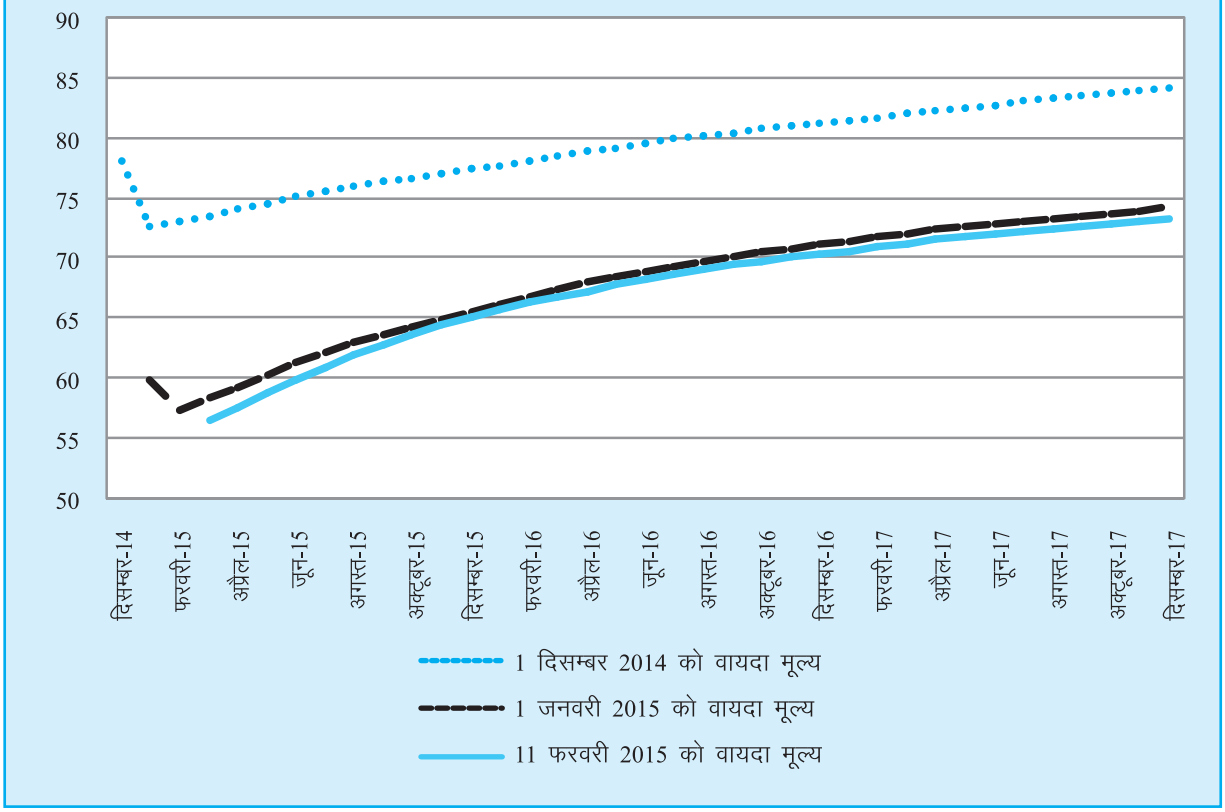

स्रोत : थामसन राइटर्स

प्रभाव घरेलू समर्थन मूल्यों में अनुकूल बृद्धि पर पड़ सकता है

सर्वाधिक आकस्मिक संरचनात्मक परिवर्तन मजदूरी दवावों से संबंधित होता है। जैसा कि चित्र 1.7 में दर्शाया गया है। मजदूरी वृद्धि 20 प्रतिशत से लगभग 3.6 प्रतिशत कम हुई है। यदि यही रूझान जारी रहते है, तो ग्रामीण मजदूरी वृद्धि से और भी अनुकूल मुद्रास्फीतिकारी दबाव का कम होना जारी रह सकता है। तिलहनों और दलहनों का घरेलू उत्पादन लक्ष्य से कम हो सकता है किन्तु अत्यधिक आयातों से इस क्षेत्र की मुद्रा स्फीति संबंधी घट बढ़ को कम करने में मदद मिलेगी।

तीसरा घटक मुद्रास्फीति प्रत्याशा से संबंधित है। हाल ही में भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा की गई मुद्रास्फीति प्रत्याशा का घरेलू सर्वेक्षण यह दर्शाता है कि प्रत्याशाएं अटल रूप से स्थायी और वास्तविक मुद्रास्फीति से काफी ऊंचे स्तरों पर रही हैं। किन्तु अत्याधुनिक सर्वेक्षण के अनुसार सभी क्षेत्रो में 7-8 प्रतिशत तक गिरावट आई है (चित्र 1.8)। यदि परिवर्तन का संकेत मिलता है तो मुद्रा स्फीति प्रत्याशाएं अधिक युक्तिसंगत स्तरों, अनुकूल मजदूरी स्तर पर स्थिर हो जाएंगी।

संक्षेप में, वह संरचनात्मक परिवर्तन, जिस पर छमारी आर्थिक विश्लेषण 2014-15 में चर्चा की गई थी, भलीभांति होता दिखाई दे रहा है। उपभोक्ता कीमत मुद्रास्फीति जिसका 2014-15 में मुद्रण 6.5 प्रतिशत होने की संभावना है वह और भी नीचे आ सकता है। वर्ष 2015-16 के लिए हमारा प्राक्कलन उपभोक्ता कीमत सूचकांक मुद्रास्फीति के लिए 5.0 से 5.5 प्रतिशत की सीमा में है और जीडीपी डिफ्लेटर के लिए 2.8-3.0 प्रतिशत की सीमा में है। इसमें जटिलता यह है कि अर्थव्यवस्था मुद्रा स्फीति पर अत्यधिक प्रभाव डालेगी जिससे आगामी आर्थिक नीति सुविधा के लिए मार्ग निर्वाध होगा।

वित्तीय बाजारों के रूझान से यह पता चलता है कि हाल ही के कुछ माहों में जमादरों की क्रमिक सुविधा रही है। क्योंकि 10 वर्षीय सरकारी बांडों पर प्राप्त राशियों में इस अवधि के

चित्र 1.7: ग्रामीण मजदूरी वृद्धि, नवम्बर 2005 से नवम्बर 2014 (प्रतिशत)

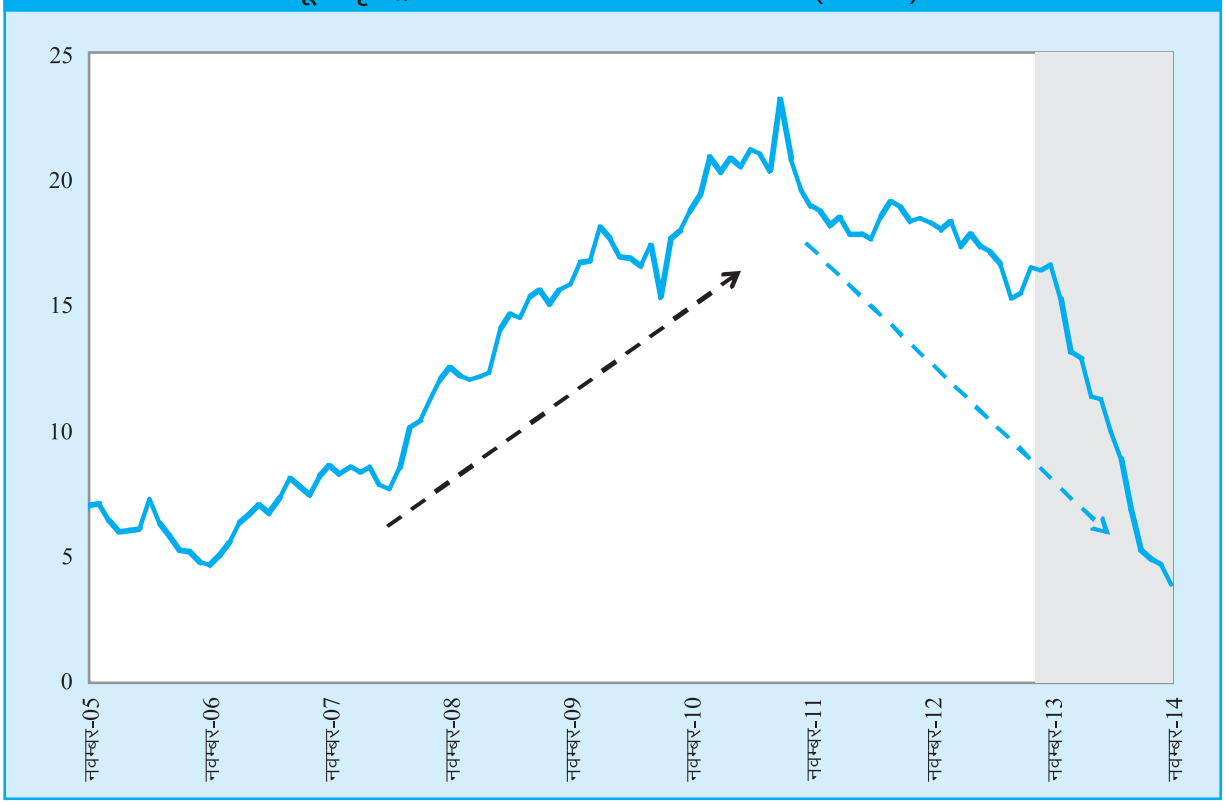

स्रोत : श्रम ब्यूरो

[7] तिलहन तथा दलहनों का घरेलू उत्पादन लक्ष्य से कम रहने की संभावना है, परंतु अधिक आयात करने से स्फीतिकारी दबाव को कम करने में मदद मिल सकेगी।

चित्र 1.8: परिवार मुद्रास्फीति प्रत्याशा सितम्बर 2008 से दिसम्बर 2014 (प्रतिशत)

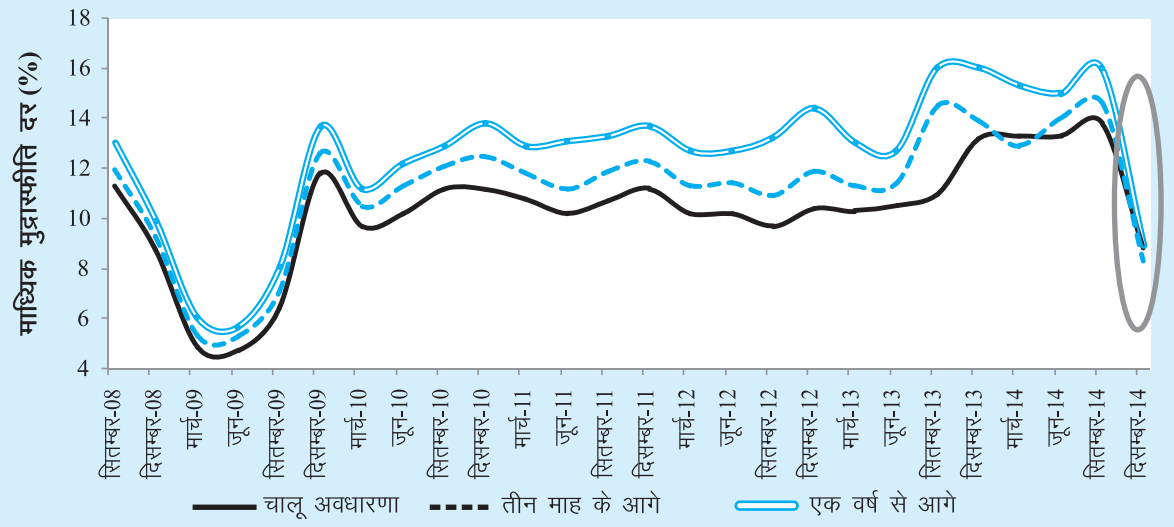

स्रोत : भारतीय रिजर्व बैंक

दौरान निस्तर गिरावट रही है। (चित्र 1.9)। ये घटती हुई प्राप्तियां आगामी माहों में बैंकों द्वारा उधार दरों में कमी का संकेत दे सकती हैं।

मुद्रास्फीति संबंधी स्थितियों को आसान करने से भारतीय रिजर्व बैंक ने आर्थिक नीति में परिवर्तन का पहले ही संकेत दे दिया था जब 2015 में इसने पॉलिसी रेपो रेट मे 25 आधार अंक को 7.95 प्रतिशत तक किया थां एक प्रकार से भावी मौद्रिक नीति को आसान बनाकर पॉलिसी दर को बाजार दरों के अनुसार किया जा सकता है।

नकदी स्थितियां वर्ष 2014-15 तक सामान्य रूप से संतुलित रही हैं। संशोधित नकदी प्रबंधन फ्रेमवर्क के कार्यान्वयन से ओवर नाइट इंटर बैंक सेगमेंट में परिवर्तन-शीलता कम करने और कॉल दर को पॉलिसी दर के समकक्ष बेहतर बनाने में मदद मिली है। वित्तीय घाटे के नियंत्रण में रहने और नई नकदी प्रबंधन फ्रेमवर्क के यथा स्थान रहने से नकदी स्थितियों के वर्ष 2015-16 में अनुकूल रहने की संभावना है।

1.4 बाहय क्षेत्र (सेक्टर)

उक्त दृष्टिकोण चालू लेखा और इसके वित्त पोषण के लिए अनुकूल है। विदेशी पूंजी की कमी अपेक्षा संभावित अधिकता से विनिमय दर प्रबंधन जटिल होगा। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका (यू॰एस॰) की आर्थिक नीति में परिवर्तन से उत्पन्न जोखिमों और यूरोजोन में होने वाले उतार चढ़ावों पर निगरानी रखना आवश्यक होता है किन्तु यह नियंत्रण में होना चाहिए।

बाह्य क्षेत्र के लिए दृष्टिकोण शायद 2008 के वैश्विक वित्तीय संकट से और विशेषत: वर्ष 2012-13 की तुलना में सर्वाधिक अनुकूल रहा है जब उच्च गुणवत्ता का तेल और स्वर्ण आयातों से मौजूदा लेखा घाटे में पूर्ति हुई है कच्चे पेट्रोलियम वैश्विक कीमतों का औसत जनवरी 2015 में लगभग 47 अमेरिका डालर प्रति बैरल और अप्रैल 2014 से जनवरी 2015 तक) संपूर्ण वर्ष के लिए 90 अमेरिकी डालर प्रति बैरल था। कच्चे तेल और अन्य उत्पादों के औसत वार्षिक मूल्य में और भी अनुकूलता मानते हुए चालू लेखाघाटा को वर्ष 2014-15 के लिए जीडीपी का लगभग 1.3 प्रतिशत और वर्ष 2015-16 में जीडीपी का 1.0 प्रतिशत से कम आकलित किया गया है।

यह व्यावहारिक है कि तेल की कीमत में 10 अमेरिकी डालर की कमी से निवल व्यापार को सुधारने में मदद मिली है और इसी लिए चालू लेखा शेष 9.4 बिलियन अमेरिकी डालर तक हुआ है। अनुकूलित स्वर्ण आयातों से भी चालू घाटे को प्रबंध योग्य बनाए रखने में मदद मिलेगी। नवबंर में सोने पर प्रतिबंधों को दूर करने से स्वर्ण आयात वर्ष 2013 में देखे गए उच्च गुणवत्ता स्तरों से काफी नीचे आ गए है घटती हुई अन्तरराष्ट्रीय कीमतों और मुद्रा स्फीति को अनुकूल करने का यह प्रभाव पड़ा है कि स्वर्ण आयातों का औसत दिसंबर 2014 में 1.3 बिलियन अमेरिकी डालर और वर्ष 2015 के जनवरी माह में 1.6 बिलियन अमेरिकी डालर था जो अक्टूबर 2014 में 4.2 बिलियन अमेरिकी डालर, और नवम्बर 2014 में 5.6 बिलियन अमेरीकी डालर था।

चित्र 1.9: बाण्ड प्राप्तियाँ, जुलाई 2014 से फरवरी 2015 (प्रतिशत)

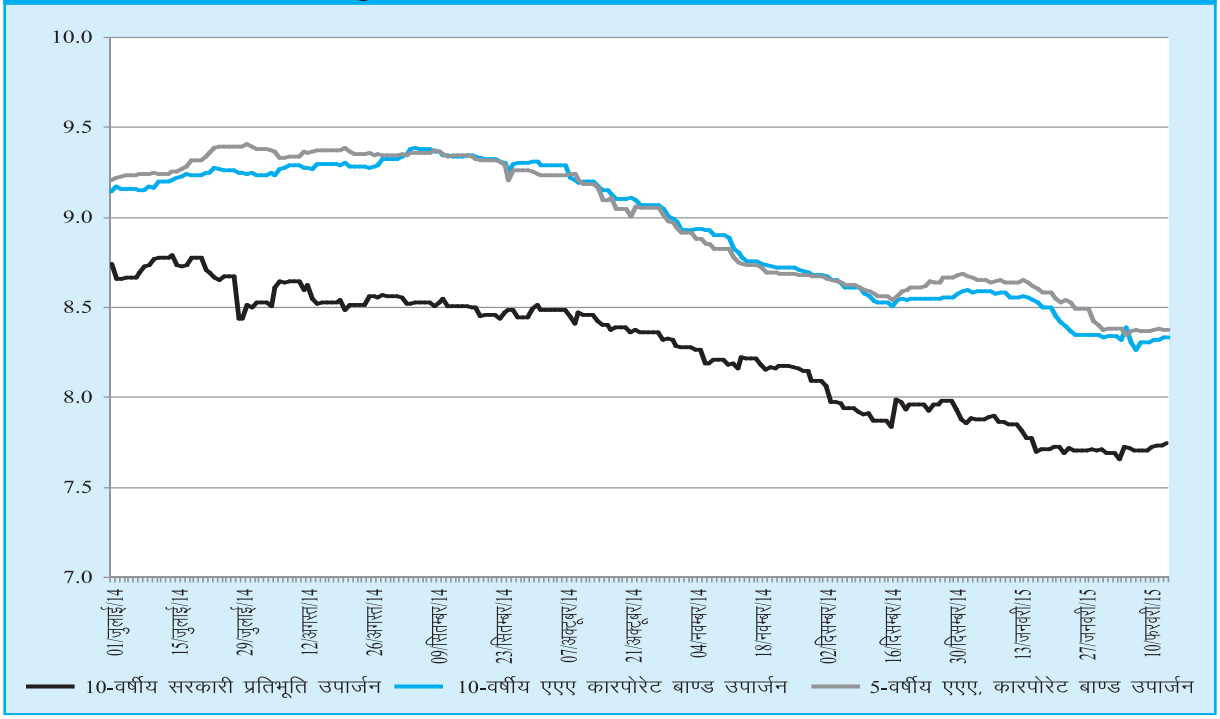

स्रोत : भारतीय रिजर्व बैंक

बाह्य वित्त पोषण के लिए दृष्टिकोण संगत रूप से अनुकूल है और कमी के बजाय उतार चढ़ाव अपेक्षाकृत अत्यधिक चुनौती का सामना कर सकता है। वर्ष 2014.15 में वित्तीय प्रवाह 5.5 बिलियन अमेरिकी डालर से अधिक होने की संभावना है जिसके कारण जमा राशि 26 बिलियन अमेरिकी डालर से बढ़कर लगभग 340 बिलियन अमेरिकी डालर तक हो जाएगी।

इसे व्यापक भारतीय रिजर्व बैंक विनिमय बाजार दखल द्वारा सुविधाजनक बना दिया गया है। यह अन्तर्वाह (प्राप्तियों) के वर्ष 2015-16 के अधिकांश भाग तक बने रहने की संभावना है। एक प्रमुख जटिलता यह है कि यदि चालू लेखा घाटा कम होता है तो पूंजी प्राप्तियां निर्धारित स्तर से रुपए पर अत्यधिक ऊर्ध्वगामी दबाव पड़ेगा।

चिन्ता का एक कारण अवमंदित निर्यात और बढ़ते हुए गैर-तेल, गैर-स्वर्ण आयात है। जिस पर भारत की ह्रासकारी प्रतिस्पर्धात्मकता का प्रभाव पड़ सकता है जो जनवरी 2014 तक वास्तविक प्रभावी विनिमय दर के 8.5 प्रतिशत वृद्धि में परिलक्षित होती है। यहां रोचक तथ्य यह है कि व्यापार भागीदारों के सापेक्षिक भारत में उच्चतर मुद्रास्फीति का योगदान केवल 2.3 प्रतिशत प्वाइंट ही है और शेष 6.2 प्रतिशत प्वाइंट रुपए के खाते में जोड़ा जाता है जो अन्यच मुद्राओं की तुलना में मामूली स्तर तक मजबूती प्रदान करता है। दूसरे शब्दों में स्पॉट और अग्रवर्ती बाजार दोनों में भारतीय रिजर्व बैंक का दखल होते हुए भी परिवर्तन-शील पूंजी प्राप्तियों में थोक ह्रासकारी प्रतिस्पर्धात्मकता का लेखा जोखा होता है।

इन वित्तीय प्राप्तियों के लाभों का निर्यात पर उनके प्रभाव चालू लेखा का समाधान करना आगे बढ़ने की दिशा में एक महत्वपूर्ण चुनौती रही है दूसरे शब्दों में भारतीय रिजर्व बैंक पूंजी लेखा के खुलेपन और परिवर्तनशील प्राप्तियों, आर्थिक नीति स्वतंत्रता और अर्थव्यवस्था की प्रतिस्पर्धात्मकता का समाधान करने के लिए संघर्ष करने में स्थूल आर्थिक दुविधा में महत्वपूर्ण भूमिका होगी।

निम्नलिखित चार घटक बाह्य स्थिति पर प्रभाव डालते हैं:

- *यू॰एस॰ फेडरल रिजर्व मॉनेटरी टाइटेनिंग के प्रत्युत्तर में नवीनीकृत वित्तीय बाजार परिवर्तनशीलता जिसकी इस वर्ष के बाद प्रत्याशा की जाती है।*
- *यूरोजोन की व्यवहार्यता ग्रीक एक्जिट के परिणामस्वरूप प्रश्न उठाए जाने पर संभावित हलचल।*
- *भू-राजनैतिक गतिविधियों से संबद्ध तेल कीमतों में स्पाइक।*
- *धारे-धीरे ह्रास होता हुआ अंतर्राष्ट्रीय व्यापार पर्यावरण। फेड और यूरोजोन से उत्पन्न जोखिमों पर दो बिन्दुओं का महत्व नगण्य होता है।*

चित्र 1.10: विदेशी मुद्रा भंडार फरवरी 2013 से जनवरी 2015 (बिलियन अमरीकी डालर)

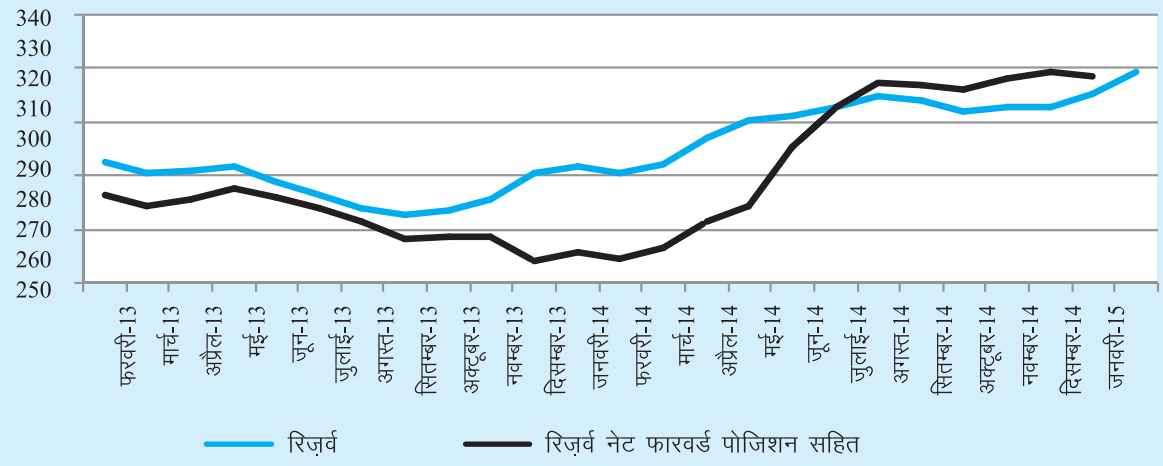

स्रोत : भारतीय रिजर्व बैंक

पहला प्वाइंट यह है कि भारत पराजेय हो सकता है क्योंकि मार्च 2014 तक विदेशी मुद्रा प्रवाह का पर्याप्त भाग हित संवेदी है, कुल पोर्टफोलियो संचित प्रवाह (38.4 बिलियन अमेरिकी डालर) का लगभग 23.8 बिलियन अमेरिकी डालर पोर्टफोलियो ऋण प्रवाह रहे हैं। सरकारी और कारपोरेट बांडों पर प्राप्तियों में गिरावट जो चित्र 1.9 में दर्शाई गई है, से ये प्रवाह परिलक्षित होते हैं। फंड टाइटेनिंग के कारण इनमें से कुछ प्राप्तियों का प्रत्यावर्तन हो सकता है जिससे रुपए पर अधोगामी दबाव पड़ेगा। तथापि भारत इस समय वर्ष 2014 या वर्ष 2013 की अपेक्षा अधिक लचीला है क्योंकि भारत में आरक्षित निधि की मात्रा अधिक है किन्तु अनुकूल स्थूल आर्थिक स्थिति के कारण अधिक महत्वपूर्ण है। यद्यपि आत्म संतोष कभी प्रमाणित नहीं होता है फिर भी अत्यधिक चिंता का भी डटकर मुकाबला करना चाहिए। आमतौर पर, शायद व्यापार चुनौती ही चिन्ता का बड़ा कारण है (कृपया नीचे दिए गए खंड I-11 को देखें)

बाह्य क्षेत्र में एक और मुद्दा भू-सामरिक महत्व (ज्यो स्ट्रेटिजिक) है। यदि आज के निरंतर बढ़ते हुए अंत:निर्भर आर्थिक वातावरण में ताकत के बल पर शक्ति का प्रयोग किया जाता है तो विदेशी मुद्रा भंडार के संचय से हार्ड और

चित्र 1.11: सांकेतिक तथा वास्तविक प्रभावी विनिमय दर-निर्यात-आधारित सूचकांक जुलाई 2013 से जनवरी 2015

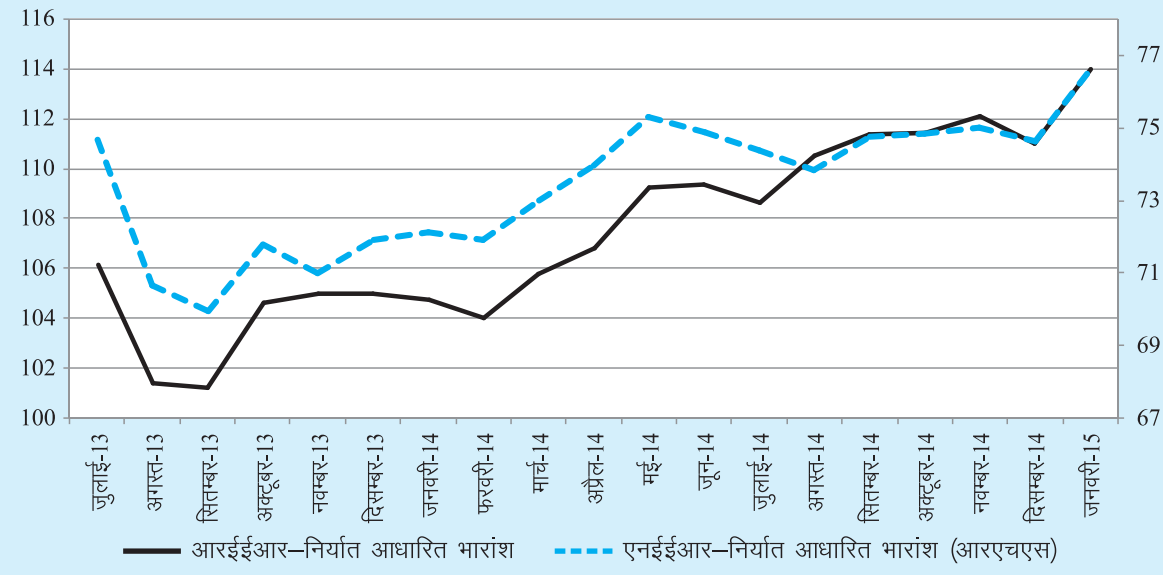

स्रोत : भारतीय रिजर्व बैंक

सॉफ्ट पावर अर्जित की जा सकती है। चीन का प्रचुर मुद्रा भंडार इस तथ्य को दर्शाता है। विदेशी मुद्रा भंडार इन समस्याओं को दूर करता है और आर्थिक तथा वित्तीय लचीलापन लाता है। उधारदाता के रूप में वस्तुत: आज चीन वित्तीय संकट का सामना कर रही सरकारों के लिए एक अंतिम साधन बन गया है। यह द्विपक्षीय और बहुपक्षीय रूप से विकास सहायता के एक बड़े प्रदाता के रूप में बन गया है। चीन अपने आप में सनातनी और बहुविधिक रूप से अपनी आरक्षित निधि के कारण अंतर्राष्ट्रीय मौद्रिक निधि और विश्व बैंक दोनों की भूमिका निभा रहा है। इस समय आरक्षित निधि का अर्जन लागत रहित नहीं है क्योंकि इसके लिए वाणिज्यिक नीति और वित्तीय तथा विनिमय बाजार के परिणामी विकृति की नीति अपेक्षित होती है। किन्तु इसके लिए लागत लाभ विश्लेषण की आवश्यकता है। भारत के उभरते हुए आर्थिक और राजनैतिक शक्ति के रूप में इस प्रश्न पर विचार किया जाना चाहिए कि इसे भी अपनी आरक्षित निधि में पर्याप्त वृद्धि करनी चाहिए। अधिमानत: क्रमिक संचयी चालू लेखा आधिक्य के माध्यम से प्राप्त अपनी निधि यों को दीर्घकाल में 750 बिलियन अमेरिकन डालर–1 ट्रिलियन का लक्ष्य रखकर इस आरक्षित निधि में वृद्धि की जाए।

1.5 कृषि

खरीफ फसल (जुलाई–सितम्बर 2014) का पहला अग्रिम आकलन पिछले वर्ष की तुलना में कम उत्पादन दर्शाता है। तथापि, इस आकलन को सामान्यत: ऊर्ध्वगामी दिशा में संशोधित किया जाता है। हाल ही में, आर्थिक और सांख्यिकीय निदेशालय द्वारा जारी रबी की फसलों के आंकड़ों से पता चलता है कि कुल क्षेत्र में कमी आयी है किन्तु गेहूं की फसल के क्षेत्र में 2.9 प्रतिशत तक की कमी आई है। अन्यथा वर्ष 2014–15 के लिए सीएसओ ने कम वर्षा के बावजूद जो दीर्घकालिक औसत का केवल 88% ही था और 2013–14 में यह अत्यधिक था, कृषि के लिए 1.1 प्रतिशत की सकारात्मक वृद्धि दर का आकलन किया है। सीएसओ का आकलन मूल्य वर्धित है जबकि कृषि उत्पादन आंकड़े मात्रा पर आधारित होते हैं। इसलिए सकारात्मक कृषि जीडीपी वृद्धि मात्रा में कमी के संगत नहीं है क्योंकि इनपुट लागतें तेजी से बढ़ जाती हैं। किन्तु शायद कृषि में तीव्र परिवर्तन हो सकता है जिसके कारण इस क्षेत्र में अत्यधिक ध्यान दिया जाना आवश्यक है। कृषि की दिशा में व्यापार संदर्भ में दशक का दीर्घ परिवर्तन का अन्त हो गया है क्योंकि कृषि मूल्य चरम सीमा पर पहुंच गए हैं इसको चित्र 1.12 में दर्शाया गया है जो दो भिन्न माध्यमों के अनुसार कृषि के लिए व्यापार के संदर्भों की रूपरेखा प्रस्तुत करता है। दोनों ही अनेक वर्षों के सुधार[8] के बाद वर्ष 2000 से 2011 से आगे धीमी गिरावट दर्शाते हैं।

कृषि इनपुट, अंतिम खपत और पूंजीगत निवेश के लिए प्रदत्त कीमत का सूचकांक जैसे ही व्यापार के संदर्भ में कमी आती है और ग्रामीण आय पर दबाव पड़ता है। (चित्र 1.7 भी देखें), सहायता के लिए राजनैतिक दबाव में वृद्धि होगी। तिलहन और दलहनों जैसे अनेक क्षेत्रों में टैरिफ में वृद्धि करने और चीनी सेक्टर में निर्यात संबंधी इमदाद देने के प्रस्ताव पहले ही दिए जा चुके हैं।

निकट भविष्य में कृषि में विद्यमान कमी को दूर करने के लिए लक्षित सहायता देने पर विचार करना चाहिए। एमजीएनआरईजीए कार्यक्रम युक्तिसंगत रूप से इस लक्ष्य को पूरा करता है। यहां इस कार्यक्रम को लागू करना और इसका प्रयोग ग्रामीण सड़कों, लघु सिंचाई और जल प्रबंधन जैसी परिसम्पत्तियों के सृजन के लिए करना ग्रामीण आमदनियों को बढ़ाना एक चुनौती पूर्ण कार्य है।

आमतौर पर, कृषि में इन चुनौतियों के अधिक से अधिक प्रतिक्रिया और यह सुनिश्चित करने के लिए उपयुक्त समय है कि कृषि में निरन्तर आधार पर लगभग 4 प्रतिशत वृद्धि हो।

एक ज्वलंत समस्या यह है कि कृषि बाजार कितने बिखरे हुए और विकृत हैं। (इस खंड का अध्याय 8 देखें। जिसमें संभव समाधान भी हैं) भारत के हमारे कृषि उत्पाद बाजार समितियां (एवीएमसी) बनाकर कृषि संबंधी आवश्यक वस्तुओं के

---

[8] व्यापार संदर्भों के सूचकांक प्रोफेसर एस. महेन्द्रदेव की अध्यक्षता में मई 2012 में समूह (डब्ल्यू जी) द्वारा अपनाए गए निम्नलिखित फार्मूले पर आधारित हैं।

(1) व्यापार संदर्भों का सूचकांक =

$$\frac{\text{कृषि उत्पादों के लिए प्राप्त कीमत का सूचकांक}}{\text{कृषि इनपुट, अंतिम खपत और पूंजीगत निवेश के लिए प्रदत्त कीमत का सूचकांक}} \times 100$$

(2) व्यापार संदर्भों का सूचकांक =

$$\frac{\text{कृषि उत्पादों और कृषि मजदूरी के लिए संशोधित कीमत का सूचकांक}}{\text{कृषि इनपुट, अंतिम खपत और पूंजीगत निवेश के लिए प्रदत्त कीमत का सूचकांक}} \times 100$$

चित्र 1.12: विभिन्न सेक्टरों के मध्य व्यापार शर्तों का सूचकांक/ 2004-05 से 2013-14

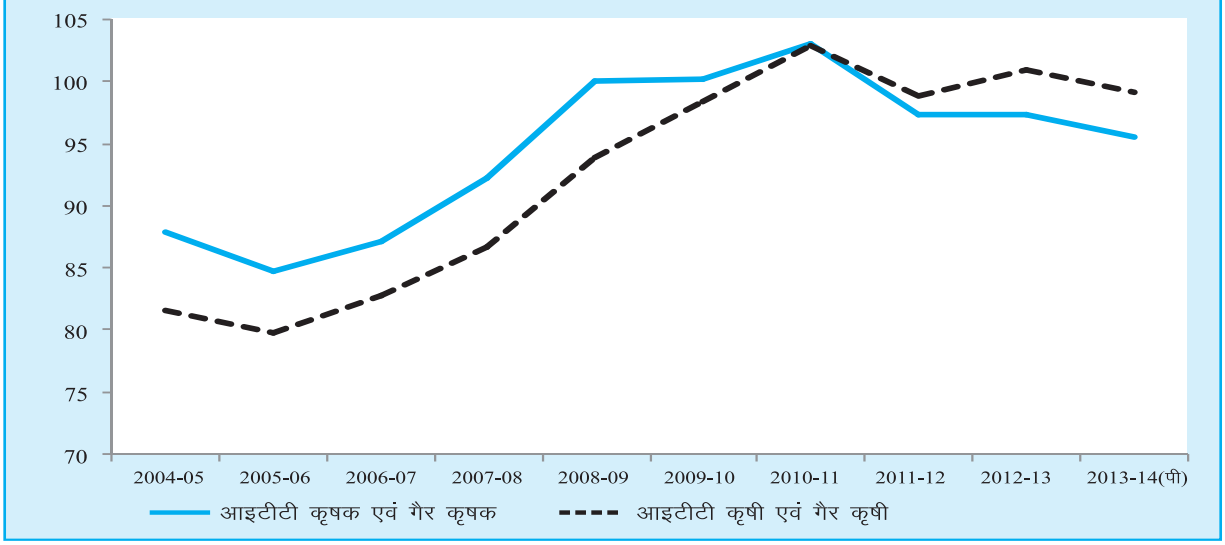

स्रोत : फुटनोट 8 का संदर्भ करें।

लिए एक आम बाजार होना आवश्यक है और यह कृषकों को अपने उत्पाद बेचने के लिए उपलब्ध अनेक विकल्पों में से एक है।

सीधे अंतरणों के माध्यम से आर्थिक सहायता को सरल और कारगर बनाना तथा हिताधिकारियों को बेहतर लक्षित करना सार्वजनिक निवेश के लिए संसाधनों का एक भाग हुआ जो अनुसंधान, शिक्षा, विस्तार, सिंचाई, जल प्रबंधन, मृदा परीक्षण, भांडागार तथा कोल्ड स्टोरेज में आवश्यक है। विविध नीतियों से होने वाली विकृतियों, जिसमें बिजली और पानी के प्रयोक्ता प्रभारों को छोड़ना भी शामिल है, को बेहतर लक्षित प्रक्रिया लीकेज के माध्यम से कम किए जाने की आवश्यकता है।

शान्ता कुमार समिति की सिफारिशों में खाद्यनीति के भावी रोड मैप के लिए उपयोगी सुझाव हैं। भारतीय खाद्य निगम के कार्य संचालन को पर्याप्त रूप से सुधारे जाने की आवश्यकता है।

राज्यों के अंदर कृषि उपजों में अत्यधिक भिन्नता है। यहां तक सर्वोत्तम राज्यों में भी विश्व के सर्वोत्तम राज्यों की तुलना में विभिन्न फसलों में काफी कम पैदावार है। यह नीचे दी हुई तालिका 1.1 से प्रमाणित किया जा सकता है।

फसली क्षेत्र का एक बड़ा भाग (लगभग 41%) अभी भी असिंचित है। सिंचाई की सुविधा प्रदान करके उपज को पर्याप्त रूप से बढ़ाया जा सकता है। निम्नलिखित उत्पादन कार्य में परिवर्तन के लिए मूल्य अनुसंधान में निवेश आवश्यक होगा। यह जलवायु संबंधी जोन के अन्तर्गत यथा-संभव सीमा तक उपज अंतराल को कम करके उत्पादन में वृद्धि करने के प्रचुर अवसर प्रदान करता है।

संस्थागत रूप से भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर) की भूमिका, इसके राज्य कृषि विश्वविद्यालयों और प्रत्येक संस्थान (भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान अथवा राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान) के साथ संबंधों का पुन: निर्धारण करने के लिए यह समय उपयुक्त हो सकता है और अनुसंधान शिक्षा तथा विस्तार को अलग किया जाना चाहिए।

कृषकों के लिए कार्यक्रम अग्रिम कीमत जानकारी प्रदान करने के लिए और उन्हें कीमत जोखिमों से बचने में समर्थ करने के लिए वायदा बाजार आयोग (फारवर्ड मार्केट कमीशन), को सशक्त किया जा रहा है। यह चिन्ता कि इसमें अनावश्यक प्रयास हो सकता है, इसका निवारण वित्तीय क्षेत्र विधायी सुधार आयोग (एफएसएलसी) द्वारा की गई सिफारिशों के दिशानिर्देशों के साथ प्रभावी विनियम के माध्यम से किया जाना चाहिए।

1.6 वृद्धि-आर्थिक नीति की चुनौतियां

भारत वित्तीय अनुशासन बनाए रखने की आवश्यकता के अनुसार वृद्धि (ग्रोथ) को पुर्नजीवित करने के लिए बढ़े हुए सार्वजनिक निवेश की अल्पकालिक अनिवार्यता को संतुलित कर सकता है। आगामी बजट में और मध्यावधि बजट दोनों में निवेश के उपभोग से व्यय नियंत्रण और व्यय अन्तरण (स्विचिंग) महत्वपूर्ण होगा।

तालिका 1.1 फसल उपज की तुलना भारत बनाम विश्व

फसल	भारत का सबसे अधिक उपज वाले राज्य	विश्व के सबसे अधिक उपज वाले देश
धान	पंजाब-3952	चीन-6661
गेहूं	पंजाब-5017	यूनाइटेड किंगडम-7306
मक्का	तमिलनाडु-5372	यूएस.ए-8858
चिक पी	आन्ध्र प्रदेश-1439	इथोपिया-1663
कपास	पंजाब-750	आस्ट्रेलिया-1920
अलसी/सरसों	गुजरात-1723	यूके-3588

टिप्पणी : यह आंकड़े उपज/किलोग्राम/हेक्टेयर में है जो 2012 से संबंधित है।

मध्यावधि वित्तीय ढांचा

छमाही आर्थिक विश्लेषण में विस्तार से उल्लिखित वर्ष 2014-15 के बजट के चुनौती पूर्व स्वरूप के होते हुए भी, सरकार जीडीपी के 4.1 प्रतिशत वित्तीय लक्ष्य का अनुशरण करेगी। राजस्व संग्रह और विलंबित विनिवेश में कमियों के बावजूद डीजल और पेट्रोल पर नया उत्पाद शुल्क (लगभग 20,000 करोड़ रुपए की राजस्व प्राप्ति) उत्पाद शुल्क पर आर्थिक-सहायता घटा दी गई है और व्यय तुलना से अनुशासन की प्रतिबद्धता सुनिश्चित होगी।

भारत निजी निवेश में विकास को फिर से बढ़ावा देने के लिए वित्तीय समेकन की अपेक्षाओं तथा सार्वजनिक निवेश में तेजी लाने की आवश्यकता का समाधान कर सकता है बशर्ते कि सही कार्य योजना तैयार की गई हो। लेकिन ऐसा कैसा संभव हो? चूंकि यह नई सरकार का पहला पूर्ण बजट है और विशेषरूप से प्रेस में दिए गए चौदहवें वित्त आयोग की दूरगामी सिफारिशों को ध्यान में रखते हुए तैयार किया गया है। इसलिए उक्त पृष्ठभूमि में और हाल ही के अनुभव से मिले सबक को ध्यान में रखते हुए मध्यावधि ढांचे की संवीक्षा करने और आने वाले वर्षों में लक्ष्य निर्धारित करने के लिए उपयुक्त समय है। (चित्र 1.13)

तीन चरण मौजूदा वित्तीय पूर्ववृत्त को चिह्नित करते हैं। वर्ष 2002-2008 के प्रथम भाग में तीव्र वृद्धि के कारण सभी वित्तीय समष्टियों धन-प्रवाह एवं स्टॉकों में सुधार हुआ किन्तु दूसरे चरण (2009-2012) में अत्यधिक प्रति चक्रीय नीतियों (काउण्टर साइक्लिकल पॉलिसीज़) से संयुक्त, उस चरण की समाप्ति की दिशा में व्यय नियंत्रण, विशेषत: राजस्व व्यय की विफलता के कारण वित्तीय नियंत्रण में हानि हुई। जो वर्ष 2013 के आसन्न संकट में सहायक था। पूंजीगत व्यय में आकस्मिकता कम और अवरोधकारी रही है। तीसरे चरण (2013 से अब तक) में वित्तीय स्थिरता थोड़ी सी बहाल हो गई है। इस पूर्ववृत्त से निम्नलिखित कार्य नीति का सुझाव मिलता है।

प्रथमत: आमतौर पर, भारत को अपना जीडीपी का 3% मध्यावधि लक्ष्य पूरा करना चाहिए। इससे भावी स्टॉकों को सुनिश्चित करने के लिए ओर इसके उभरते हुए बाजार पीयर्स के वित्तीय निष्पादन के पास पहुंचने के लिए वित्तीय साधन प्राप्त होगा। इससे मौजूदा वर्षों के ट्रेजेक्टरी को भी बदला जा सकता है और राजस्व घाटों को दूर करने के लिए सर्वोत्तम नियम की प्राप्ति हो सकती है। और इससे सुनिश्चित हो सकता है कि उक्त चक्रानुक्रम में उधार लेना एकमात्र पूंजी निर्माण का साधन है।

दूसरी बात यह है कि इन लक्ष्यों की प्राप्ति का तरीका व्यय नियंत्रण और उपभोग से निवेश में व्यय परिवर्तन होगा। इसके अतिरिक्त अन्तिम दशक में पूंजीगत व्यय में दीर्घकालिक गिरावट आने के कारण भारत की दीर्घकालिक विकास (ग्रोथ) संभावनाओं को क्षति पहुंची है। वर्ष 2016-17 से जैसे ही विकास को गति मिलेगी और जीएसटी लागू होगा वैसे ही कर उत्प्लावकता को व्यय से जोड़ा जाएगा तो यह सुनिश्चित होगा कि मध्यावधि लक्ष्यों को आसानी से प्राप्त किया जा सकेगा। यह उत्प्लावकता पूर्ववृत्त से आश्वस्त होती है क्योंकि अन्तिम दशक में वृद्धि (ग्रोथ) में उतार-चढ़ाव के दौरान समग्र कर-जीडीपी अनुपात बाहरी कर सुधार के बिना वर्ष 2003-04 में 9.2 से लगभग 9.7 प्रतिशत तक और 2007-08 में 11.9% तक वृद्धि हुई है।

तीसरी बात यह है कि अनुशासन के प्रति मध्यावधि प्रतिबद्धता को कार्रवाईयों के स्वीकृति स्थगन में परिवर्तित नहीं किया जा सकता है। आगामी वर्ष में वित्तीय समेकन जारी रहना चाहिए। तथापि, त्वरित वित्तीय समेकन की आवश्यकता कम हुई है क्योंकि मुद्रास्फीति में अत्यधिक गिरावट और चालू लेखा कमी में परिवर्तन से स्थूल आर्थिक दबाव काफी मात्रा में कम हुआ है। इन परिस्थितियों में, विशेषत: अर्थव्यवस्था के उतार-चढ़ाव के बजाय पुन: बहाल

चित्र 1.13: हालिया राजकोषीय अनुभव 2002-03 से 2014-15 (स.घ.उ. का प्रतिशत)

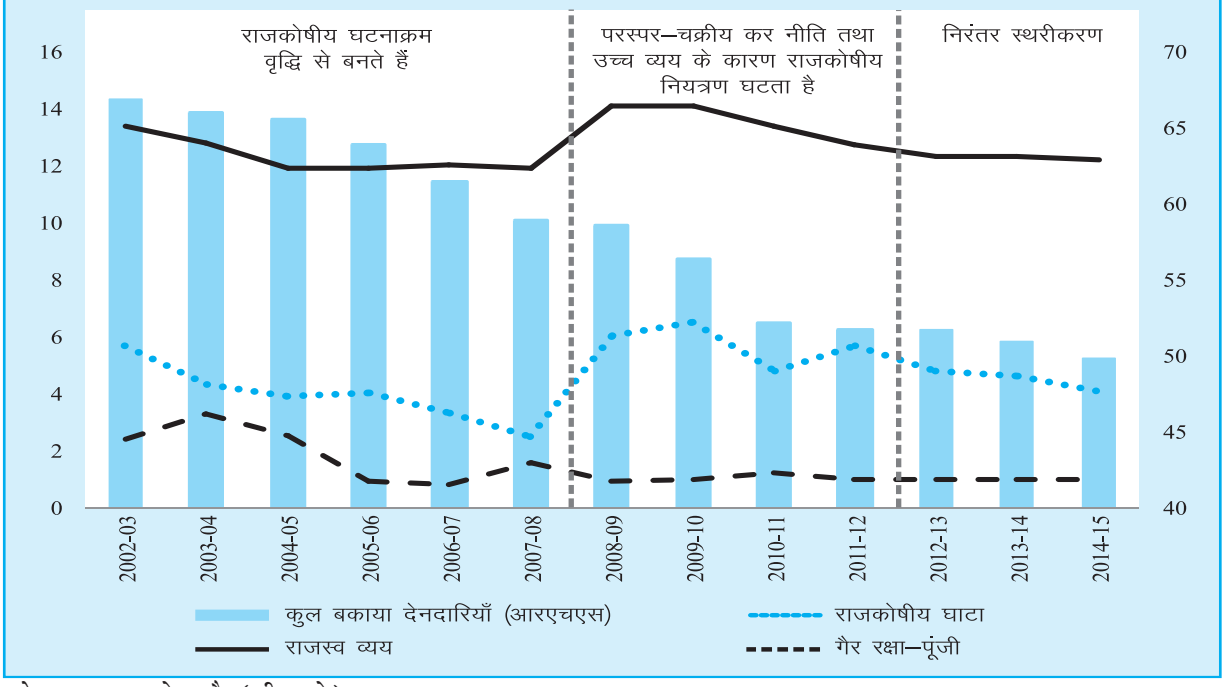

स्रोत : बजट दस्तावेज और (सीएसओ)।

टिप्पणी: वर्ष 2013-14 और 2014-15 के लिए आंकड़ों को क्रमशः संशोधित किया जाता है और बजट को आकलित किया जाता है।

होने पर प्रो-साइक्लिकल नीति इष्टतम से कम होती है।

ऋण संबंधी सिद्धांत अग्रगामी रूप में अनुकूल रहते हैं। जिसके कारण सार्वजनिक क्षेत्र के तुलनपत्र का तीव्र सशक्तीकरण सुनिश्चित होता है। इसके अतिरिक्त त्वरित वित्तीय समेकन को चौदहवें वित्त आयोग की सिफारिशों को लागू करने, केंद्रीय बिक्री कर में कटौती करने के लिए राज्य प्रतिपूर्ति बाध्यताओं को निपटाने और सार्वजनिक निवेश में वृद्धि करने की आवश्यकता जैसे अनेक नए और अपरिहार्य घटकों द्वारा आगामी वित्त वर्ष में प्रतिबंधित करना है।

अन्यथा वित्तीय विश्वसनीयता और मध्यावधि लक्ष्यों की संगतता सुनिश्चित करने के लिए आगामी बजट से वित्तीय और राजस्व घाटों दोनों में कमी करने के लिए व्यय नियंत्रण की प्रक्रिया प्रारंभ होगी। इसके साथ-साथ व्यय की गुणवत्ता को निवेश के लिए आर्थिक मदद में कमी करके खपत से परिवर्तित करना अनावश्यक होता है। मोटे तौर पर कहा जा सकता है कि अतिरिक्त अवसर प्रदान किए गए हैं जिनमें आर्थिक सहायता में कटौती करना और उस पर विनिवेश को आगे बढ़ाना शामिल है, उनमें सार्वजनिक निवेश किया जाना चाहिए।

पेट्रोलियम उत्पादों पर उत्पाद कर वृद्धिओं से उत्पन्न कर जीडीपी अनुपात से लघु और मध्यावधि वित्तीय लक्ष्य प्राप्त करने में सहायता मिलेगी।

1.7 हर व्यक्ति का दुख दूर करना: जनधन, आधार, मोबाइल संख्या त्रयी समाधान

यह डिबेट इस बारे में नहीं है कि क्या गरीब और दुर्बल व्यक्तियों को नियत सरकारी सहायता प्रदान की जाए बल्कि इस बारे में है कि उनको यह सुविधा कैसे प्रदान की जाए। जेएएम नं. त्रयी-जनधन आधार, मोबाइल संख्या पर आधारित नकदी आधारित अंतरण स्कीम प्रभावी तौरपर लक्षित संसाधनों को उन व्यक्तियों को प्रदान करने की संभावनाएं प्रदान करती है जिनको इन संसाधानों की सर्वाधिक आवश्यकता है। उस क्षेत्र की सफलता से कीमतों में उदारीकरण आएगा जिससे वे आवंटित संसाधनों के बल पर अपनी भूमिका को प्रभावी ढंग से निभा पाएंगे और दीर्घकालिक विकास को नई उचाइयां प्रदान करेंगे।

स्वाधीनता के 68 साल बाद गरीबी भारत की सर्वाधिक दबावकारी समस्याएं बनी हुई है। कोई भी देश तब तक महान नहीं हो सकता है जब तक कि उस देश में उसके बहुत से नागरिकों के जीवन से जुड़े अबसर खराब पोषण द्वरा निराशाजनक हो और वहां शिक्षा के अवसर उत्तम कोटि के न हों और लिंग भेद मौजूद हो (जिस पर भाग 13 में चर्चा की गई है)। शिक्षा रिपोर्ट का मौजूदा वार्षिक सर्वेक्षण जो पिछले दशकों से शिक्षा पर गतिरोध दर्शाता है संतुलित रीडिंग

के लिए किया गया है (खंड 2, अध्याय 9 में बाक्स देखें)।

अर्थिक वृद्धि गरीबो के लिए उत्तम होती है क्योंकि इससे आय में वृद्धि होती है और यह लोक सेवाओं तथा सामाजिक सुरक्षा तंत्र में निवेश के लिए राज्य संसाधन प्रदान करती है जिनकी गरीबों को आवश्यकता होती है। वृद्धि, संभावनाएं और अवसर जो वृद्धि से आते है उनसे व्यक्ति अपनी निजी मानव पूंजी में निवेश करने के लिए प्रोत्साहित होते हैं। मौजूदा अध्ययन में यह चौंकाने वाला तथ्य सामने आया है कि बंगलौर से बाहर स्थित गांवों में रहने वाले परिवारों को केवल यह सूचना देने से कि कॉलसेंटर शिक्षित महिलाओं को रोजगार प्रदान कर रहे है, उन गावों की किशोर बालिकाओं की स्कूली शिक्षा प्राप्त करने की संभावनाओं में वृद्धि हो गई है।

तथापि इस वृद्धि को राज्य द्वारा प्रदत्त ऐसे प्रभावी कायक्रमों से पूरा किया जाना चाहिए जिनसे समाज के सबसे कमजोर वर्ग के लोगों का जीवन स्तर ऊंचा होता है। इसमें सफल होने के लिए गरीबी निरोधी कार्यक्रमों को अवश्य मान्यता दी जानी चाहिए जो नीतियों को व्यक्तियों और फर्मों के अनुरूप प्रोत्साहित कर सकें और राज्य की सीमित कार्यान्वयन ने क्षमता को स्वीकार करे ताकि निर्धनों को लक्षित करने और लोक सेवा प्रदान की जा सके।

केन्द्र सरकार और राज्य सरकार दोनों ही विभिन्न उत्पादों पर आर्थिक सहायता देते है जिसका अभिव्यक्त उद्देश्य गरीबों को इन उत्पादों को पहंचाना है। चावल गेहूं, दाले, चीनी, मिट्टी का तेल, एलपीजी, नैप्था, पानी, बिजली, उर्वरक, लौह अयस्क रेलवे आदि ऐसे उत्पाद और सेवाएं जिन पर सरकार आर्थिक सहायता देती है इन (चयनित) आर्थिक सहायता कि आंकलित प्रत्यक्ष वित्तीय लागत लगभग 378000 करोड़ रुपए अथवा जीडीपी का लगभग 4.2 प्रतिशत है। मोटे तौर पर आय वितरण के 35 वें पर सेन्टाइल पर मौजूद परिवारों में से प्रत्येक परिवार के व्यय को बढ़ाने के लिए इसका कितना महत्व होगा। (जो 21.9 प्रतिशत की गरीबी रेखा से काफी ऊपर है। नीचे तालिका 1.2 में इन आर्थिक सहायता की लागत और इनसे लाभान्वित व्यक्तियों का निर्देशात्मक आंकलन है।

नि:संदेश मूल्यों में आर्थिक सहायता (इमदाद) से सहायता मिलती है किंतु इसका गरीब लोगों की आर्थिक स्थिति पर कई रूपांन्तरकारी प्रभाव नहीं होता। बहुत सी इमदादों का केवल कुछ ही भाग, गरीब लोगों तक पहुंच पाता है। उदाहरण के लिए विद्युत इमदादी लाभ मुख्य रूप से (अपेक्षाकृत अमीर लोंगों) 67.2 प्रतिशत परिवारों तक ही मिलता है। जल के लिए आबंटित की जाने वाली अधिकांश आर्थिक सहायता निजी नलों को इमदाद पर व्यय हो जाता है जबकि गरीब परिवार सार्वजजनिक नलों से जल प्राप्त करते है।

इसके अलावा आर्थिक सहायता का कार्यान्वयन जटिल हो सकता है। उर्वरकों के मामले में ये फर्म-विशिष्ट तथा आयात-प्रेषण विशिष्ट होते हैं इनमें उर्वरक के प्रकार के आध ार पर अंतर होता है और कुछ निर्धारित मात्रा आधार पर होते हैं जबकि कई अन्य परिवर्तनीय होते हैं।

ये आर्थिक सहायता स्वत-स्थायीकरण के निर्दयी तर्क के कारण अतिसंवेदी होती हैं। चीनी के मामले में गन्ना उत्पादकों को संरक्षित करने के लिए उच्चय समर्थन मूल्य दिए जाते हैं; मिल मालिकों पर इस कर की कमी को पूरा करने के लिए इनको आर्थिक सहायता ऋण और निर्यात इमदाद के माध्यम से समर्थन दिया जाता है; और तब उप-उत्पाद के रूप में उत्पन्न शीरे की बिक्री रोक लगा कर पुन: (महसूल) कर लगा दिया जाता है।

विभिन्न प्रकार की इमदाद गरीबों को कष्ट पहुंचाती है। उदाहरण के लिए उर्वरक निर्माताओं को दुर्गम क्षेत्रों में अपने उत्पाद बेचने के लिए कोई प्रोत्साहन नहीं मिलता क्योंकि मूल्य नियंत्रण का अर्थ है कि हर जगह एक समान मूल्य, इसलिए रेलवे में माल भाड़ा इमदाद लागू की गई है जिससे कि व्यापक रूप से अपने उत्पाद की आपूर्ति के लिए इन निर्माताओं को प्रोत्साहन दिया जा सके। किंतु ये इमदाद कई बार बहुत अपर्याप्त होती है क्योंकि यहां माल भाड़ा विश्व में सबसे अधिक है और जानबूझ कर इस इमदाद को कृत्रिमता के लिए यात्री किराया कम किया है। यह इस बात को दर्शाने वाला एक उदाहरण है कि किस प्रकार मूल्य नियंत्रण का पाश (जाल) प्रोत्साहन के मार्ग को अवरूद्ध करता है जो अंतत: गरीब परिवारों को क्षति पहुंचाता है।

---

[9] जेन्सन राबर्ट क्या श्रम वाजार अवसर यंग वूमेन्स वर्क एण्ड फैमिली डिसीजन को प्रभारित करते है इंडिया 2012 से प्रायोगिक साक्ष्य। अर्थशास्त्र का तिमाही जर्नल

[10] भारतीय आर्थिक सर्वेक्षण 2014-15 खंड 1 अध्याय 3

[11] योजना आयोग जुलाई 2013, तेन्दुलकर आयोग पर रिपोर्ट देना।

[12] भारतीय जनगणना (2011), प्रकाश का स्रोत

13 क्या मौजूदा जल सब्सिडी गरीबों तक पहुंचती है एमआईटी और विश्व बैंक वर्किंग पेपर (http://web.mit.edu/urbanupgrading/waterandsanitation/resources/pdf-files/WaterTariff-4.pdf)

सारणी 1.2 निर्धनों को कितनी अर्थिक सहायता का लाभ दिया

उत्पाद	उत्पादकं आर्थिक सहायता	उपभोक्ता आर्थिक सहायता	वित्तीय व्यय	वित्तीय व्यय (2011-12 जीडीपी का प्रतिशत)	लाभ का कितना भाग निर्धनों को प्राप्त होगा?
रेलवे	लागू नहीं	हमदादी यात्रा किराया	₹ 51,000 किराया	0.57 प्रतिशत	निचले 80% परिवारों से रेलवे को किराए के माध्यम से कुल यात्रियों का केवल 28.1 प्रतिशत बनता है।
तरलीकृत	लागू नहीं	हमदादी (अब डीपीटी	₹ 3,746	0.26 प्रतिशत	निचले स्तर के 50% परिवार केवल पैट्रोलियम गैस के माध्यम से) 25 प्रतिशत एलपीजी का उपभोग करते है।
मिट्टी का तेल (केरोसिन)	लागू नहीं	पीडीएस द्वारा हमदादी	₹ 20,415	0.23 प्रतिशत	पीडीएस कैरोसीन आबंटन का 41 रिसाव में नष्ट हो जाता है। केवल शेष बचे 46% की ही गरीब परिवारों द्वारा खपत हो पाती है।
उर्वरक और नाईट्रोजनीकृत सामग्री	जर्म और पोषक निर्माताओं को विशिष्ट हमदाद/सरकार द्वारा विनियमित यूरिआ का आयात	यूरिया के लिए अधिकतम खुदरा मूल्य सरकार द्वारा निर्धारित किया जाता है	₹ 73,790	0.82 प्रतिशत	यूरिया और पी एवं के निर्माता इमदाद से अधिकांश आर्थिक लाभ प्राप्त करते हैं क्योंकि किसानों विशेषरूप से गरीब किसानों को उर्वरकों के लिए मांग घटती-बढ़ती रहती है
चावल (धान)	न्यूनतम मूल्य (न्यूनतम समर्थन मूल्य	पीडीएस द्वारा हमदाद	₹ 129,000	1.14 प्रतिशत	पीडीएस चावल का 15% हिसाब में नष्ट हो जाता है। दशमलव के तीन दशमांक के निचले स्तर के परिवार 53 प्रतिशत चावल का परिवारों के पास पहुंचे 85 प्रतिशत चावल में से उपभोग करते है।
गेहूं					पीडीएस गेहूं का 54: रिसाव में नष्ट हो जाता है। दशमल 3 अंकों तक परिवार 46 प्रतिशत शेष बचे गेहूं में से 53 प्रतिशत का उपभोग करते है
दालें	न्यूनतम मूल्य (नयू॰स॰मू॰)	पीडीएस द्वारा इमदाद	₹ 158	0.002 प्रतिशत	निचले 3 दशमक हमदादी दालों के 36 प्रतिशत का उपभोग करते है
विद्युत	इमदादी	बाजर मूल्य से कम	₹ 32,300	0.36 प्रतिशत	निचले क्विंटाइल की औसत मासिक खपत ъ 45 ङ्गत ऊपरि क्विंटाइल 121 ङ्गत की तुलना में निचले क्वटाइल में इमदादी बिजली का केवल 10 प्रतिशत को लाभ मिलता है ऊपरी क्विंटाइल इमदाद का 37% प्राप्त करते है।
जल	लागू नहीं	इमदाद	₹ 14,202	0.50 प्रतिशत	अधिकांश जल के लिए इमदाद का निजी नलों का आबंटन होता है जबकि गरीब परिवारों के 60% परिवार सर्वजनिक नल से अपने लिए पानी प्राप्त करते है।
चीनी	गन्ना किसानों के लिए न्यूनतम मूल्य, मिलों को आर्थिक सहायता (इमदाद)	पीडीएस द्वारा इमदाद	₹ 33,000	0.37 प्रतिशत	48 प्रतिशत पीडीएस चीनी रिसाव में समाप्त हो जाती है निचले 3 दशमक के परिवार 52 प्रतिशत शेष बची चीनी के 44 प्रतिशत का उपभोग करते है।
जोड़			**₹ 377,616**	**4.24**	

सभी व्यय दशमक एनएसएस (2011-12) के 68वें चक्र के परिवार व्यय मॉड्यूल से प्राप्त आंकड़ों पर आधारित है।
रेलवे-wwwncer.org.download.php?pld=IIIi`"B107,oa,u,l,1 68वां चक्र
एलपीजी-एनएसएस (2011-12) के 68वें चक्र से खपत
कैरोसिन-इकॉनॉमिक सर्वे ऑफ इंडिया 2014-15 खण्ड ᴵᴵ अध्याय 3
उर्वरक-एग्रीकल्चरल इन पुट सर्वे htt\\inpatsurvey.dacnet.nic.in/nationaltuble 3 aspx
चावल एवं गेहूं-इकॉनॉमिक सर्वे ऑफ इंडिया 2014-15 खण्ड I अध्याय 3
दालें-एनएसएस (2011-12) के 68वें चक्र से खपत
जल-एमआईटी और विश्व बैंक द्वारा रिपोर्ट http:\\webmitt.edu\unbanpgrading\waterandsanitation\resouces\pdt\water tariff4 पृ॰2
चीनी-डिपार्टमेंट ऑफ फूड एण्ड पब्लिक डिस्ट्रीब्यूशन (htt\\dspd.nic.in\\fcamim\sugar\notece.pdf)

उर्वरक इमदाद गरीबी विरोधी नीति के रूप में मूल्य इमदाद के उपयोग द्वारा एक और दिक्कत दर्शाती है। इमदाद का वास्तविक आर्थिक प्रभाव मांग और आपूर्ति की संगत इलास्टिसिटी पर निर्भर करता है जिसमें पार्टी मूल्य परिवर्तन लाभ के प्रति कम जवाबदेह होती है जबकि इमदाद पर अधिक निर्भर होती है। उर्वरकों के लिए आर्थिक सहायता देने का वास्तविक उद्देश्य किसानों को सस्ते उर्वरक उपलब्ध करवाना है जिससे कि इनके उपयोग को और उत्तम फसल की पैदावार को प्रोत्साहित किया जा सके। जिन उर्वरकों की किसान मांग करते है वे उर्वरक निर्माताओं की आपूर्ति की उपेक्षा अधिक मूल्य संवेदी होते हैं। मूल्य इमदाद से आर्थिक लाभ का बड़ा हिस्सा उर्वरक निर्माताओं द्वारा और अमीर किसानों द्वारा जो उर्वरक के बड़े भाग की खपत करते हैं के द्वारा प्राप्त किया जाता है न कि अधिक जरूरतमंदों यथा गरीब किसानों को इसका लाभ मिलता है।

चावल तथा गेहूं के लिए उच्च न्यूनतम समर्थन फसल विकल्प को विकृत कर देता है जहां जल की उपलब्धता तेजी से गिरी है और वस्तुत: इससे गैर एमएसपी समर्थित फसलों में अत्यधिक मूल्य अस्थिरता आती है जो उपभोक्ताओं को विशेष रूप से उन गरीब परिवारों को आहत करती है जिनकी आय निश्चित नहीं है और जो मौसमी अर्थव्यवस्था के झटके सहने का सामर्थय नहीं रखते। उच्च एमएसपी भी उन किसानों के लिए जोखिम उठाने पर नुकसानदायक होती है जो गैर पारंपरिक फसल उगाने का जोखिम उठाते है।

पहली नजर में मिट्टी का तेल (कैरोसिन) मूल्य इमदाद के लिए उपयुक्त प्रतीत होता है क्योंकि यह विख्यात है कि इसका उपयोग अधिकांशत: गरीब लोगों द्वारा किया जाता है और एनएसएस आंकड़ों के आधार पर अभी इस सर्वेक्षण में किया गया सर्वेक्षण (अध्याय 3) दर्शाता है कि पीडीएस के माध्यम से आबंटित इमदादी कैरोसिन का केवल 59 प्रतिशत वास्तव में परिवारों द्वारा उपयोग किया जाता है शेष बचा रिसाव में नष्ट हो जाता है और कुल खपत के केवल 46 प्रतिशत का गरीब परिवारों द्वारा उपयोग किया जाता है। यहां तक कि पीडीए के द्वारा खाद्य सामग्री के वितरण के मामले में रिसाव की मात्रा बहुत अधिक होती है (लगभग 15 प्रतिशत चावल और 54 प्रतिशत गेहूं इनमें से अधिकांश रिसाव एपीएल सेगमेंट में केंद्रित होता है) यह विख्यात अबवोधन की अपेक्षा आंकड़ों पर गरीबी विरोधी नीति को आधारित करने को महत्व देता है। यह नीति निर्माताओं को इस जरूरत पर अधिक ध्यान देने के लिए प्रेरित करता है कि वे पहले कदम के रुप में कारगर, लक्षित कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में राज्य को अपने नियंत्रण के लिए संबद्ध करे।

प्रौद्योगिकी गरीब लोगों के आर्थिक जीवन में सुधार के लिए सरकार को उत्तम साधन प्रदान करती है। जे ए एम ट्रीनिटी जनधन योजना, आधार और मोबाइल नंबर-इस परिवर्तन के कारण हो सकते हैं क्योंकि यह कल्याण तथा गरीबी विरोधी नीतियों के सेट का प्रसार करता है जिनका भविष्य में राज्य कार्यान्वयन कर सकते हैं। प्रौद्योगिकीय अभिनव परिवर्तन ने गरीब लोगों की मदद के लिए सीधे नकद अंतरण के महत्व के लिए शैक्षणिक रुझान को बढ़ाया है।

हाल ही के से प्रायोगिक लक्ष्य प्रकट करते हैं कि बिना शर्त नकद अंतरण-यदि सही लक्ष्य पर किया जाए परिवारों की खपत और परिसंपत्तियों के स्वामित्व को बढ़ा सकता है और अत्यधिक गरीब लोगों के लिए खाद्य सुरक्षा समस्याओं[15] को कम कर सकता है।

नकद अंतरण मनरेगा जैसे विद्यमान गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों की कारगरता को भी संवर्धित कर सकते हैं। हाल के अध्ययन[16] यह साक्ष्य देते हैं कि आन्ध्र प्रदेश, जहां मनरेगा और सामाजिक सुरक्षा भुगतान आधार लिंक बैंक खाते के माध्यम से किया गया, परिवार इस नए आधार लिंक डीबीटी सिस्टम के माध्यम से तेजी से भुगतान प्राप्त करते हैं और राशि वितरण में लीकेज कम हुई जिससे कि वित्तीय वचत लीकेज की कमी के कारण कार्यक्रमों को कर्यान्वित करने की लागत से 8 गुणा अधिक थी। इस लीकेज में कमी बायोमीट्रिक आइडेंटीफिकेशन स्टेम के परिणाम स्वरूप घोस्ट लाभ प्राप्तकर्ताओं का पता लगने से भी आई। वास्तव में सरकार 9.75 करोड़ लाभर्थियों के बैंक खातो में कुकिंग गैस इममाद का सीधे भुगतान कर सीधे लाभ अंतरण से लाभ प्राप्त कर रही है।

कृषि क्षेत्र के लिए, जो फिलहाल संकटग्रस्त है, ये साक्ष्य संभावनाएं उजागर करती हैं। मेनरेगा के परिणाम स्वरूप, इसकी सभी कमियो सहित यह स्वंय लक्ष्य पर पहुचती है। यदि यह कार्यक्रम ग्रामीण सड़कें, माइक्रो इरेगेशन (सूक्ष्म

---

[15] एक अनुमान से पता चला है कि किसानों की उर्वरकों की मांग में उर्वरकों में लगभग 6.4 प्रतिशत से 10 प्रतिशत तक वृद्धि के कारण घट गई है। ढोलकिया, आरएस तथा जगदीप मजूमदार ''ऐस्टीमेशन आफ प्राइस इलास्टिसीटी ऑफ फर्टीलाइजर डीमांड इन इंडिया'', 2006 आधार पत्र

[15] जाहेन्स हैसोफर एवं जेर्मी शैपीरो ''हाउस होल्ड रिसवॉन्स टू इनकम चेंजेज' ऐवीडेंस फ्राम अन कंडीशनल कैश ट्रांसफर प्रोग्राम इन केन्या, 2013 कार्यपत्र.

[16] कार्तिक मुरलीधरन, पॉल निहास एवं संदीप सुखंताकर, बिल्डिंग स्टेट कैपेसिटी 27: एवीडेंस फ्राम बायोमीट्रिक स्मार्टकार्ड इन इंडिया, 2014-कार्य पत्र,

सिंचाई) और जल प्रबंधन इंफ्रास्ट्रचर जैसी ग्रामीण परिसंपत्तियों को सृजित करने को दिशा में कम कर सके और जेएएम नंबर ट्रीनिटी के माध्यम से लीकेज न्यूनतम की जा सके तो ग्रामीण भारत वंचितों के लिए अवसरों का सृजन तथा सुरक्षा दोनों को प्राप्त कर सकेगा।

आज लगभग 125.5 मिलियन जनधन बैंक खाते है,[17]। 757 मिलियन आधार नंबर हैं और लगभग 904 मिलियन मोबाइल फोन हैं। इस बात पर जोर देना संभव है कि जब जेएएम ट्रीनिटी लिंक हो जाएगी तो आधार नंबर के माध्यम से पहचान के उपरांत बैंक खाते में आवधिक तथा निर्बाध वित्तीय अंतरण के लक्ष्य को गरीब लोगों की आजीविका में मदद के अनुलनीय लाभ के साथ कार्यान्वित किया जा सकता है। भारतीय अर्थव्यवस्था की शीर्षस्थ प्रत्याशा यह है कि राज्यों में प्रबल निवेश करने पर निर्वाण (Nirvana) पहुंच में नजर आएगा। इस निर्वाण के दो कारण होंगे- एक तो गरीबों की रक्षा हो सकेगी और भारत में कई चीजों की कीमतों में उदारीकरण आने से संसाधन आवंटित करने की भूमिका को संपादित किया जा सकेगा और दीर्घकालिक विकास को गति मिलेगी। चूंकि दूसरी और तीसरी पीढ़ी के बाजारगत सुधारों पर ध्यान दिया गया है, इसलिए भारत पहली पीढ़ी के बुनियादी सुधारों को पूरा करने में सक्षम होगा। यह भारतीय सुधारों की राजनीतिक अर्थव्यवस्था में बहुत बड़ा कदम होगा।

1.8 वृद्धि निजी और सार्वजनिक निवेश

''बैलेंशीट सिंड्रॉम विद इंडियन करेंक्टरिस्टिक्स'' ने ऐसी कठिन चुनौतियों के लिए वेब बनाया है जो निजी निवेश को रोक सकता हो। निजी निवेश को दीर्घ गामी विकास का प्रारंभिक इंजिन रहना चाहिए। किंतु अंतरिम तौर पर वृद्धि को पुन:जीवित करने के लिए तथा प्रत्यक्ष कनेक्टीविटी को गहनता प्रदान करने के लिए सार्वजनिक निवेश को विशेष रूप से रेलवे में, महत्वपूर्ण भूमिका निभनी होगी। चूंकि अब नई सरकार सत्ता में आ गई है। आर्थिक सुधारों की दिशा परिवर्तन से निवेशकों की भावनाओं का आंशिक पुनरूस्थान हुआ है।

प्रारंभिक संकेत मिलते हैं कि बुरा समय समाप्त हुआ। उदाहरण के लिए आंकड़े जो दर्शाते हैं कि अवरूद्ध (स्टाल्ड) परियोजनाओं की दर में कमी आई हैं और इनके पुनरूस्थान की दर में वृद्धि हो रही है (चित्र 1.14) चित्र 1.14 स्टाल्ड परियोजनाओं का ओवरव्यू, 2011 क्यू 1 से 2014 क्यू. 3 (लाख करोड़)

किंतु बढ़ते पूंजीगत प्रवाह, विशेष रूप से निजी क्षेत्र में, को अभी स्थायी गति प्रदान कियाजाना बाकी है। यह कम से कम ऐसे पांच परस्पर संबद्ध घटकों पर आश्रित होता है जो वर्ष के मध्य में आर्थिक विश्लेषण के कारक होते है जिसे *''बैलेंस शीट सिंड्रोम विद इंडियन कैरेक्टरिस्टिक'' कहा जाता है।*

सबसे पहले कम लाभप्रदता से लड़खड़ाता और अति ऋणग्रस्तता से दबा भारतीय निगमित क्षेत्र (चुनौतियां को वहन करने) निवेश करने में बहुत सीमित है। लाभप्रदता का एक महत्वपूर्ण संकेतक-व्याज कवर अनुपात-यदि एक से कम हो तो इसका अर्थ होता है कि फर्म की नकद प्राप्ति अपनी ब्याज लागत का भुगतान करने के लिए पर्याप्त नहीं है। यह स्थिति हाल हो के वर्षों में कम हुई है। (चित्र 1.15) इसके अलावा जैसा कि चित्र 1.16 दर्शाता है कि 500 बड़ी गैर-वित्तीय फर्मों का ऋण-ईक्विटी अनुपात निरंतर बढ़ रहा है और अब उनका स्तर उभरते विश्व बाजार मे उच्चतम है। चित्र 1.15 भारतीय निगमित क्षेत्र की स्थिति आईसीआर <21,,2011 क्यू 3 से 2014 क्यू 2 -कंपनियां।

दूसरे कमजोर संस्थान जो दिवालिए हो चुके हों का तात्पर्य होता है कि अति ऋण ग्रस्तता की समस्या आसानी से समाप्त नहीं हो सकती (स्टॉक और निर्गम की समस्या (डिफकल्टी ऑफ एग्जिट) चुनौती यह स्टाल्ड परियोजनाओं की विद्यमानता में परिलक्षित होता है। जो निरंतर पिछले चार वर्षों के दौरान जीडीपी का लगभग 8 प्रतिशत रहा है। ऋण वसूली अधि करण के पास बहुत अधिक काम है और इनके संसाधान कम हैं,वर्तमान विधानों (कानून) को प्रबल बनाने की आवश्यकता है।

तीसरे, भले ही इनमें से कुछ समस्याओं का समाधान हो गया, कम से कम अभिसंरचना में पीपीपी मॉडल को प्रगति के लिए अधिक व्यवहार्य बनाने के लिए पुन: व्यवस्थित करने की आवश्यकता होगी।

चौथा अभिसंचना का महत्वपूर्ण भाग को बैंकिंग सिस्टम द्वारा वित्त प्रदान किया जाना है, विशेष रूप से सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक द्वारा, इसकी बैलेंश शीट में गिरावट[19] आई है। उदाहरण के लिए अनर्जक और स्ट्रेस मुक्त परिसंपत्तियों की संख्या तीव्रता से बढ़ी है और पीएसबी के लिए कुल परिसम्पतियों के 12 प्रतिशत से अधिक है चित्र 1.17)

---

[17] प्रधानमंत्री जनधन योजना प्रोग्रेस रिपोर्ट

[18] http://www.trai.gov.in/WriteReadData/WhatsNew/Documents/Presspercent20Release-TSD-Mar,14.pdf.

[19] आरबीआई की वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट, दिसंबर 2014 के अनुसार, खनन, लोह, और स्टील, टेक्सटाइल, एविएशन और अन्य अभिसंरचनाओं का कुल अग्रिम मे अंशदान 28 प्रतिशत है जवकि इनका स्ट्रेसयुक्त परिसंपत्तियों में अंशदान 54 प्रतिशत है।

चित्र 1.14: रुकी परियोजनाओं का विहंगावलोकन, 2011 ति. 1 से 2014 ति. 3 (लाख करोड़)

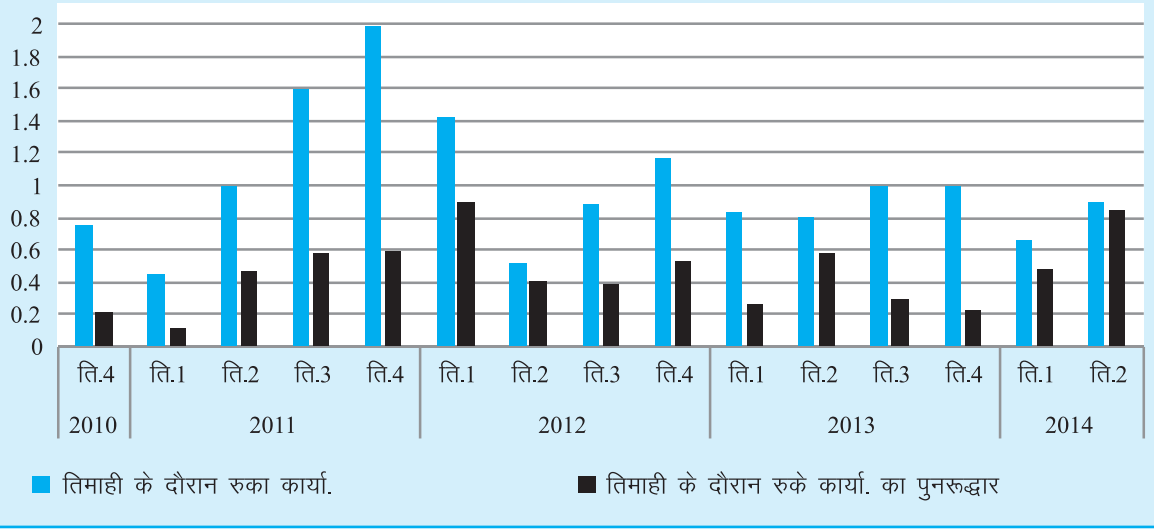

स्रोत : सीएमआईई

लेखा और मूल्यांकन के संबंध में अनिश्चतता और विभिन्न समयों और स्थलों पर बैंकिंग समस्याओं का इतिकृत समस्याओं की गंभीरता को कम आंकने की अपेक्षा अधिक आंकड़े का परामर्श देता है। जब बैंक की बैलेंस शीट पर बल दिया जाता है तो ये ऋण देने के योग्य नहीं होते जिससे निजी क्षेत्र के लिए क्रेडिट कम रहता है। (वित्तीय चुनौतियां)[20]

अतंत: विशिष्ट भारतीय परिवेश में यह वित्तीय समस्या सामान्य जोखिम विरूचि के कारण बढ़ी है निर्णय लेने की चुनौती विशेष रूप से सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के लिए जिनके संबंध में सरकारी जवाबदेहिता होती है और इससे बचा जाता है, एनपीए की स्थिति में ऋण आसान नहीं होता क्योंकि सावधानी वरतने की सामान्य समस्या ब्यूरोक्रेटिक निर्णय क्षमता को प्रभावित करती है।

कोयला और गैस जैसे महत्वपूर्ण इनपुट साथ ही साथ नियामक सुधारों की आपूर्ति को बढ़ाने के लिए सरकार द्वारा कार्रवाई की गई, इससे कुछ दबाब कम हुआ है विशेष रूप से सार्वजनिक क्षेत्र में जहां आंकड़ों की नियामक के रूप में पहचान की जाती है। (कलेयरेंस और भू-अधिग्रहण)। संस्थागत समस्याओं को दूर करने के लिए पीपीपी के लिए बेहतर फ्रेमवर्क तैयार कर तथा समान्य रूप से बुनियादी निवेश के लिए कदम उठाए गए हैं। भारतीय रिजर्व बैंक, बैंकों की वसूल न हो पाने वाले ऋणों को समस्या की पहचान और इनका समाधान करने के प्रयास कर रहा है। किंतु इस पहल का प्रभाव सीमित है। रूकी पड़ी परियोजनाओं का स्टॉक बहुत अधिक है, फर्म की लाभप्रदता, विशेष रूप से इंफ्रास्ट्रक्चर क्षेत्र में कार्य कर रही फर्म बहुत कम होती है। इस लिए निजी क्षेत्र में निवेश की वसूली की गति और क्षमता (स्ट्रेन्थ) कम रहती हैं।

यदि निजी निवेश की कमी बढ़ी हुए सार्वजनिक निवेश के लिए एक नकारात्मक या प्रत्यक्ष मूल आधार प्रस्तुत करती है तो इसके बहुत से सकारात्मक मूलाधार भी होते हैं। भारत के हाल के पीपीपी अनुभव से पता चला है कि एक कमजोर संस्थान में यदि कोई निजी क्षेत्र इस परियोजना को अपने हाथ में लेता है तो इसके कार्यान्वयन में लागत का जोखिम रहता है (भू-अधिग्रहण में, पर्यावरणीय स्वीकृति और इनपुट आपूर्ति की परिवर्तनशीलता आदि में विलंब) कुछ क्षेत्रों मे इन जोखिमो को आत्मसात करने में सार्वजनिक क्षेत्र उत्तम हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त इंफ्रास्ट्राक्चर (अभिसंरचना) के कुछ ऐसे क्षेत्र हैं ग्रमीण सड़कें, रेलवे जो मूल भूत प्रत्यक्ष कनेक्टीविटी (संपर्क) उपलब्ध करवाते हैं जिनमें निजी निवेश कम होगा। एक विडंबना यह है कि जहां वित्तीय और डिजिटल कनेक्टीविटी आगे बढ़ रही है वहीं यह देखा जाता है कि मूलभूत प्रत्यक्ष कनेक्टीविटी पिछड़ रही होती है।

इसलिए जैसे कि मिड-ईयर इकॉनॉमिक एनालायसिस 2014-15 (मध्य वर्षीय आर्थिक विश्लेषण 2014-15) में जोर दिया गया है कि लक्षित सार्वजनिक निवेश को विकास के प्रेरक घटक के रूप में संस्थापित करना अल्प अवधि के लिए

[20] इंफ्रास्ट्रक्चर वित्तपोषण में किस प्रकार पूंजी बाजार बड़ी भूमिका निभा सकता है, पर सुझाव पिछले वर्ष के आर्थिक सर्वेक्षण में दिए गए हैं।

चित्र 1.15: भारतीय कॉरपोरेट सेक्टर की स्थिति आईसीआर के साथ कंपनियां <1,2011 ति.3 से 2014 ति.2

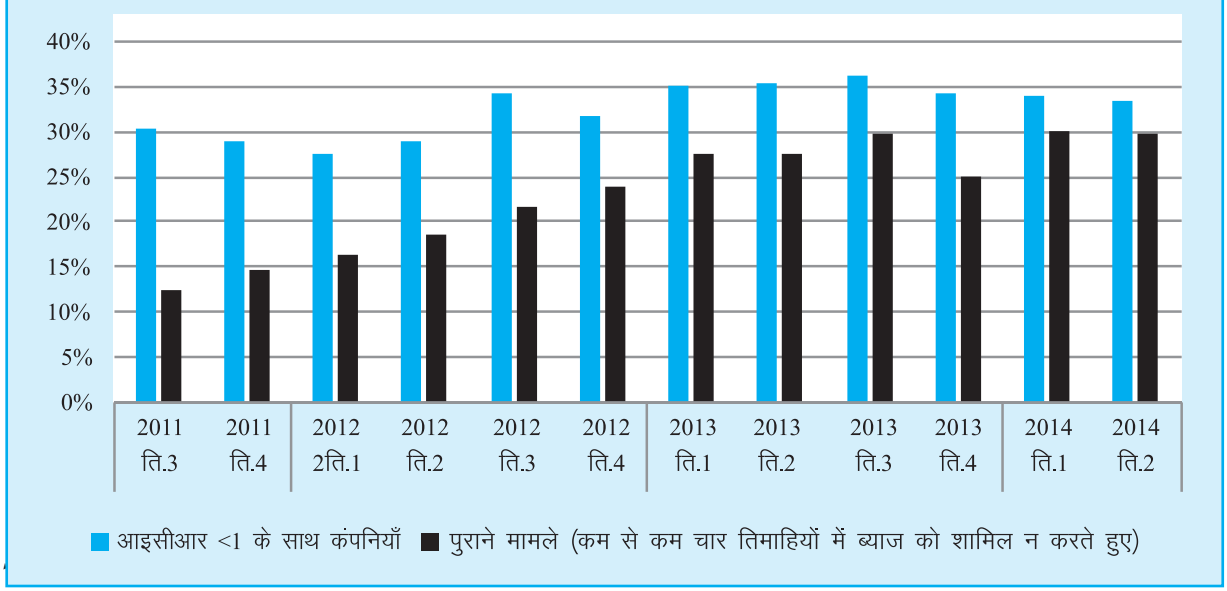

चित्र 1.16: गैर-वित्त कॉरपोरेट की इक्विटी के लिए ऋण

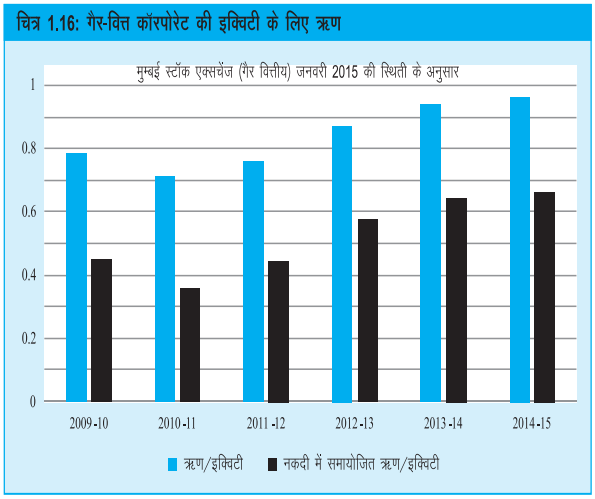

चित्र 1.16: गैर-वित्त कॉरपोरेट की इक्विटी के लिए ऋण

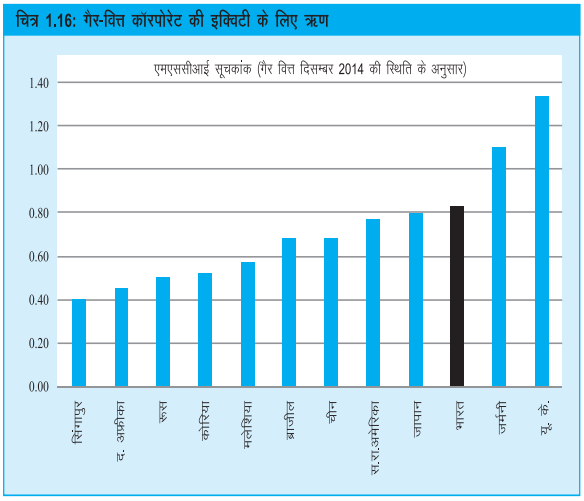

***स्रोत* : ब्लूमबर्ग और जे पी मोरगन**

सकारात्मक लगता है किंतु यह निजी निवेश का प्रतिस्थापन नहीं होगा और इस प्रकार इसे प्रोत्साहित करना और बढ़ाना है। सार्वजनिक निवेश बढ़ाने की दो चुनौतियां वित्तपोषण और क्षमता से संबद्ध हैं। वित्तपोषण संबंधी समस्याओं पर खंड 1. 6 में चर्चा की गई है।

भारत में निजी क्षेत्र की कार्यान्वयन क्षमता परिवर्तनीय है। किंतु अध्याय 6 में दिया गया विश्लेषण बताता है कि रेलवे वृद्धि का अगला साधन हो सकता है। रेलवे में अधिक सार्वजनिक निवेश सकल वृद्धि को बढ़ाएगी और भारतीय निर्माण क्षमता में पर्याप्त प्रतियोगिता लाएगी। अंशत: ये बड़े लाभ रेलवे में चालू भारी कम निवेश से मिलते हैं। उदाहरण के लिए चीन और भारत में 1990 के मध्य तक एक समान नेटवर्क क्षमता थी किंतु चीन ने प्रतिव्यक्ति के रूप में भारत की तुलना में ग्यारह गुणा अधिक निवेश किया। अत: चीन की क्षमता और सामर्थ्य में बढोत्तरी हुई (चित्र 1.18) इसके विपरीत अवरूद्ध निवेश की वजह से भारत मे संकुलन (कन्जेशन) क्षमता में कमी, खराब सेवा, कमजोर वित्तीय स्थिति और संभारतंत्र आधारित क्षेत्रों की प्रतियोगी क्षमता, विशिष्ट निर्माण क्षमता में गिरावट आई है। रेलवे में अधिक माल ढुलाई आने से सड़क परिवहन को भी लाभ हुआ है जो कि विकास के लिए अच्छा संकेत नहीं है क्योंकि रेल परिवहन अधिक सस्ता और ऊर्जा किफायती है। मालभाड़े से प्राप्त आय से यात्रियों को सुविधाएं दी जाती हैं और भारतीय रेल भाड़ा सबसे अधिक है (पीपीपी समायोजित)।

चित्र 1.17: भारतीय बैंकिंग प्रणाली की स्थिति, मार्च 2010 से सितम्बर 2014 तक

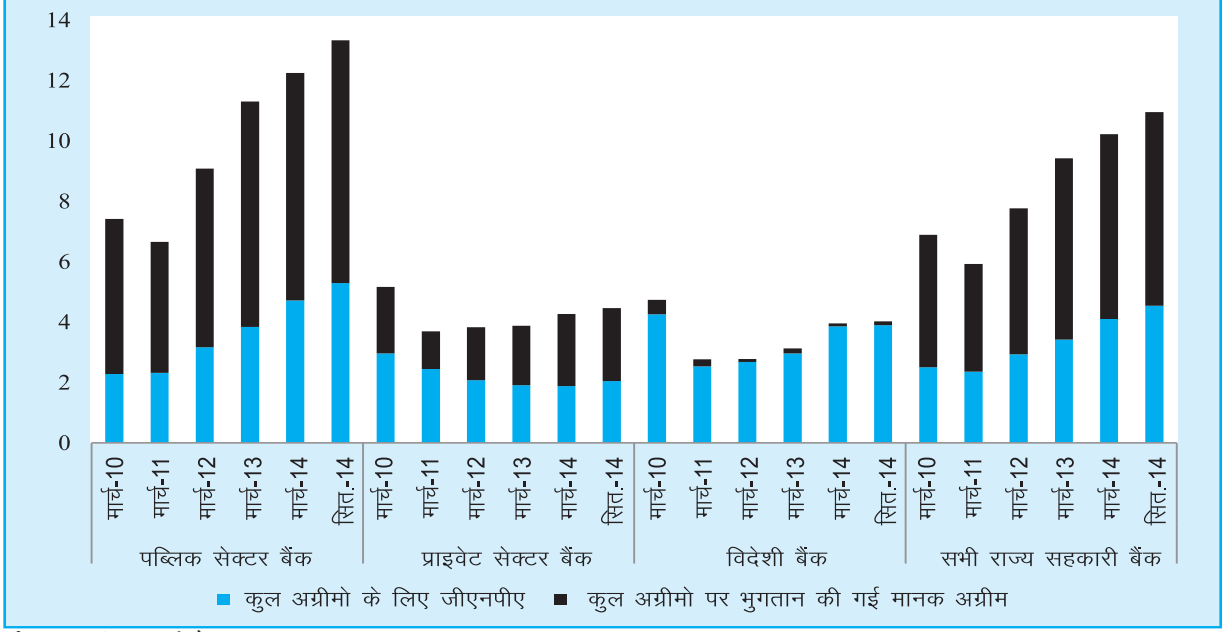

स्रोत : भारतीय रिजर्व बैंक

चित्र 1.18: अतिरिक्त क्षमता - भारतीय और चीनी रेलवे, 1990-2010 (मार्ग हजार कि.मी.)

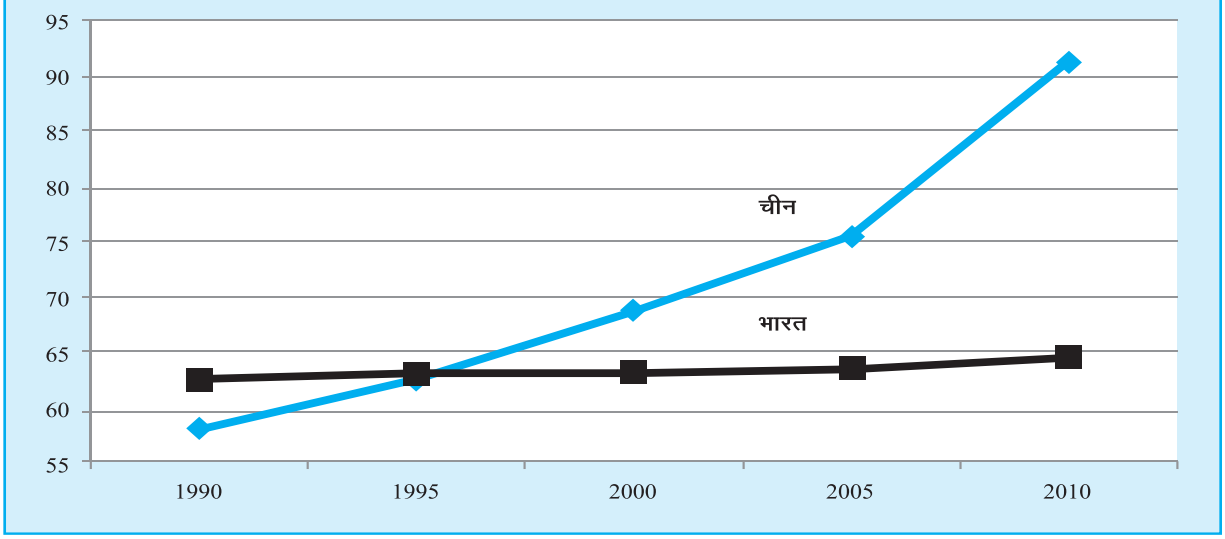

स्रोत : विश्व बैंक

पूर्व एनडीए सरकार ने सड़कों के लिए जो कुछ भी किया। वही वर्तमान सरकार रेलवे के लिए कर सकती है, जीवन यापन के उच्च मानकों, अधिकाधिक अवसर प्रदान करने और मानव जीवन के उत्थान के महत्व को बढ़ाने के रूप में अधिकाधिक लाभ प्रदान करने के साथ ही साथ भारत की जनसंख्या को प्रत्यक्ष कनेक्टीविटी प्रदान कर मजबूती प्रदान कर सकती है।

1.9 बैंकिंग क्षेत्र की चुनौतियां

बैंकिंग व्यवस्था नीतियों के अनुसार संचालित है जो दोहरे वित्तीय निरोध (रिपरेशन) उत्पन्न करती है और संरचनात्मक घटक द्वारा जो प्रतियोगिता में बाधा डालते हैं। इसका समाधान विनियमन के 4-डी में विद्यमान है। सांविधिक नकदी अनुपात (एसएसआर) और प्राथमिकता

क्षेत्रों के ऋण (पीएसएल), विभेदीकरण (पुन: पूंजीकरण, बैलेसशीट में घाटा और स्वामित्व के संबंध में सार्वजनिक क्षेत्र व बैंकों में विविधता (बैंकिंग और बैकिंग के बाहर निधि का स्त्रोत) और डिसइंटरिंग (एक्जिट मकैनिज्म में सुधार के द्वारा)।

भारत में बैंकिंग पर हाल ही में हो रही चर्चा कम तथा पुन: अभिसंरचित परिसंपत्तियों, की समस्याओं पर, पूंजीगत पर्याप्तता पर अस्पष्ट लूमिंग बेसल III अपेक्षाओं को पूरा करने के संसाधनों को प्राप्त करने की चुनौतियों, सरकार और बाजार के संबंधित सहयोग को शामिल करने और 2013 की नायक, समिति रिपोर्ट में दर्शाई गई शासन सुधार की आवश्यकताओं पर आधारित है। इन आसन्न मुद्दों से पीछे हटने से भारतीय बैंकिंग की समस्याओं का गहन विश्लेषणात्मक निदान करना होता है जो तद्नुसार अत्यंत अंशांकित समाधानों का आधार प्रदान करता है।

पहला प्रश्न यह उठता है कि क्या भारत क्रेडिट एडल्ड और ओवर बैंक्ड तो नहीं है। इसका मूल्यांकन करने का एक तरीका यह देखना है कि क्या भारतीय बैंक तेजी के दौर में अत्यधिक लापरवाह थे।[21] चित्र 1.19 अनेक देशों का जीडीपी या घरेलू क्रेडिट दर्शाता है कि विश्व बैंक द्वारा 'टेक ऑफ' वर्ष से इन देशों की तेजी से हुए विकास की अवधि में दर्शाया गया है। (ये अवधि अलग-अलग देशाों के संबंध में अलग-अलग है) यह दर्शाता है कि पिछले दशक में यह उछाल क्रेडिट में वृद्धि के कारण हुआ था जिसके मूल में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक के यह असंगतिपूर्ण ऐसी व्यवहार अन्य देशों में भी हमसे भिन्न नहीं था। अन्यों की अपेक्षा भारतीय क्रेडिट अधिक तीव्रता से नहीं बढ़ा उदाहरण के लिए जापान और चीन ने अपने वित्तीय सिस्टम में अपने समायोजन वर्ष के दौरान अधिक ऋण दिया है।

भारत के ओवर बैंक होने के प्रश्न के संबंध में हमने देशों के समूह के लिए कुल क्रेडिट में बैंकों के हिस्से का मूल्यांकन किया है (चित्र 1.20) ये आंकड़े सरकार को छोड़ कर, अर्थव्यवस्था में कुल क्रेडिट जिसमें विकास के स्तर के लिए फर्म और हाउसहोल्ड[22] शामिल हैं, का बैंकिंग क्रेडिट की तुलना में अनुपात दर्शाता है जैसाकि पीपीपी के रूप में प्रति व्यक्ति जीडीपी के लॉग द्वारा मापा गया है। यह चार्ट दर्शाता है कि भारत बहिर्वासी नहीं है, यह इसके विकास के स्तर से संबद्ध है, बैंक क्रेडिट का स्तर सामान्य तौर पर न तो बहुत

चित्र 1.19: टेक ऑफ के बाद से स.घ.उ. में घरेलू ऋण (प्रतिशत)

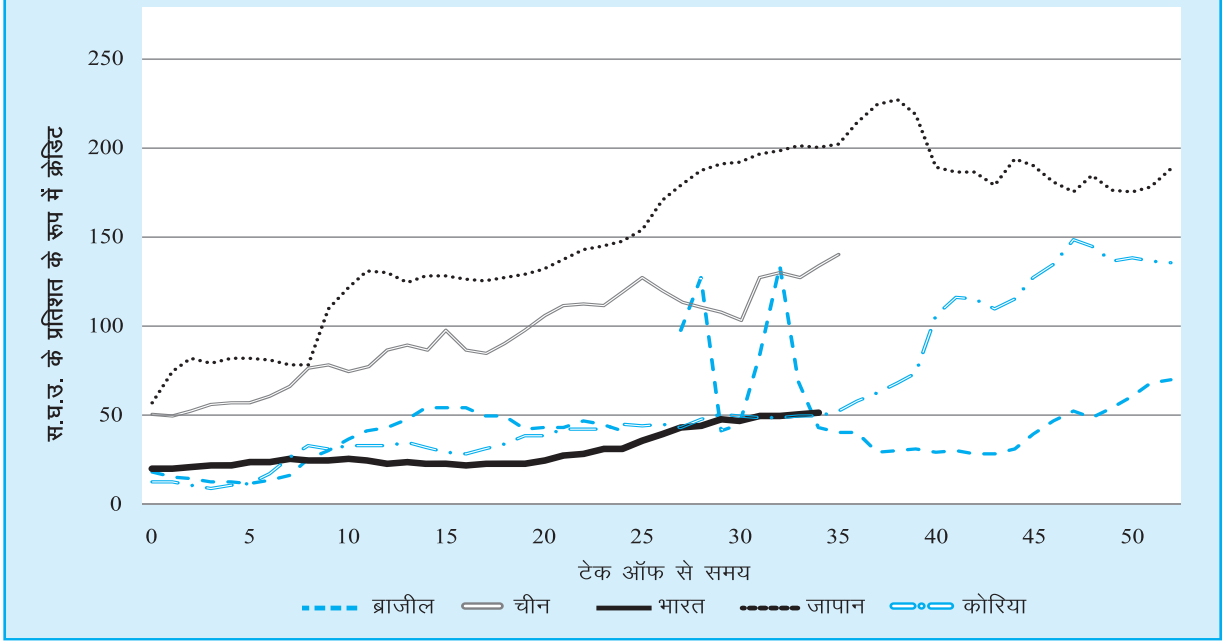

स्रोत: बैंक ऑफ इंटरनेशनल सैटलमेंट यह समस्या कहां विद्यमान है। भारतीय बैंकिंग क्रेडिट

[21] इस खंड के अध्याय 5 में हम यह परीक्षण भी करते हैं कि कैसे ऋण की भारमार वाले वाला भारत अन्य विभिन्न खण्डों और समय श्रृंखलाओं की तुलना पर आधारित है।

[22] अंतराष्ट्रीय समझौता बैंक द्वारा यथापरिभाषित, इसमें गैर वित्तीय निगमों (निजी और सरकारी दोनों), परिवारों और परिवारों की सेवा करने वाली निर्लाभ संस्थाओं को दिया गया ऋण शामिल है जैसकि राष्ट्रीय लेखा व्यवस्था 2008 में पारिभाषित है।

अधिक है और न ही बहुत कम है। वास्तव में यदि भारत अगले 20 वर्षों में 8% की वृद्धि करता है तो बैंकिंग से परे भारत का वित्तीय क्षेत्र के संघटन में तीव्र परिवर्तन आवश्यक और वांच्छनीय हो जाएगा।

यह समस्या कहां विद्यमान है भारतीय बैंकिंग सिस्टम में समस्या अन्यत्र है और यह दो श्रेणियों में आती है नीति और संरचना नीति संबंधी चुनौती का संबंध वित्तीय निग्रह से है। भारतीय बैंकिंग सिस्टम 'दोहरे वित्तीय निग्रह' से ग्रस्त है। बैलेंस शीट की परिसंपत्तियों की ओर वित्तीय निग्रह संविधिक नकदी अनुपात द्वारा किया जाता है जो बैंकों को सरकारी प्रतिभूतियां धारित करने के लिए विवश करता है तथा प्राथमिकतता क्षेत्र ऋण (पीएसएल) जो पूर्ण सक्षम तरीकों से कम में संसाधन विकास के लिए मजबूर करता है। देयता की ओर वित्तीय निग्रह 2007 से उच्च मुद्रास्फीति के कारण उत्पन्न हुआ है जिसकी वजह से नकारात्मक वास्तविक ब्याज दर आई और परिवारों (हाउस होल्ड) की बचत में तीव्र गिरावट हुई। चूंकि भारत देयता की ओर के निग्रह की ओर से मुद्रा स्फिति में गिरावट के कारण हट रहा है ऐसे में यह इसके परिसंपत्ति की ओर के भाग का समाधान करने का यह सही समय हो सकता है।

प्रतियोगिता और स्वामित्व संबंधी संरचनात्मक समस्याएं। सर्व प्रथम प्रतियोगिता की कमी नजर आती है यह निजी क्षेत्र के बैंकों में अपनी उपस्थिति बढ़ाने में अयोग्यता वस्तुतः हल ही के बैंकिंग इतिहास का एक विरोधाभास यह है कि जब देश तेजी से विकास की ओर बढ़ रहा है तो ऐसे में निजी क्षेत्र के बैंक की भागेदारी सकल बैंकिंग में न के बराबर बढ़ी है और जोकि निजी क्षेत्र के द्वारा बढ़नी चाहिए थी। यह निजी क्षेत्र के बैंक के वित्त पोषण के बिना निजी क्षेत्र का असामान्य मामला है। यहां तक कि पीएसबी के इस दिशा में आधिक्य की अनुमति देने पर कि वह इस वृद्धि के मार्ग में वित्तपोषण कर सके निजी क्षेत्र का इस दिशा में मौन चौकाने वाला है।

दूसरा, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंको के कार्यनिष्पादन में विवेकशीलता और लाभप्रदता के संदर्भ में व्यापक अंतर पाया गया है। चित्र-1.22 सार्वजनिक क्षेत्र और निजी क्षेत्र के बैंकों की आस्तियों के लिवरेज अनुपात और प्रतिलाभ को दर्शाता

चित्र 1.20: वर्ष 2014 के लिए कुल ऋण के अंश के रूप बैंकिंग ऋण

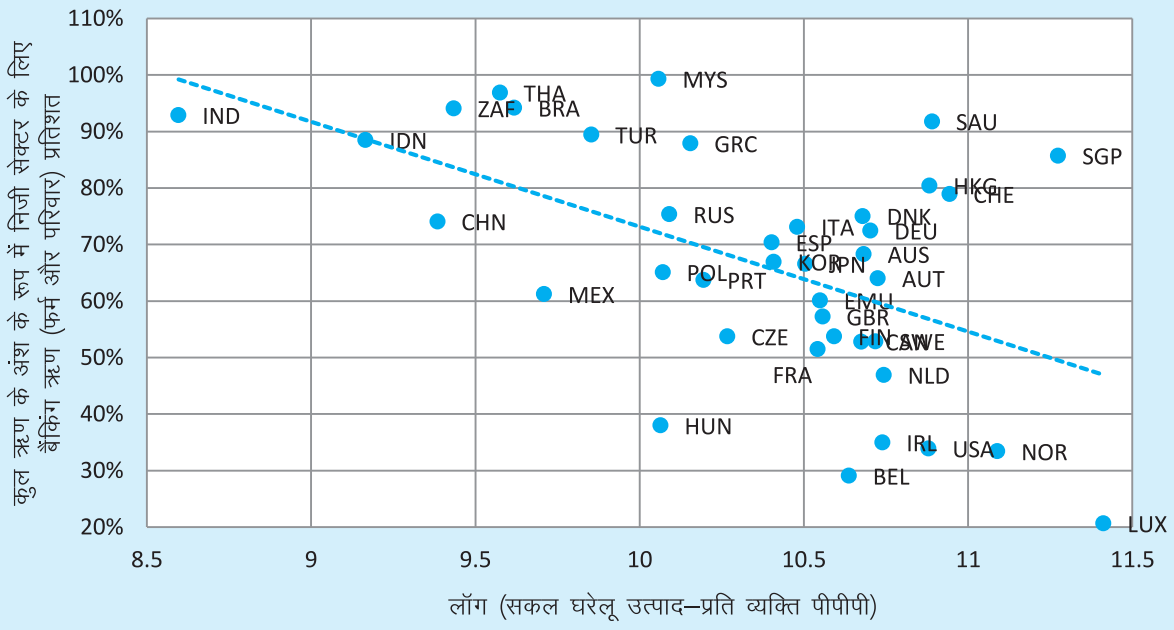

स्रोत: बैंक ऑफ इंटरनेशनल सैटलमेंट

[22] इस खण्ड के अध्याय 5 में और ब्यौरे देखे जा सकते हैं।

चित्र 1.21: कुल अग्रीमो का अनुपात, (वर्ष 1995-2014)

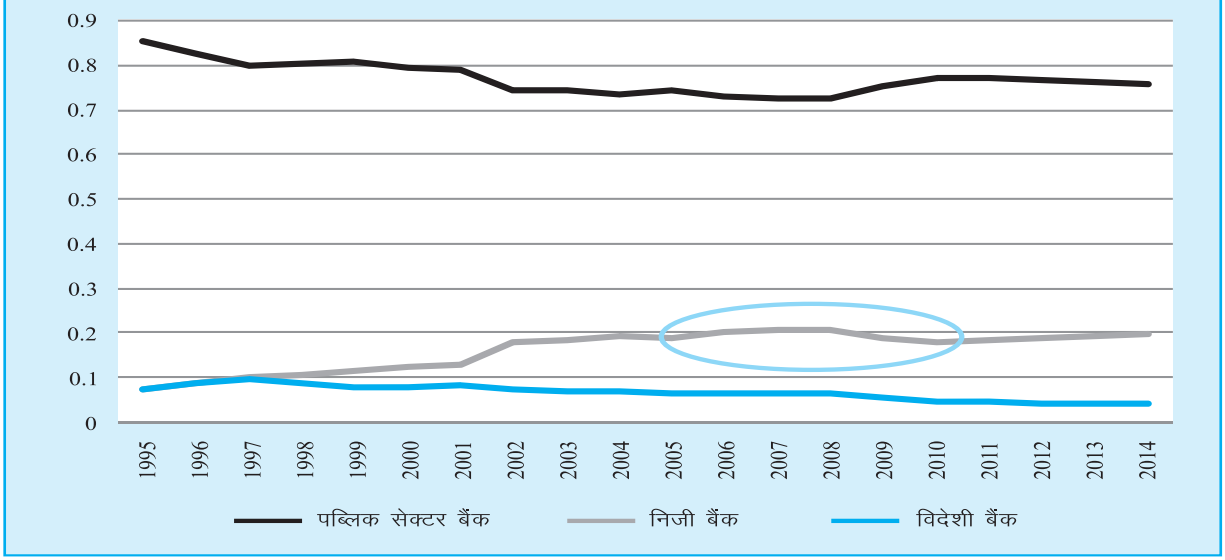

स्रोत: भारतीय रिजर्व बैंक

है[24] इसके अतिरिक्त यह सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में लिवरेज अनुपात के अंतर के दर्शाता है (जैसा कि बिंदुकित रेखाओं से दर्शाया गया हैं)। वास्तविक लिवरेज अनुपात की वास्तविक संख्याओं के संदर्भ में तीन वर्षों के औसत को ध्यान में रखते हुए पूंजीगत अदूरदर्शिता की तुलना में सर्वाधिक पूंजीगत दूरदर्शिता (पी॰एस॰वी॰) 1.7 गुणा थी।

सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में महत्वपूर्ण अंतर के बावजूद यह उल्लेखनीय है कि इन उपायों के आधार पर सर्वेत्तम सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों का निष्पादन निजी क्षेत्र के बैंकों से औसतन काफी कम है जो वास्तव में इस मान्यता पर आधारित है कि सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के सामजिक दायित्व अधिक होते हैं जिसके कारण उन्हें निजी क्षेत्र के बैंकों की तुलना में प्रतिस्पर्धात्मक हानि उठानी पड़ती है। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की एक समस्या यह भी है कि उन्हें ऋण कठिनाइयों से उभरना काफी कठिन हो रहा है। यदि ऐसा है तो सार्वजनिक क्षेत्र के प्रत्याशित स्वामित्व के संबंध में यह चिंता का अतिरिक्त कारण है।

उपरोक्त विश्लेषण और अध्याय 5 में दिए गए अनुसार चार स्तरीय नीति 4 डीएस (डी॰) पर आधारित है अर्थात डिरेग्यूलेट, डिफरेन्सीएट, डाइवर्सिफाइ और डिसएंटर।

चूंकि बैंकिंग सेक्टर में देयता पक्ष में मुद्रास्फीति में कमी सहित वित्तीय नियंत्रण विद्यमान है इसलिए आस्तिपक्ष में नियंत्रण (रेपरेशॅन) को कम करने का यह उचित अवसर है। इससे बैंकों में नकदी बढेगी, सरकारी बांड बाजार को व्यापकता मिलेगी तथा कारपोरेट बांड बाजार में भी परिवर्द्धन होगा। पी॰एस॰एल॰ मानकों का फिर से मूल्यांकन किया जा सकता है। इसके दो विकल्प है जिसमें पहला विकल्प यह है कि अप्रत्यक्ष सुधारों द्वारा अधिक से अधिक सेक्टरों को पी॰एस॰एल॰ के दायरे में लाया जाए जब तक कि प्रत्येक सेक्टर प्राथमिकता के सेक्टर में न आ जाए, और दूसरा विकल्प है पी॰एस॰एल॰ को धीरे-धीरे अधिक लक्षित, छोटा और आवश्यकता आधारित बनाने के लिए मानकों को फिर से निर्धारित किया जाए। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों (पी॰एस॰बी॰) में अवश्य दी भेद किया जाना चाहिए और सरकार द्वारा अपनाई गई पुन: पूंजीकरण की मौजूदा संकल्पना इस दिशा में एक सही कदम है। एक ही धारणा शासन सुधार जैसी संकल्पनों पर सर्वाधिक उपयुक्त नहीं हो सकती। विभेदीकरण विकल्पों का अवसर प्रदान करता है जैसे चयनात्मक पुन: पूंजीकरण, सरकारी स्वामित्व को कम करना तथा निर्गम।

[24] आर॰बी॰आई॰ द्वारा लिवरेज अनुपात को कुल पूंजी की कुल आस्तियों के अनुपात के रूप में परिभाषित किया गया है। उदाहरण के लिए बैंक ऑफ इंटरनेशनल सेंटीमेंट द्वारा यथा परिभाषित परिभाषा एकदम इसके प्रतिक्रम में है। इस प्रयोजन के लिए इस खंड को हम अंतर्राष्ट्रीय परिभाषा के लिए उपयोग में लाएगे। आस्तियों पर प्रतिलाभ (आर॰ओ॰ए॰) लाभ प्रदता अनुपात है जो कुल आस्तियों से प्राप्त निवल लाभ (निवल आय) को दर्शाती है।

चित्र 1.22: बैंकिंग संकेतकः उत्तोलन अनुपात और आस्तियों पर अर्थागम 2001-2014

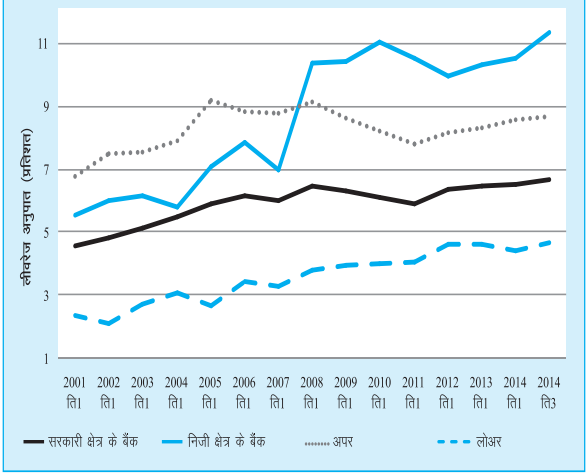

बैंकिंग संकेतकः उत्तोलन अनुपात और आस्तियों पर अर्थागम 2001-2014

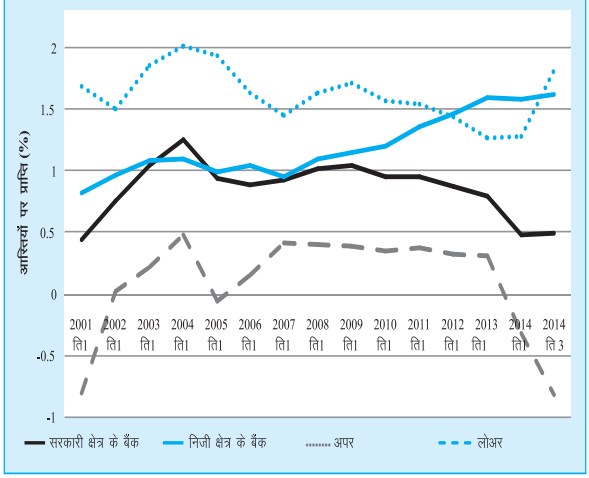

स्रोत : भारतीय रिजर्व बैंक।

विविधता का आशय यह है कि बैंकिंग प्रणाली में व्यापक प्रतिस्पर्धा होनी चाहिए जिसमें बैंकों और विविध प्रकार के बैंकों के लिए उदार लाइसेंसिंग प्रणाली भी शामिल है। पूंजीगत क्षेत्र में विशेष रूप से बांड मार्केट में अधिक प्रतिस्पर्धा होनी चाहिए। ऐसा करने से आस्ति पक्ष में निरोध (रिप्रेशन) अर्थात एसएलआर की गति को धीमा करना और बांड मार्केट को बढ़ावा देने की जरूरत होगी।

डिसएंटर (पड़ताल करने) का अर्थ होता है कि विकास प्रक्रिया अत्यंत कारगर होनी चाहिए ऋण वसूली अधिकरणों के पास अधिक कार्य है और इनके पास संसाधन कम हैं जिसकी वजह से निर्णय लेने में विलंब हो जाता है। स्वामित्व संरचना और आस्ति पुनर्निमाण कंपनियां, जिनमें बैंकों की स्वयं की भी काफी भागेदारी है, बेमेल पहल करती है। द स्क्रूटनाइजेशन एण्ड रीकंस्ट्रक्शन ऑफ फाइनेंशियल असेट्स एण्ड एनफोर्समेंट ऑफ सीक्योरिटी इंटरेस्ट (एसएएफएईएसआई) एक्ट सबसे छोटे उधारकर्ताओं और एमएसई के विरुद्ध अत्यधिक कठोरता से कार्यान्वित किया जाता है। बैंकों के द्वारा असावधानी पूर्वक ऋण देने के लिए नीति संगत बाधा रहित प्रोत्साहन के बिना प्रोमोटरों, क्रेडिटटरों, उपभोक्ताओं और कर दाताओं को ऋण देने की कारगर प्रक्रिया आवश्यक है। एक महत्वपूर्ण सीख यह है कि ऋणों को समाप्त करना, इनमें होने वाली वृद्धि के जितना ही महत्वपूर्ण है।

1.10 मेक इन इंडिया के अंतर्गत निर्माण, सेवाएं और इसकी चुनौतियां

ट्रांसफार्मेशनल (रूपांतरणकारी) क्षेत्र पंजीकृत निर्माण या सेवाओं का क्षेत्र हो सकता है। अर्थव्यवस्था विस्तृत कौशल को बढ़ाना उतना ही महत्वपूर्ण होगा जितना कि अधिक निर्माण के लिए परिस्थितियों में सुधार करना होगा। प्रधानमंत्री जी ने भारतीय निर्माण को पुन जीवित करने को सबसे अधिक प्राथमिकता दी है जैसा कि उनके मेक इन इंडिया अभियान और स्लोगन में दिया गया है। इसका उद्देश्य उतना ही मुखर है जितना कि इसके मार्ग में चुनौतियां है ये चुनौतियां अत्यंत विषम हैं क्योंकि भारतीय निर्माण निचले स्तर पर ही थमा हुआ है विशेष रूप से पूर्वी एशिया की सफलता की तुलना में।[25]

यहां दो प्रश्न उठते हैं। क्या निर्माण एक ऐसा क्षेत्र है जिस पर मेक इन इंडिया में ध्यान दिया जाना चाहिए? इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए कौन से उपाय किए जाने चाहिए। एक-एक कर इन पर विचार करें।

नया शैक्षणिक कार्य यह बताता है कि विकास में और इसके लिए ट्रांसफार्मेशनल क्षेत्र के संबंध में विचार का एक अनुपूरक मार्ग है। वृद्धि का सिद्धांत इस ओर इंगित करता है कि रूपांतरणकारी क्षेत्रों का मूल्यांकन इनकी निहित विशेषताओं के आधार पर किया जाना चाहिए और न कि पारंपरिक

[25] जीडीपी में निर्माण के स्तर के लिए हाल ही के अपवर्ड संशोधन वास्तविक होने के स्थान पर कुछ हद तक सांख्यिकीय हैं। इसके अतिरिक्त इसके भाग में कमी के रुझान की पैटर्न को संशोधित आंकड़ें नहीं बदलते तथा सांख्यिकीय विरोध, जगदीश भगवती (स्पिलटिंग एण्ड डिसएंवोडिमेंट अफ सर्विसेज एण्ड डेवलपिंग नेशन्स 1984; द वर्ड इकॉनॉमी 7(2) का तात्पर्य माल से स्पिलटिंग सेवाएं हैं।

निर्माण सेवा के रूप में। (सारणी 1.3) इस प्रकार की पांच विशेषताओं की पहचान निम्नानुसार की गई है:-

- उत्पादकता का उच्च स्तर जिससे आय बढ़ सके।
- विश्व फ्रंटियर (अंतरराष्ट्रीय अभिबिन्दुता) के संबंध में उत्पादकता वृद्धि की तीव्र बढ़ती दर और साथ ही साथ राष्ट्रीय फ्रंटियर (घरेलू अभिबिंदुता) की तीव्र वृद्धि।
- संसाधनों को प्राप्त करने के लिए गतिशील क्षेत्र का प्रबल योग्यता जिसके माध्यम से शेष अर्थव्यवस्था के लिए भी लाभ का प्रसार हो।
- देश में विद्यमान संसाधनों, जो कि विशेषरूप से गैर कौशल प्राप्त श्रमिकों से संबद्ध हों, की मदद से गतिशील की ओर झुकाव।

इस क्षेत्र की व्यापारिक क्षमता इस बात को निर्दिष्ट करती है कि क्या यह क्षेत्र मांग के दबाव को पूरा किए बिना विकसित हो सकता है यह एक ऐसा विषय है जो कि भारत जैसे बड़े देश के लिए महत्वपूर्ण है।

भारत के संदर्भ में यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि यदि ट्रांस्फार्मेशनल (रूपांतरणकारी) क्षेत्र के रूप में निर्माण के विषय में विचार किया जाता है तो यह पंजीकृत या औपचारिक निर्माण होता है जिसमें उच्च उत्पादकता तथा उत्पादकता में तीव्र वृद्धि जैसी पूर्वापेक्षाएं होती हैं। अत: इसे औपचारिक रूप देने का प्रयास महत्वपूर्ण होगा।

भारतीय साक्ष्य यह है कि टेलीकम्यूनिकेशन तथा वित्त जैसे सेवा के कुछ उप क्षेत्र अत्यधिक उत्पादक और गतिशील होने के कारण पंजीकृत निर्माता होते हैं। तथापि, ये क्षेत्र गैर कुशल श्रमिकों की अधिक संख्या को आकर्षित करने में सफल नहीं हुए हैं जिससे इसकी गतिशीलता के लाभ सीमित हुए हैं। दूसरे शब्दों में गतिशील क्षेत्रों को कौशल सम्पन्न क्षेत्र होना चाहिए जिस में भारत को कोई तुलनात्मक लाभ नहीं है। भवन निर्माण (कंस्ट्रक्शन) इसका अपवाद है जो कि गैर कुशल मजदूर बाहुल्य और जो पूर्णत: गतिशील क्षेत्र है। तथापि, भवन निर्माण एक व्यापार योग्य (ट्रेडेबल) क्षेत्र नहीं है जो अपने महत्व को रूपांतरणकारी (ट्रांसफार्मेशनल) क्षेत्र के रूप में भी सीमित करता है।

एक नीति निष्कर्ष जिसे अपनाया जाता है यह है कि मजदूरी बाहुल्य निर्माण के लिए सुधार के प्रयास कौशल में तेजी से उन्नयन के कार्य से करने होंगे क्योंकि कौशल गहन क्षेत्र भारत में गतिशील क्षेत्र होते हैं और अपनी गतिशीलता को बनाए रखने के लिए यह अपेक्षित होता है कि कौशल के लिए बढ़ती मांग के साथ कुशल कार्मिकों की पूर्ति होती रहे; अन्यथा यह क्षेत्र भी गैर प्रतियोगी बन जाएगा।

दूसरे शब्दों में प्रधानमंत्री के मेक इन इंडिया कार्यक्रम को अमली जामा पहनाने के साथ-साथ स्किल इंडिया (दक्ष भारत) के लक्ष्य को उच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

अब हम साधनों की बात करते हैं। कौन सी नीति (पॉलिसी) अपनाएं कि जो मेक इन इंडिया को साकार रूप प्रदान करने

सारणी 1.3: भारत सेवाएं बनाम विनिर्माण स्कोर बोर्ड

	विशेषता	पंजीकृत विनिर्माण	व्यापार, होटल और रेस्तरा	परिवहन भण्डारण और संचार	वित्तीय सेवाएं और बीमा	स्थावर संपदा और कारोबारी सेवाएं आदि	निर्माण
1.	उच्च उत्पादकता	हां	नहीं	कुछ विशेष नहीं	हां	हां	नहीं
2क.	बिना शर्त घरेलू समाभिरूपता	हां	हां	हां	हां	हां	हां
2ख.	बिना शर्त अंतरराष्ट्रीय समाभिरूपता	हां, लेकिन भारत के लिए	नहीं	नहीं	हां	हां	हां
3.	समाभिरूप क्षेत्रों द्वारा संसाधनों का अवशोषण	नहीं	थोड़ा बहुत	थोड़ा बहुत	नहीं	थोड़ा बहुत	हां
4.	कौशल संबंधी रूपरेखा का आधारभूत क्षमता का मेल	कुछ विशेष नहीं	थोड़ा बहुत	थोड़ा बहुत	नहीं	नहीं	हां
5.	विक्रेय और/अथवा दोहराने योग्य	हां	नहीं	थोड़ा बहुत	हां	थोड़ा बहुत	नहीं

स्रोत **: अमिराम और सुब्रह्मण्यम (2015)।**

में हमारे सहायता कर सकें। उन्हें प्रभावकारिता के अवरोही क्रम में और विवाद के आरोही क्रम में 3 श्रेणियों में बांटा जा सकता है।

अविवादित प्रत्युत्तर में नियम बनाकर और करों को कम करके, बुनियादी संरचना तैयार करके श्रम विधि में सुधार करके व्यापारिक पर्यावरण में सुधार करना शामिल है और इन सबके एक साथ मिलने से व्यापार करने की लागत कम होगी, लाभ में वृद्धि होगी और परिणामस्वरूप घरेलू और विदेशी दोनों में निजी क्षेत्र को बढ़ावा मिलेगा जिससे पूंजी निवेश में वृद्धि होगी। वास्तव में इन उपायों से न केवल मैन्यूफैक्चरिंग का, बल्कि सभी क्षेत्रों को लाभ होगा।

प्रत्युत्तरों के अगले सेट-जिन्हें सामान्य शब्दों में ''औद्योगिक नीति'' कहा जाता है का लक्ष्य, विशेष रूप से मैन्यूफैक्चरिंग को बढ़ावा देना, छूट प्रदान करना, पूंजी की लागत को कम करना और कुछ अथवा सभी मैन्यूफैक्चरिंग गतिविधियों में विशेषकर ''विशेष आर्थिक क्षेत्रों (एसईजेड) का निर्माण करना है।

प्रत्युत्तरों के अंतिम सेट-जिन्हें निश्चित रूप से ''संरक्षण वादी'' कहा जाना चाहिए का लक्ष्य मैन्यूफैक्चरिंग की कारोवारिता और परिणामस्वरूप शुल्कों द्वारा विदेशी प्रतियोगिता से घरेलू मैन्यूफैक्चरिंग को कवच प्रदान करना और स्थानीय अपेक्षाएं और निर्यात संबंधी पहल की कार्रवाई शामिल है। गत अनुभवों को देखते हुए इन कार्यवाईयों की पभावकारिता वाद-विवाद के लिए खुली है। ये थोड़ा बहुत डब्ल्यूटीओ के अंतर्गत आने वाली भारत की बाह्य बाध्यताओं के विरुद्ध जा सकते हैं और इससे भारत की खुलेपन की साख को भी कम करके आंका जा सकता है।

बाद वाले दो बिन्दुओं पर अवांछित भरोसा करने से बचने में एक जोखिम है विशेषकर यदि इससे विस्तृत सूक्ष्म बाधा उत्पन्न होती है, जिसमें क्षेत्र विशेष में शुल्क कर परिवर्तन और प्रोत्साहनों के क्षेत्र में अनुदान शामिल हैं। इस संदर्भ में एक दखल जिसे तत्काल लागू किया जा सकता है, उसके व्यापक प्रभाव हो सकते हैं और वह हर हाल में अच्छा है जिससे भारतीय मैन्यूफैक्चरिंग द्वारा सामना किया जा रहा वर्तमान नकारात्मक संरक्षण समाप्त होगा।

1.11 व्यापारिक चुनौतियां

व्यापार को अनेक बाधाओं के साथ जूझना पड़ रहा है। व्यापारिक माहौल लगातार चुनौतीपूर्ण होता जा रहा है क्योंकि वैश्विक प्रगति के संबंध में भारत के निर्यात में गिरावट आयी है तथा मेगा रीजनल ट्रेडिंग व्यवस्था संबंधी समझौते से भारत को बाहर कर दिए जाने का खतरा है।

विकास की त्वरित और स्थायी दरें निर्यात विकास की त्वरित दरों से संबंधित हैं। कुछ देशों, यदि कोई है ने अकेले अपने घरेलू बाजार की कम दर 7+ की विकास दर तक प्रगति की है। वास्तव में ओस्ट्री (2006)[26] के अनुसार स्थायी विकास मुख्यत: मैन्यूफैक्चरिंग निर्यातकों की अपनी विकास दर जो लगभग 36 प्रतिशत तक होती है पर जीडीपी अनुपात की तुलना में औसत विकास से संबंधित होने के कारण ही स्फुरित होती है। भारत को भी इससे अलग स्थिति की अपेक्षा नहीं करनी चाहिए।

यदि ऐसा है तो भारत क्या पूर्वानुमान करे? वर्ष 2002-03 और 2008-09 के बीच भारत के त्वरित विकास चरण के दौरान जीडीपी से संबंधित सेवाओं के निर्यात के अनुपात में आश्चर्यजनक वृद्धि हुई जो पहले लगभग 4.0 प्रतिशत प्रति थी, वह बढ़कर लगभग 9.0 प्रतिशत हो गयी। इसके विपरीत मैन्यूफैक्चरिंग एक्सपोर्ट कम था (चित्र 1.23)। तथापि, वैश्विक आर्थिक संकट के पश्चात् लगता है कि भूमिकाएं परिवर्तित हो गयीं। मैन्यूफैक्चरिंग निर्यातकर्ता को यह लगता है कि वे सेवा निर्यातकों की तुलना में बेहतर कर रहे हैं। इससे भी अधिक दुखदायी बात यह है कि गत पांच वर्षों के दौरान दोनों ने ही गिरावट का सामना किया है जो एक अच्छा संकेत नहीं है।

ऐसा ही पैटर्न तब देखने को मिलता है जब हम विश्व के जीडीपी विकास के संबंध में (चित्र 1.24) भारतीय निर्यात वृद्धि की आधिक्यता (सेवाओं और वस्तुओं की) की गणना करते हैं। वर्ष 2000 के प्रारंभ में यह अधिकता विशेषकर सेवाओं के मामले में अधिक और बृद्धिमान थी। वर्ष 2001 में विश्व जीडीपी में हुई प्रत्येक एक प्रतिशत की वृद्धि भारत की निर्यात सेवाओं में हुई 3 प्रतिशत की वृद्धि से संबंधित थी जो बाद के कुछ वर्षों में 8% से भी अधिक तक बढ़ गई

[26] Johnson, Simon, Jonathan D. Ostry, and Arvind Subramanian, *"The Prospects for Sustained Growth in Africa; Benchmarking the Constraints,"* 2007, IMF Working Papers 07/52, International Monetary Fund.

बॉक्स 1.4 : मेक इन इंडिया का आधार संरक्षण नहीं बल्कि नकारात्मक संरक्षण को समाप्त करना है।

प्रतिकारी शुल्क (सीवीडी) सबंधी सभी छूटों को समाप्त करने से भारतीय विनिर्माताओं के द्वारा सामना किए जा रहे नकारात्मक संरक्षण समाप्त हो जाएगा और इससे मेक इन इंडिया की पहल में मदद मिलेगी और इससे भारत की अन्तर्राष्ट्रीय बाध्यताओं का भी उल्लंघन नहीं होगा।

एक प्रत्युत्तर जिससे मैन्यूफैक्चरिंग में सहायता मिलेगी और ''मेक इन इंडिया'' के प्रयास को बिना किसी कठिनाई के सहायता मिलेगी क्योंकि व्यावसायिक माहौल में वृद्धि होगी जबकि औद्योगिक नीति विवादास्पद और महंगी है अथवा संरक्षणवादी है। प्रतिकारी शुल्क (सीवीडी) में छूट को समाप्त करने से आयात पर विशेष अतिरिक्त शुल्क (एसएडी) लगता है। इससे सहायता कैसे होगी?

कर सिद्धान्त के मामले में यह एक सुस्वीकृत मान्यता यह है कि घरेलू उत्पादन और आयात के बीच प्रोत्साहनों की न्यूट्रेलिटी को प्राप्त करने के लिए अपेक्षित होता है कि सभी घरेलू अप्रत्यक्ष कर भी आयातों पर लगाए जाएं। इसलिए यदि कोई देश बिक्री कर मूल्यवर्धित कर (बैट), अथवा सीमाशुल्क अथवा जीएसटी घरेलू बिक्री/उत्पादन पर लगाता है तो यह आयातों पर भी लगना जरूरी है तथापि भारत की मौजूदा अप्रत्यक्ष कर प्रणाली कभी-कभी देश में उत्पादित वस्तुओं की तुलना में विदेशी उत्पादन के पक्ष में होती है।

प्रतिकारी शुल्क जिसे घरेलू उत्पादकों पर सीमा शुल्क को समायोजित करने के लिए लगाया जाता है वह आयात की संपूर्ण रेंज पर लागू नहीं होता है।

इन रियायतों को अंकीय बनाया जा सकता है। देश में उत्पादित गैर-तेल सामग्री पर सीमा शुल्क की प्रभावी दर लगभग 09 प्रतिशत है। सैद्धांतिक रूप से सीवीडी की प्रभावी संग्रहण दर भी समान होनी चाहिए लेकिन वास्तव में यह मात्र लगभग 06 प्रतिशत है। यह अंतर न केवल सरकार को 40 हजार करोड़ रुपए की राजकोषीय लागत को दर्शाता है बल्कि यह स्वदेश में उत्पादित सामग्री की तुलना में विदेशों में उत्पादित सामग्री के पक्ष में नकारात्मक संरक्षण को दर्शाता है।

यहां पर तीन महत्वपूर्ण भेदों पर ध्यान दिया जाना जरूरी है। पहला तो यह है कि विनिर्माताओं की इनपुट लागत को कम करके इनपुट पर सी.वी.डी. की छूट देकर उनकी सहायता की जा सकती है परन्तु मौजूदा प्रणाली के अन्तर्गत और भविष्य में जब जीएसटी लागू हो जाएगा तो इन पुटों पर सीवीडी का इनपुट टैक्स क्रेडिट के रूप में सदैव पुन: दावा किया जा सकेगा। इसलिए सीवीडी संबंधी रियायत कोई अतिरिक्त राहत प्रदान नहीं करती।

दूसरे का संबंध उस स्थिति से है जब सीमा शुल्क और सीवीडी दोनों में छूट दे दी जाय। स्पष्ट रूप से ऐसा लगता है कि इससे घरेलू उत्पादन और आयातों के बीच न्यूट्रल स्थिति हो जाएगी लेकिन ऐसा नहीं है। जब आयातित वस्तुएं सीवीडी लगे बिना बाजार में आती है और चूंकि स्रोत देश में यह शून्यदर पर है इसलिए इस पर किसी भी प्रकार का कोई इनपुट टैक्स का भार नहीं होता है। संगत घरेलू वस्तु पर कोई सीमा शुल्क नहीं लगता परन्तु चूंकि इसे छूट मिली हुई है इसलिए इनपुट टैक्स क्रेडिट का दावा नहीं किया जा सकता। इसलिए घरेलू सामान विदेशी सामानों की तुलना में कम प्रतिस्पर्धी होता है क्योंकि इस पर इनपुट टैक्स लगा होता है जोकि विदेशी वस्तु पर नहीं लगा होता।

तीसरे, सीवीडी से बहुत से आयातित सामान को मुक्त करने के लिए एक महत्वपूर्ण तर्क यह है कि हमारे यहां उनका मुकाबला करने के लिए कोई घरेलू उत्पादन नहीं है। यह तर्क दोषपूर्ण है क्योंकि यदि घरेलू उत्पादन प्रतिस्पर्धा नहीं करता है तो यह उन प्रोत्साहनों की न्यूट्रेलिटी प्राप्त नहीं करने का परिणाम होगा जो सीवीडी से सृजित होंगे। घरेलू उत्पादक हो सकता है यह सोचकर खेल के मैदान में न उतरे कि यह उनके स्तर का नहीं है।

इस प्रकार से भारतीय कर नीति एक प्रकार से घरेलू मैन्यूफैक्चरिंग को बुरी तरह से दण्डित करती है। आखिर इस विसंगति का हल क्या है? इसका हल एकदम साधारण है इसके लिए सुनियोजित जीएसटी को लागू करना होगा जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धी दर और सूक्ष्मता के साथ परिभाषित रियायतें शामिल होंगी। पहली बार में घरेलू मैन्यूफैक्चरिंग पर लगे दण्ड को समाप्त किया जाएगा क्योंकि जीएसटी (केन्द्र और राज्य) स्वत: ही प्रोत्साहनों की न्यूट्रेलिटी को सुनिश्चित करने के लिए आयातों पर लागू हो जाएगा। ऐसा होने से भारत संरक्षणवादी हुए बिना और विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यूटीओ) अथवा मुक्त व्यापार करारों (एफटीए) के अन्तर्गत की गई अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार बाध्यताओं में से किसी का उल्लंघन किए बिना घरेलू मैन्यूफैक्चरिंग को बढ़ावा दे सकेगा।

इसके साथ-साथ ही सीवीडी पर लागू रियायतों को समाप्त करने से जीएसटी के प्रभाव को आंशिक रूप से प्रोत्साहित किया जा सकेगा। स्थिति ऐसी बननी चाहिए कि शासन व्यवस्था रियायत मुक्त हो। यदि किसी क्षेत्र विशेष को सीवीडी से रियायत की जरूरत है तो उसे अपने मामले को उच्चतम राजनीतिक स्तर पर उठाऐ जाने की जरूरत है।

एक तरह से देखा जाए तो भारत एक तरफ जहां स्वयं को नकारात्मक संरक्षण की स्थिति में पाता है वहीं दूसरी ओर शुल्कों की दरों को ऊंची भी करना चाहता है। शुल्क की दरों को ऊंचा करने का मुकाबला करने की यह बेहतर स्थिति है जिससे भारत की खुलेपन की साख में वृद्धि होगी और अनावश्यक तथा महंगे नकारात्मक संरक्षण भी समाप्त होगा।

और वित्तीय संकट से एकदम पूर्व यह लगभग 5 प्रतिशत पर स्थिर थी। इसके बाद इसमें निरंतर गिरावट आई और एकदम हाल ही के आकलनों से एक की अधिकता का पता चला है। विनिर्मित निर्यातों के यहीं पैटर्न विस्तृत रूप से समान है हालांकि यह बाजार के चढ़ने के दौरान सेवाओं की तुलना में इसमें कम अधिकता थी।[27]

[27] **वैश्विक विकास की तुलना में वैश्विक व्यापार की गिरती नम्यता को कौंसटेन्टीनेस्क्यू सी, ए मैट्टू और एम रूटा (2015) ''दी ग्लोबल ट्रेड स्लो डाउन: साइक्लिकल ऑर स्ट्रक्चरल? विश्व बैंक नीति अनुसंधान आधार पत्र डब्ल्यूपीएस 7158 में दस्तावेजबद्ध किया गया है।**

चित्र 1.23: विनिर्मित वस्तुओं तथा सेवाओं का निर्यात (स.घ.उ. का प्रतिशत), 2000-01 से 2014-15 के दौरान

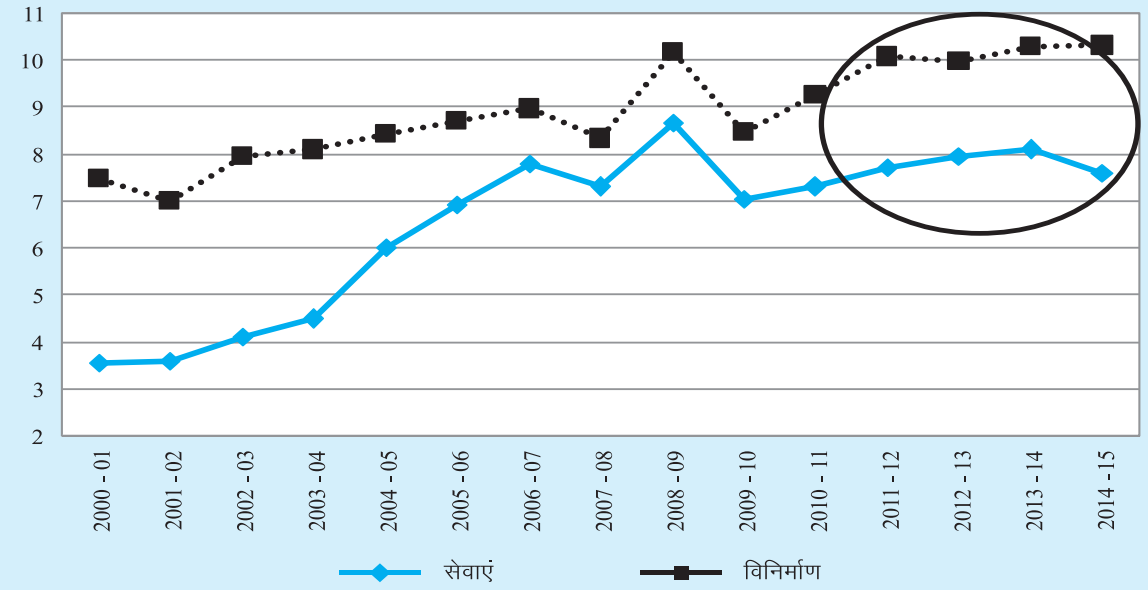

चित्र 1.24: 2000-01 से 2014-15 (2009-10 को छोड़कर) के दौरान विकास की प्रगती की तुलना में भारतीय निर्यात की आधिम्यता

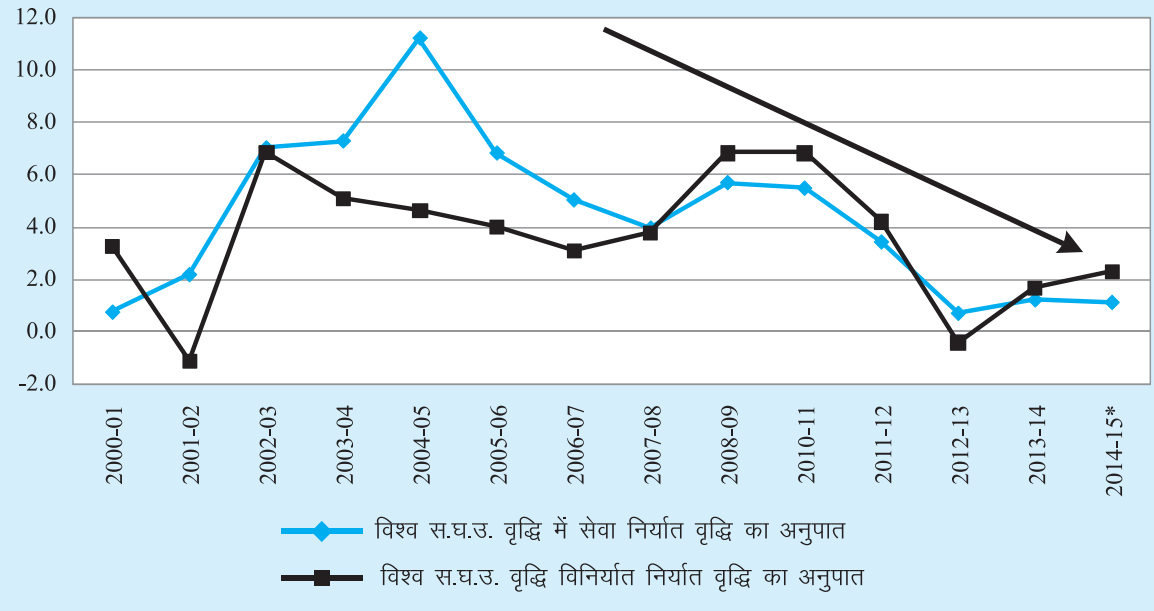

स्रोत : आईएमएफ, डब्ल्यूईओ, डीजीसीआई और एस तथा भारतीय रिजर्व बैंक।

टिप्पणी : निर्यात आधिक्य गणना तीन वर्ष के चल औसत पर आधारित है। इसमें वर्ष 2009-2010 को शामिल नहीं किया गया है क्योंकि निर्यात में आयी अत्यधिक गिरावट के कारण आधिक्य गणना को व्यक्त करना कठिन है।

दो चार्टों को मिलाकर देखने से भारत के लिए यह संदेश प्रतीत होता है कि बाह्य व्यापार परिवेश को दो तरफा लड़ाई झेलनी पड़ रही है। एक तो है वैश्विक विकास की दर में गिरावट का आना, जिससे भारतीय निर्यात में कमी आएगी और दूसरा है किसी वैश्विक विकास में व्यापार की गिरती दर के कारण और भी कम हो जाएगी।

इसलिए भारत को विशेष रूप से सेवा निर्यातों-विकास के प्रेरक घटकों-के बारे में जिसकी गति बहुत धीमी हो गई है,

के संबंध में अधिक चौकन्ना होना होगा। विकास दर को कम करने में सहयोग करने वाले घटकों के अलावा वे परस्पर विरोधी बातें हैं:- कमजोर बुनियादी ढांचा और मैन्यूफैक्चरिंग के मामले में चुनौतीपरक श्रमविधि और सेवाओं के मामले में कुशल श्रमिकों की बढ़ती मजदूरी और कमी।

व्यापार के लिए प्रतिकूल हो रहे बाह्य वातावरण के अलावा भारत को तेजी से परिवर्तित होते परिवेश से भी संघर्ष करना होगा। चूंकि नई सरकार, भारतीय अर्थव्यवस्था में पुन: स्फूर्ति प्रदान करने की तैयारी कर रही हैं इसलिए उसे तीन उल्लेखनीय प्रकारों से पर्याप्त रूप से परिवर्तित होते अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार परिदृश्य का सामना करना होगा।

प्रथम, उत्पादन के अपूर्ण अनुवर्ती स्तरों पर आधारित वैश्विक मूल्यवर्धित श्रृंखलाओं के तथ्य और उन्हें न्यूनतम लागत लक्ष्यों पर तलाश करना गिरावट के बावजूद भी विशेषकर एशिया में व्यापार की विशेषता का वर्णन करना उनका गुण हो गया है। भारत धीरे-धीरे इन श्रृंखलाओं में समायोजित होता जा रहा है लेकिन अधिकांश अन्य गतिमान एशियाई अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में उसका स्तर काफी ऊंचा है।

दूसरा, मेगा क्षेत्रीय करारों पर गंभीरता के साथ वार्ताएं आरंभ की गई हैं। एशिया के भीतर और एशिया तथा अमेरिका के बीच व्यापार समेकन को उल्लेखनीय रूप से बढ़ावा मिलेगा यदि और जब ट्रांसफैसिफिक पार्टनरशिप (टीपीपी) पर वार्ता हो जाती है और अनुसमर्थन मिल जाता है। इसी प्रकार से उत्तरी अमरीका और यूरोप के बाजार एक साथ आएंगे यदि और जब ट्रांसएटलांटिक ट्रेड एण्ड इनवेस्टमेंट पार्टनरशिप (टीटीआईपी) पर निष्कर्ष आ जाता है तो इससे लगभग आधा विश्व व्यापार इन दो करारों के अन्तर्गत आ जाएगा।

तीसरा, चीन, जो अभी हाल ही तक यथास्थिति बनाए रखना चाहता था अब वह मूक दर्शक बने रहने के बजाय सक्रिय भागीदारी करने हेतु परिवर्तन के लिए तैयार बैठा है। वह व्यापार नियमों के अगले दौर में शामिल होने और संभवत: उसके स्वरूप की रचना करने का इच्छुक है। यह परिवर्तन अर्थव्यवस्था को पुन: संतुलित करने के घरेलू आदेशों की प्रतिक्रिया है जिसके लिए चीनी अर्थव्यवस्था में भारी उदारीकरण की जरूरत पड़ेगी और टीपीपी तथा टीटीआईपी सहित अमेरिकी व्यापार प्रयासों द्वारा बाहर कर दिए जाने का डर भी शामिल है। चीन रीजनल कम्प्रीहेंसिव इकोनॉमिक पार्टनरशिप (आरसीईपी) जिसमें भारत भी शामिल हैं, दी एसोसिएशन ऑफ साउथ ईस्ट एशियन नेशन्स (एएसईएएन) देशों, साथ ही जापान, कोरिया, आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड का भी केंद्र है।

व्यापार में आए इस वैश्विक परिवर्तन के प्रति भारत को किस तरह से प्रतिक्रिया करनी चाहिए। भारत के समक्ष दो विकल्प हैं एक तो है मापित एकीकरण (यथास्थिति और/अथवा (आरसीईपी) और दूसरा है महत्वकांक्षी एकीकरण (टीपीपी के द्वारा)। मापित एकीकरण में भारत की राजनैतिक बाधाओं और क्षमता द्वारा आदेशित घरेलू सुधार के मध्यम परन्तु स्थायी गति शामिल है जो केवल उस प्रकार के क्षेत्रीय करारों को जारी रख सकते है जिन्हें भारत ने एशियायी भागीदारों के साथ समझौता किया है। इसके कार्यान्वयन के लिए तुलनात्मक रूप से कुछ वाध्यताएं उदारवादी रियायतें और अपवाद तथा एक उदार समय तालिका की जरूरत है।

यथास्थिति परिदृश्य में एक जोखिम भारत को विशाल एकीकृत बाजारों से न्यून व्यापारिक संभावनाओं के साथ बाहर कर देने का है और वैश्विक मूल्य श्रंख्लाओं की प्रकृति के कारण व्यापार में निवेश और बौद्धिक सम्पदा घुलमिल गई है उन्होंने भी निवेश संभावनाओं को कम किया है (आरसीईपी में शामिल होने से निश्चित रुप से सहायता मिलेगी लेकिन पूरी तरह से नहीं क्योंकि अपेक्षा यह है कि आरईसीईपी में समग्र मानदण्ड (टीपीपी) और (टीटीआईपी) के अंतर्गत की तुलना में कमजोर होंगे)। उच्चतर शुल्कों का सामना करने के लिए भारत के निर्यातकों से न केवल मानदण्ड विचलन प्राप्त होंगे बल्कि वे भिन्न और उच्चतर उत्पाद तथा स्थायी विकास मानकों से भी निरन्तर संघर्ष करना होगा। विश्व विकास और भारत के निर्यात आधिक्यता दोनों में मंदी के संदर्भ में कोई भी संभावित अपवर्जन से परेशानी और भी बढ़ेगी।

महत्वाकांक्षी एकीकरण का आशय निश्चित रुप से यह निकाला जाना चाहिए कि भारत टीपीपी में शामिल हो रहा है अथवा भविष्य में किसी दिन शामिल होने की मांग करने की कोशिश कर रहा है। इस विकल्प के चारों ओर अनिश्चितता के पर्याप्त वातावरण बना हुआ है क्योंकि समय और स्वयं टी. पी.पी. की शर्तें अभी तक अस्पष्ट हैं तथापि जो स्पष्ट है वह यह है कि किसी भी भावी टी.पी.पी. के अन्तर्गत पर्याप्त उदारीकरण बाध्यताएं उनसे कहीं अधिक होंगी जो भारत के मौजूदा एफ.टी.ए. के अंतर्गत हैं और संभवत: भारत के घरेलू सुधार नियोजित प्रयास से आगे है। भारतीय व्यापार क्षमता का उल्लेखनीय उन्नयन भारत के लिए जरूरी होगा ताकि वह इन मेगा क्षेत्रों में शामिल होने का चयन करने में सक्षम हो सके।

1.12 जलवायु परिवर्तन

भारत में पेट्रोलियम पदार्थों पर उल्लेखनीय उच्चतर कराधान लागू करने और नवीकरणीय ऊर्जा क्षेत्र को

पुनर्ऊर्जित करने सहित पर्यावरण संबंधी अनेक कार्रवाईयां की है। पर्यावरण परिवर्तन पर होने वाली पेरिस समझौते पर इससे सकारात्मक योगदान दिया जा सकता है।

इस वर्ष के अंत में पूरी दुनिया के राष्ट्राध्यक्ष पेरिस में बैठक करेंगे जिसमें दिसंबर 2015 तक यूनाइटेड नेशन्स फ्रेमवर्क कन्वेंशन ऑन क्लाइमेट चेंज (यू.एन.एफ.सी.सी.सी.) के अंतर्गत नए करारों संबंधी समझौतों को अंतिम रुप देंगे। पर्यावरण परिवर्तन पर सभी देशों द्वारा वर्ष 2020 के बाद से न केवल साझा बल्कि विभिन्न उत्तरदायित्वों के सिद्धांत के अनुपालन में एक कार्रवाई की अपेक्षा है।

दी इंटरगवर्नमेंटल पैनल ऑन क्लाइमेट चेंज (आई.पी.सी.सी.) में वर्ष 2014 मे प्रकाशित अपनी हालिया रिपोर्ट दी फिफ्थ एसेसमेंट रिपोर्ट में टिप्पणी की है कि औद्योगिक क्रांति के आगमन से ग्रीन हाउस गैसों (जी.एच.जी.) के मानवजनित उत्सर्जन में वृद्धि हाने का रुझान देखने को मिल रहा है, जिसके कारण मानवजनित कार्बनडाई ऑक्साइड का आधा उत्सर्जन तो गत 40 वर्षों के दौरान ही हुआ है। वर्ष 1983-2012 की अवधि के दौरान 30 वर्ष की यह अवधि पिछले 1400 वर्ष की अवधि में सबसे अधिक गर्म रही है। वर्ष 1970-2010 की अवधि के दौरान जीवाश्म ईंधन दहन और औद्योगिक प्रक्रिया से कुल ग्रीन हाउस गैस से उत्सर्जित हुई कार्बनडाई आक्साइड कुल ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन का बड़ा भाग रही है।

जलवायु प्रणाली में होने वाले परिवर्तन के कारण जीवनयापन के तौर-तरीको, खेतीबाड़ी और खाद्य सुरक्षा पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। लगता है कि भारी गर्मी लंबे समय तक पड़ा करेगी और वर्षा पैटर्न में परिवर्तनों के साथ ही यह घनीभूत होगी। इसका प्रतिकूल प्रभाव भारत जैसे उष्ण कटिबंधीय क्षेत्र के देशों और भारत के भीतर अधिक ही होगा। गरीब लोगों को अधिक कठिनाई का सामना करना पड़ेगा।

जलवायु परिवर्तन की समस्याओं को हल करने में भारत उल्लेखनीय योगदान कर सकता है। कुछ अन्य देशों से भिन्न भारत में पेट्रोलियम संबंधी राज्य सहायता को समाप्त करने के लिए पर्याप्त कार्रवाई की है और इससे भी आगे बढ़ते हुए इन पेट्रोलियम उत्पादों पर पर्याप्त कर लगाने की कार्रवाई की है।

भारत इन कार्रवाइयों से कार्बन सब्सिडाइजेशन व्यवस्था से एक महत्वपूर्ण कार्बन कराधान व्यवस्था तथा नकारात्मक मूल्य से अंतर्निहित सकारात्मक मूल्य की ओर बढ़ा है और यह परिवर्तन बहुत बड़ा है। उदाहरण के लिए अक्टूबर, 2014 से की गई हालिया कार्रवाईयों के प्रभावस्वरूप वस्तुतः पेट्रोल (ब्रांड रहित) के मामले में कार्बन डाईआक्साइड की प्रति टन मात्रा पर 60 अमेरीकी डालर के समकक्ष और डीजल (ब्रांड रहित) के मामले में प्रति टन लगभग 42 अमेरीकी डालर का वस्तुतः कार्बन कर लगाया गया है। वास्तव में अंतर्निहित कार्बन कर (पेट्रोल के लिए 140 अमेरीकी डालर तथा डीजल के लिए 64 डालर पर्याप्त रूप से उससे अधिक ही है जिसे आज कार्बन डाईआक्साइड उत्सर्जन पर प्रति टन 25 अमेरीकी डालर (चित्र 1.25) के संबंध में उचित प्रारंभिक कर समझा गया है। पेट्रोलियम पदार्थों पर कर लगाने के मामले में भारत आज बहुत ऊंचे स्थान पर है। भारत द्वारा केवल हाल ही में उठाए गए कदमों से पर्यावरण और जलवायु परिवर्तन संबंधी प्रत्ययपत्रों में स्पष्ट रुप से देखा जा सकता है।

चित्र 1.25: पेट्रोल तथा डीजल पर बढ़ते उत्पाद शुल्क से प्राप्त अप्रत्यक्ष कार्बन कर 2012 से जनवरी 2015 (यूएसएस/टीसीओ2)

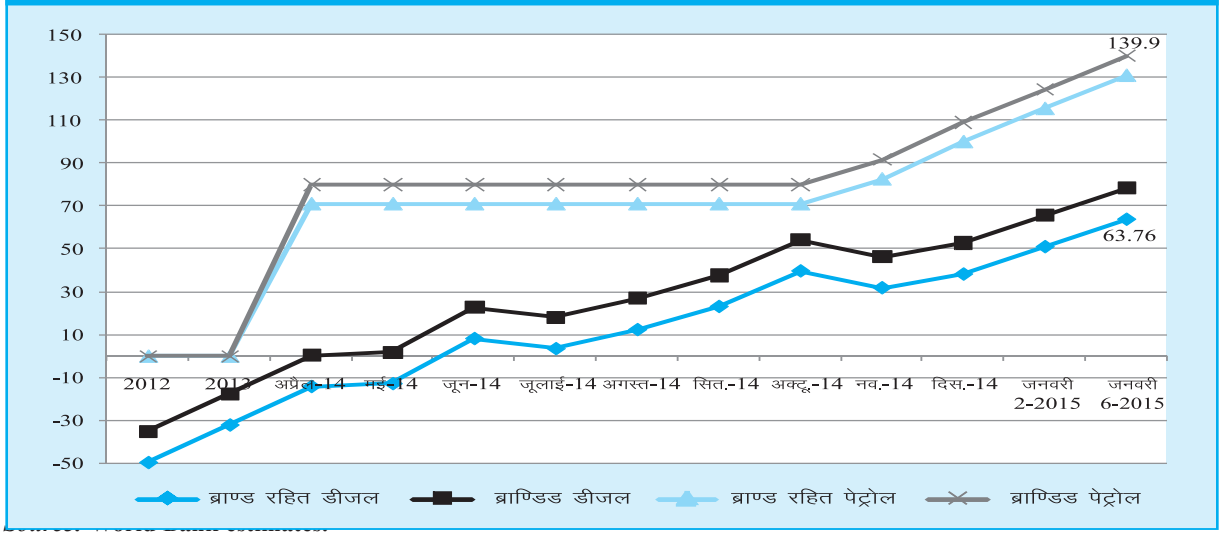

इसके साथ ही भारत में प्रति टन 50/- रुपए के कोयला उप-कर को बढ़ाकर 100/- रुपए प्रतिटन कर दिया है जो कि लगभग प्रतिटन एक अमेरीकी डालर के कार्बन कर के समतुल्य है। सांख्यिकीय जीवनमान के आधार पर भारत में विद्युत उत्पादन के लिए कोयले की स्वास्थ्य परक लागत अनुमानत: प्रतिटन 3.41 अमेरीकी डालर से प्रतिटन 51.11 अमेरीकी डालर के बीच है। औसत संख्या 27.26 अमेरीकी डालर ही प्रति टन है। कोयला चालित विद्युत संयंत्रों से होने वाले उत्सर्जन की स्वास्थ्य लागत में पूर्ण होने वाली कार्डियोप्लमोनरी मृत्यु और अल्पावधिक प्रकटन के गंभीर प्रभावों तथा दीर्घावधिक प्रकटन के जीर्ण प्रभावों से उत्पन्न बीमारियों से संबंधित लागतें भी शामिल है। इन पूर्णत: घरेलू बाध्यताओं को समायोजित करने के लिए कोयले पर उच्चतर करों को विद्युत के मूल्यकरण के लिए अंतवृद्धियों के प्रति संतुलन बनाए रखने के लिए उसे समायोजित करना पड़ेगा और इसी कारण से 300 मिलियन घरों में अभी भी लोग बिना बिजली के रह रहे हैं।

इस समझौताकारी तालमेल (ट्रेड-ऑफ) से यह पता चलता है कि नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों सहित ऊर्जा पहुंच के वैकल्पिक मार्गों पर विचार किए जाने की आवश्यकता है। जनवरी, 2010 में प्रारंभ हुए जवाहर लाल नेहरू राष्ट्रीय सौर मिशन पूरे देश में अपना विस्तार करने के लिए नीतिगत स्थितियों को निर्मित करके सौर ऊर्जा के क्षेत्र में भारत को निर्मित करके सौर ऊर्जा के क्षेत्र में भारत को वैश्विक लीडर घोषित करता है। इस स्कीम के लिए बारहवीं योजना वित्तीय परिव्यय 8795 करोड़ रुपए का है। इस सौर मिशन की क्षमता 20,000 मेगावाट से एक लाख मेगावाट तक लगभग 5 गुन हो रहा है। अत: इसके लिए 100 बिलियन अमेरीकी डालर के अतिरिक्त निवेश की आवश्यकता है।

इस पहल का मुख्य उद्देश्य लगभग 300 मिलियन घरों को ऊर्जा प्रदान करना है। इसका संपार्श्विक लाभ यह होगा कि इससे कार्बन डाईआक्साइड के उत्सर्जन में लगभग 165 मिलियन टन की कमी आएगी।

भारत के जलवायु परिवर्तन संबंधी लक्ष्यों और ऊर्जा संबंधी प्रयासों को समायोजित करते हुए कोयले को जलाने की प्रक्रिया को और भी स्वच्छ और अधिक पर्यावरणानुकूल बनाने के लिए एक बड़ी प्रौद्योगिकीगत खोज की जरूरत होगी। यदि भारत पर्यावरण पर ध्यान केंद्रित करता है तो उसी के संगत विश्व को भी कोयला प्रौद्योगिकी अनुसंधान के क्षेत्र में अधिक संसाधन जुटाने होंगे। इसका अर्थ यह हुआ कि कोयला प्रौद्योगिकियों में सुधार के लिए अनुसंधान और विकास के क्षेत्र में बृहत्तर अन्तर्राष्ट्रीय सार्वजनिक निवेश की आवश्यकता होगी और यदि इस अनुसंधान के लिए निजी क्षेत्र को प्रोत्साहित किया जाता है तो उन्नत देश निश्चित रुप से उच्च और बढ़ती हुई कार्बन मूल्यन पर तत्काल ध्यान देंगे। एक नए प्रकार के वैश्विक सौदे की विस्तृत रूप रेखा और उन्नत तथा उभरती हुई अर्थव्यवस्था से अपेक्षित योगदान आदित्य मटू और अरविंद सुब्रमण्यम के ग्रीन प्रिन्ट में देखा जा सकता है। *जलवायु परिवर्तन पर सहयोग के लिए एक नया दृष्टिकोण।*

1.13 महिलाओं का सशक्तीकरण: नारीशक्ति को बेड़ियों से मुक्त करना

महिलाओं की स्थिति और उनके साथ किए जाने वाले व्यवहार में सुधार लाना प्रमुख विकास की चुनौती है। थोड़े समय के लिए परिवार नियोजन लक्ष्यों और प्रोत्साहनों के प्रावधान, महिला नलबंदी पर अनपेक्षित ध्यान केंद्रित करते हैं।

माननीय प्रधानमंत्री जी ने 22 जनवरी, 2015 को हरियाणा के पानीपत से बेटी बचाओ-बेटी पढ़ाओं अभियान की शुरूआत की थी। इस अभियान का उद्देश्य भारतीय समाज द्वारा लड़कियों को कमतर आंकने की सोच में सकारात्मक बदलाव लाना है। लेकिन भारतीय समाज में लड़कियों के साथ भेदभाव करने की परस्परविरोधी सोच विद्यमान है। एक तरफ तो भारत में महिला राष्ट्रपति और महिला प्रधानमंत्री के रूप में जानीमानी महिलाएं हुई हैं तथा राष्ट्रीय और राज्य स्तरों पर बड़े राजनीतिक दलों की प्रमुख की महिलाएं हैं। इसके अलावा कई महिलाएं कैबिनेट रैंक के मंत्रीपद तक पहुंची है तथा कई महिलाएं उद्योग प्रमुख (विशेषकर बैंकिंग क्षेत्र में) हुई हैं और इसके बावजूद यूएनडीपी की अद्यतन मानव विकास रिपोर्ट (2014 के अनुसार) मानव विकास सूचकांक (एच.डी.आई) में 187 देशों में भारत 135वें स्थान पर है और लिंग असमानता सूचकांक (जी.आई.आई.) में भारत का स्थान 152 देशों में 127वां है। जीआईआई स्त्री और पुरुष के बीच उपलब्धियों में असमानता दर्शाने वाले समग्र उपायों को तीन प्रकार:प्रजनन स्वास्थ्य, अधिकारिता और श्रम बाजार के आधार पर देखता है इसके अनुसार भारत एच.डी.आई. पर सभी देशों से 25 प्रतिशत नीचे है और जी.आई.आई. में तो यह प्रतिशत और भी गिरकर 20 प्रतिशत ही रह जाता है इसके अलावा भारत में लड़कों की तुलना में लड़कियों की जन्मदर सापेक्षतया पूरी दुनिया में कम है और वर्ष 2001 में जहां यह गिरावट एक हजार लड़कों की तुलना में 927 लड़किया थी वहीं 2011 में एक हजार लड़कों की तुलना में लड़कियों की संख्या 918 ही रह गई। (चित्र 1.26) चीन उन कुछ देशों में ऐसा देश है जहां लड़कों की तुलना में लड़कियों की जन्मदर और भी कम है।

चित्र 1.26: प्रति 100 लड़कियों पर लड़के, 1990-2010

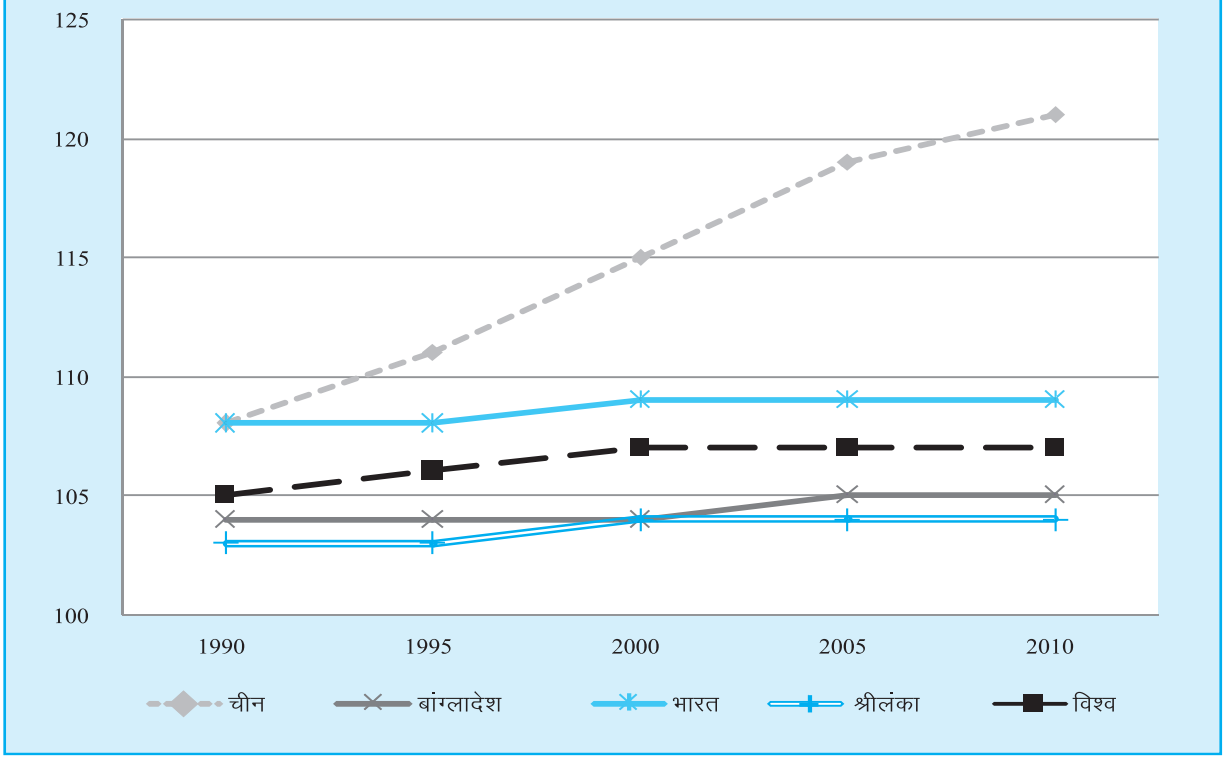

स्रोत : स्टैटिस्टिकल इयरबुक फॉर एशिया एण्ड दी पेसिफिक 2011।

लेकिन बिलासपुर, छत्तीसगढ़ में नवंवर 2014 में हुई त्रासदी जिसमें 13 युवा महिलाओं की मौत हो गई थी जिनके बहुत ही छोटे-छोटे बच्चे थे और 45 गंभीर रूप से बीमार हो गई थी। एक ऐसी विशिष्ट और गंभीर समस्या महिला नसबंदी की ओर इशारा करती है जिस पर तत्काल ध्यान दिए जाने की जरूरत है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण की तीसरे दौर की रिपोर्ट (एनएफएचएस-3, 2005-06) में बताया गया है कि तमिलनाडु और महाराष्ट्र जैसे विकसित राज्यों में महिला नसबंदी 90 प्रतिशत है और सभी गर्भ निरोधकों की प्रतिशतता 76 है। तमिलनाडु और महाराष्ट्र दोनो राज्यों में महिला नसबंदी की औसत आयु 24.9 वर्ष सूचित की गई है।

ऐसा लगता है कि बढ़ती जनसंख्या को नियंत्रित करने पर विशेषकर महिलाओं पर केन्द्रित नए ढंग से ध्यान केन्द्रित किया गया है और जिस साधन को अपनाया गया है उसे अपनाने में अनुरोध और जबरदस्ती के बीच की रेखा धुंधली हो जाती है। अनुरोध नसबंदी और नसबंदी के लिए न केवल गरीब दम्पत्तियों को प्रोत्साहन के रूप में किया जाता है वल्कि स्थानीय निकायों के कार्य निपादन के लिए उन्हें पुरस्कार के रूप में प्रोत्साहित भी किया जाता है। इसे संवध नपरक और प्रेरणदायी नारे के रूप में वर्णित किया गया है। परिणामस्वरूप महिला नसबंदी के लिए बड़े-बड़े कैंप लगाए जाते है। भारत की जनसंख्या नीति परिवार नियोजन उपायों विशेषकर महिलाओं संबंधी गर्भ निरोधकों, उन्हें प्रजनन का मामूली विकल्प अथवा स्वायत्तता के साथ विस्तार करने पर ध्यान केन्द्रित किया गया प्रतीत होता है।

वर्ष 2012-13 के दौरान किए गए कुल नसबंदी आपरेशनों, दूरबीन नसबंदी/नलबंदी की संख्या 97.4 प्रतिशत रही जबकि पुरूष नसबंदी आपरेशनों, कम जटिल जोखिम के बावजूद, की संख्या केवल 2.5 प्रतिशत रही (1.27) 1 महिला नसबंदी के प्रति सरकारी व्यय की स्थिति भी सही नहीं है वर्ष 2013-14 के दौरान परिवार नियोजन के लिए निर्धारित 397 करोड़ रुपए की बजट राशि में से 85 प्रतिशत (338 करोड) राशि महिला नसबंदी पर ही खर्च कर दी गई। तुलना करें तो पाएंगे कि कुल बजट का 1.5 प्रतिशत स्पेसिंम तरीकों पर खर्च किया गया और 13 प्रतिशत बुनियादी ढांचे और संचार पर खर्च किया गया।

अधिकांशतया जन्मदर नियंत्रण पर ध्यान देने वाली जनसंख्या नियंत्रण नीति को बढ़वा देने में आने वाली नकारात्मक बातों से शिशुलिंग अनुपात में गिरावट आयी है। यदि प्रत्येक परिवार में कम बच्चे हो तो मन मे यह भावना अधिक बलवर्ती रहती है कि परिवार में कम से कम एक लड़का तो होना ही चाहिए।

चित्र 1.27: पुरूष नसबन्दी तथा स्त्री नसबन्दी संख्या 1980-81 से 2012-13 (हजार में)

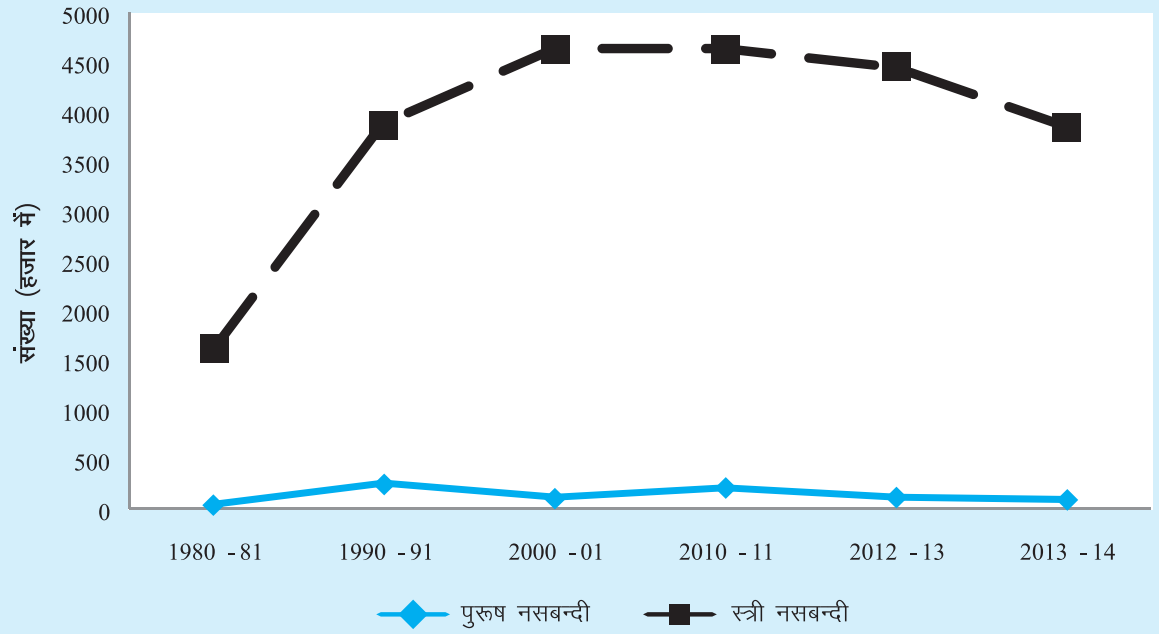

स्रोत : स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय।

ऐसी स्थिति में सरकार के सामने क्या करे और कैसे करें की स्थिति आ जाती है। उदाहरण के लिए लक्ष्य निर्धारित किए बिना (ईएलए अथवा उपलब्धि के अपेक्षित स्तर), महिला नलबंदी और नसबंदी अभियान शिविरों संबंधी प्रोत्साहनों को वापस लेना। इसके अलावा सरकार निम्नलिखित कार्य कर सकती है:-

(i) भारत में परिवार नियोजन कार्यक्रम की समीक्षा करना ताकि यह महिलाओं के प्रजनन स्वास्थ्य अधिकारों और भारत की जनसंख्या संबंधी जरूरतों के बीच सामंजस्य बैठाया जा सके।

(ii) गुणवत्तापूर्ण सेवाओं, स्टैटिक परिवार नियोजन क्लिनिकों और गुणवत्तापूर्ण मानीटरिंग और पर्यवेक्षण के लिए बजट बढ़ाना।

(iii) युवाओं की जरूरतों को पूरा करना, यौन स्वास्थ्य के लिए अधिक परामर्शदाताओं को लेना, ऐसी सेवाएं प्रदान करना जो युवाओं के लिए अधिक अनुकूल हो और स्पेसिंग मैथड की पर्याप्त आपूर्ति करना।

1.14 सहयोगात्मक संघवाद और चौदहवें वित्त आयोग की सिफारिशें

14वें वित्त आयोग ने एक ओर तो केन्द्र और राज्यों के बीच और दूसरी ओर राज्यों के ही अंदर राजस्व के बटवारे के लिए दूरगामी परिवर्तनों की सिफारिश की है। इसके सफल कार्यान्वयन से सहयोगात्मक संघवाद को बढावा मिलेगा जिसे लेकर सरकार बहुत उत्साहित है।

14वें वित्त आयोग ने हाल ही में 2015-16 से 2020-21 की अवधि के लिए केन्द्र से राज्यों को और राज्यों के बीच करों के अंतरण और अन्य अंतरणों के बारे में अपनी सिफारिशें प्रस्तुत की हैं। इनसे केन्द्र राज्य संबंधों, बजट निर्धारण पर और केन्द्र राज्यों की वित्तीय स्थिति पर बड़े प्रभाव पड़ने की संभावना है। कुछ सिफारिशें इस प्रकार है:-

14वें वित्त आयोग ने करों केन्द्रीय विभाज्य पूल में राज्यों का हिस्सा वर्तमान 32 प्रतिशत से बढ़ाकर मूलत: 42 प्रतिशत कर दिया है, जो ऊर्ध्वाधर अंतरण में अब तक का सबसे अधिक है। पिछले दो वित्त आयोगों अर्थात् 12वें (अवधि 2005-2010) और 13वें (अवधि 2010-2015) ने केन्द्रीय विभाज्य पूल में राज्य हिस्सा क्रमश: 30.5 प्रतिशत (1 प्रतिशत की वृद्धि) और 32 प्रतिशत (1.5 प्रतिशत की वृद्धि) की सिफारिश की थी।

14वें वित्त आयोग ने राज्यों के बीच विभाज्य पूल में राज्य हिस्से के वितरण के लिए नए क्षैतिज सूत्र (सारणी 10.1) का भी सुझाव दिया है। सम्मिलित/असम्मिलत परिवर्तनीय कारकों तथा उन्हें सौंपे जाने वाले भारांशों, दोनों में बदलाव हैं। 13वें वित्त आयेग की अपेक्षा, 14वें वित्त आयोग ने दो नए परिवर्तनीय कारक जोड़े हैं - 2011 की जनसंख्या और वन

क्षेत्र; और राजकोषीय अनुपालन कारक को निकाल दिया है। (ब्यौरे के लिए अध्याय 10 देखें)।

इन सिफारिशों को कार्यन्वित करने से देश अधिक राजकोषीय संघवाद की दिशा में आगे बढ़ेगा जिससे राज्यों को अधिक राजकोषीय स्वायत्तता मिलेगी। उदाहरणत: 2015-16 के लिए अनुमानित स.घ.उ. वृद्धि और कर उछाल के पूर्व अनुमानों के आधार पर यह उम्मीद है कि 2014-15 के संबंध में राज्यों के लिए अतिरिक्त राजस्व दो लाख करोड़ रुपए तक होंगे। इसमें से काफी बड़ा हिस्सा उस अंतर का द्योतक है जो विभाज्य पूल में राज्यों के हिस्से में हुए परिवर्तन से उपजा है।

सारणी 1.4 में दिए गए प्रारभिक अनुमान दर्शाते हैं कि सम्पूर्ण तौर पर सभी राज्य एफएफसी अंतरणों से लाभान्वित होंगे। लेकिन वितरण संबंधी प्रभावों का आकलन करने के लिए, इन वृद्धियों को जनसंख्या, चालू बाजार मूल्यों पर निवल राज्य घरेलू उत्पाद अथवा राज्य की अपनी कर राजस्व प्राप्तियों से मापा जाना चाहिए। इसे सारणी 1.4 के कालम 4.6 में दिखाया गया है। इन संकेतकों के अनुसार मापे जाने पर सबसे बड़े लाभ प्राप्त कर्ता और मात्रा की दृष्टि से विशेष श्रेणी के राज्य हैं (एससीएम) अधिकतर राज्य पूर्वोत्तर क्षेत्र में हैं।

प्रति व्यक्ति संदर्भ में सबसे बड़े लाभ प्राप्त कर्ता एससीएस राज्यों में अरुणाचल प्रदेश, मिजोरम और सिक्किम हैं तथा

सारणी 1.4 : अतिरक्त एफ.एफ.सी. अंतरण (2014-15 की तुलना में 2015-16 में)

राज्य	श्रेणी	एफ.एफ.सी. से लाभ (करोड़ रुपये)	प्रतिव्यक्ति के रूप में लाभ (रुपए में)	ओटी आर के रूप में लाभ	एन एस डी पी के प्रतिशत के रूप में लाभ
1	2	3	4	5	6
आंध्र प्रदेश (एकीकृत)	जीसीएस	14620	1728	27.4	2.2
अरुणाचल प्रदेश	एससीएस	5585	40359	1758.1	51.0
असम	एससीएस	7295	2338	95.5	5.8
बिहार	जीसीएस	13279	1276	105.3	4.9
छत्तीसगढ़	जीसीएस	7227	2829	67.5	5.2
गोवा	जीसीएस	1107	7591	44.1	3.0
गुजरात	जीसीएस	4551	753	10.3	0.8
हरियाणा	जीसीएस	1592	628	7.8	0.5
हिमाचल प्रदेश	एससीएस	8533	12430	207.7	14.6
जम्मू एंड कश्मीर	एससीएस	13970	11140	294.4	22.4
झारखण्ड	जीसीएस	6196	1878	89.1	4.8
कर्नाटक	जीसीएस	8401	1375	18.1	1.8
केरल	जीसीएस	9508	2846	37.0	3.1
मध्य प्रदेश	जीसीएस	15072	2075	55.9	4.5
महाराष्ट्र	जीसीएस	10682	951	12.2	0.9
मणिपुर	एससीएस	2130	8286	578.7	19.5
मेघालय	एससीएस	1381	4655	198.0	8.6
मिजोरम	एससीएस	2519	22962	1410.1	33.3
नागालैंड	एससीएस	2694	13616	886.5	18.7
ओडिशा	जीसीएस	6752	1609	50.2	3.2
पंजाब	जीसीएस	3457	1246	18.3	1.4
राजस्थान	जीसीएस	6479	945	25.5	1.6
सिक्किम	एससीएस	1010	16543	343.7	10.7
तमिलनाडु	जीसीएस	5973	828	10.0	0.9
त्रिपुरा	एससीएस	1560	4247	181.8	6.9
उत्तर प्रदेश	जीसीएस	24608	1232	46.8	3.5
उत्तराखंड	एससीएस	1303	1292	23.2	1.4
पश्चिम बंगाल	जीसीएस	16714	1831	67.0	3.0
कुल		204198	1715		

स्रोत : वित्त मंत्रालय।

जीसीएस-सामान्य श्रेणी के राज्य; एससीएस-विशेष श्रेणी के राज्य

अन्य राज्यों (जीसीएम अथवा सामान्य श्रेणी के राज्य) में केरल छत्तीसगढ़ और मध्य प्रदेश हैं।

जाहिर है केन्द्र के लिए राज्यों को दिए जाने वाले करों में वृद्धि तभी रुपायित की जा सकती है यदि राज्यों में दी जाने वाली केन्द्रीय (आयोजना) सहायता में कटौती की जाए। दूसरे शब्दों में अन्य राज्यों के पास राजस्व और व्यय दोनों मोर्चों पर अधिक स्वायत्तता होगी।

यह अनुमान लगाना भी संभव है कि 14वें वित्त आयोग की सिफारिशें राज्यों की निवल व्यय क्षमता के साथ क्या करेगी जहां निवल का अर्थ है एफएएसी के निवल अंतरणों और घटायी गई केन्द्रीय सहायता के बीच अंतर जिसके लिए एफएफसी की सिफारिशों की आवश्यकता होगी। मुख्यत: विशेष श्रेणी के राज्य सबसे बड़े लाभ प्राप्तकर्ता होंगे। इसके अतिरिक्त जीवीएम में ऐसे 9 राज्य हैं जिनके द्वारा अपने कर राजस्वों के 25 प्रतिशत से अधिक प्राप्त होने की संभावना है। (ब्यौरा अध्याय 10 पर देंखे)

सीएसए से हट कर FFC अंतरणों को अपनाने का एक संपार्श्विक लाभ यह होगा कि इससे समग्र प्रगति में तेजी आयेगी अर्थात् अपेक्षाकृत कम प्रतिव्यक्ति एनएसडीपी वाले राज्य अधिक प्रतिव्यक्ति एनएसडीपी के मुकाबले अधिक राशि प्राप्त करेंगे।

यह इस तथ्य से जाहिर होता है सीएएस अंतरण जो पहले विवेकाधीन थे, वित्त आयोग के अंतरणों के मुकाबले कम प्रगतिशील थे।

निश्चित रूप से, सीएएस अंतरणों में कटौती से कुछ संक्रमण लागतें भी होंगी। लेकिन अव्यवस्था की गुंजाइश कम कर दी गई है क्योंकि अतिरिक्त एफएफसी संसाधन सिर्फ उन्हीं राज्यों को दिए जाएंगे जिनकी सबसे बड़ी सीएएस वित्तपोषित स्कीमें हैं।

कुल मिलाकर, एफएफसी की दूरगामी प्रभाव वाली सिफारिशों के साथ-साथ नीति आयोग के सृजन से सरकार का सहयोगात्मक और प्रतिस्पर्धी संघवाद का सपना साकार करने में मदद मिलेगी। शहरों और अन्य स्थानीय निकायों को सहयोगात्मक और प्रतिस्पर्धी संघवाद की परिधि में शामिल करने का आवश्यक, बल्कि सच कहें तो, अहम कार्य अब अगली नीतिगत चुनौती है।

राजकोषीय रूपरेखा

02
अध्याय

2.1 प्रस्तावना और सारांश

सांतायना ने एक बार चेतावनी दी थी कि जो इतिहास से नहीं सीखते, वे दोबारा वही गलतियां दोहराने के लिए अभिशप्त होते हैं। उस कारण के लिए, भारत के हाल ही के राजकोषीय इतिहास की जांच करना, अच्छा होगा, यदि देश के भावी राजकोषीय पथ के लिए सीखने हेतु सबक उपलब्ध है, हाल ही के इतिहास पर पलट के देखना अब विशेष रूप से उचित है क्योंकि आज का भारत तुलनात्मक राजकोषीय घाटे सहित (सकल घरेलू उत्पाद का 4 प्रतिशत बृहत आर्थिक चक्र की व्यापक रूप से ऐसी ही स्थिति में वर्ष 2000 से पहले की बिल्कुल ऐसी ही स्थिति में है। आज भी, उस समय की तरह, मुद्रास्फीति 5 प्रतिशत के निकट है। आज, उस समय की तरह चालू खाता घाटा नियंत्रण में हैं। और आज, उस समय की तरह, अर्थव्यवस्था तीव्र विकास के पथ पर बढ़ रही है।

अत: क्या यह पूछना सही है: भारत में हाल ही के राजकोषीय निष्पादन से हमने क्या सबक सीखे? वे वर्ष के बजट में तथा मध्यावधि के लिए राजकोषीय नीति पर कैसे प्रभाव डालें? यह अध्याय इन प्रश्नों का उत्तर देने का प्रयास करता है। मुख्य निष्कर्ष में ये हैं:-

पहला, मध्यावधि में, भारत को सकल घरेलू उत्पाद का 3 प्रतिशत अपना मध्यावधि लक्ष्य अवश्य पूरा करना चाहिए। यह भावी झटकों के खिलाफ सुरक्षा प्राप्त करने में राजकोषीय स्थान उपलब्ध कराएगा तथा अपनी उदीयमान बाजार समीक्षा के राजकोषीय निष्पादन के निकट बढ़ेगा। यह हाल ही के वर्षों के विकास पथ को सुरक्षित रखेगा तथा राजस्व घाटों को समाप्त करने के स्वर्णिम नियम की और बढ़ेगा तथा यह सुनिश्चित करेगा कि पूरे चक्र के दौरान, उधार केवल पूंजी निर्माण के लिए है।

दूसरा, इन लक्ष्यों को पूरा करने का तरीका व्यय नियंत्रण तथा खपत से हटकर निवेश में होने वाला व्यय होगा। व्यय नियंत्रण तथा इसलिए राजकोषीय स्थान में कमी हुई जिसने 2013 के लगभग संकट की स्थिति में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। वर्ष 2016-17 से, जैसे ही विकास तेज होता है तथा जैसे ही जीएसटी को कार्यान्वित किया जाता है तो परिणामस्वरूप कर-उछाल, व्यय नियंत्रण के साथ यह सुनिश्चित करेगी कि मध्यावधिक लक्ष्य आराम से पूरे किए जा सकते हैं। यह उछाल इतिहास से सिद्ध होता है क्योंकि पिछले दशक में विकास में वृद्धि के दौरान, समग्र कर सकल घरेलू उत्पाद का अनुपात 2-2.5 प्रतिशत बढ़ा है परन्तु कर की दर और आधार में कुछ महत्वपूर्ण वृद्धि नहीं हुई है।

तीसरा, आगामी वर्ष में, त्वरित राजकोषीय समेकन के लिए दबाव कम हुआ है क्योंकि मुद्रास्फीति में आयी नाटकीय कमी तथा चालू खाता घाटा में आमूल-चूल परिवर्तन के कारण बृहत आर्थिक दबाव काफी कम हुए हैं। इन हालातों में, यदि अर्थव्यवस्था में तेजी आने के बजाय सुधार हो रहा है, तो अनु-चक्रीय नीति को दूर किया जाता चाहिए।

इसके अतिरिक्त, विकास आगे बढ़ रही अनुकूल ऋण गति को सुनिश्चित करेगा जो सरकारी क्षेत्र के ऋण भार के बारे में चिंताओं से उत्पन्न होने वाली समेकन बाध्यताओं का उपशमन करती है। इसके अतिरिक्त, बहुत से नए और आपवादित कारकों से आगामी राजकोषीय वर्ष में त्वरित राजकोषीय समेकन भी सीमित होगा, जैसे चौदहवें वित्त आयोग की सिफारिशों का कार्यान्वयन, वर्ष 2007-08 तथा 2008-09 में केन्द्रीय बिक्री कर में कमी के लिए राज्यों की क्षतिपूर्ति बाध्यताओं को निपटाना तथा निदेश को विनम्र तरीके से बढ़ाने की जरूरत।

अंत में, फिर भी राजकोषीय विश्वसनीयता तथा मध्यावधिक उद्देश्यों के साथ निरंतरता को सुनिश्चित करने के लिए,

आगामी बजट को राजकोषीय तथा राजस्व घाटों, दोनों को कम करने के लिए, व्यय नियंत्रण की प्रक्रिया प्रारंभ करनी चाहिए। उसी समय, निदेश हेतु सब्सिडियां कम करके व्यय की गुणवत्ता को खपत से स्थानांतरित किए जाने की जरूरत है। पेट्रोलियम पदार्थों के कराधान से उत्पन्न होने वाले कर-सकल घरेलू उत्पाद के अनुपात में वृद्धि लघु और मध्यावधिक राजकोषीय लक्ष्यों के प्राप्त करने में सहायक होगी।

2.2 पृष्ठभूमि और इतिहास के सबक

भारत का बृहत आर्थिक सुधार आकस्मिक कमी के कारण नहीं है- मुद्रास्फीति आधी कम होकर आजकल लगभग 5 प्रतिशत हो गयी है, रेखांकित ग्रामीण मजदूरी वृद्धि 20 प्रतिशत अधिक से कम होकर 5 प्रतिशत से कम हो गई है और आगामी राजकोषीय वर्ष में चालू खाता घाटा स.घ.उ. के 6.7 प्रतिशत (2012-13 की तीसरी तिमाही में) कम होकर अनुमानत 1.0 प्रतिशत हो गया है।

राजकोषीय संतुष्टि के लिए शायद ही कोई स्थान है। यह समझने के लिए कि क्यों और यह महसूस करने के लिए कि कहां, भारत को जाने की जरूरत है, यह समझना महत्वपूर्ण है कि यह कहां पर रहा है तथा हमने अपने अनुभव से क्या सबक सीखे हैं। आजकल और वर्ष 2000 से पहले की भारत की स्थिति के बीच समानता इस प्रक्रिया को विशेषरूप से महत्वपूर्ण बना देती है।

केन्द्र सरकार के लिए मुख्य राजकोषीय संकेतक सारणी 9.1 में दिए गए हैं। वर्ष 2000 से पहले 2002-2007, 2008-2011 तथा 2012 के बाद से नीति के कम से कम तीन चरण पहचाने जा सकते हैं (चित्र 9.1-9.3 सकल प्रवाही राशि (चित्र 9.1), ऋण स्टॉक (चित्र 9.2) तथा व्यय गुणवत्ता (चित्र 9.3) के संदर्भ में तीन चरणों का वर्णन करते हैं।)

प्रथम चरण में, राजकोषीय निष्पादन के सभी प्रमुख उपाय आकस्मिक रूप से सुधरे हैं और तीव्र विकास से प्रेरित हुए हैं। केन्द्र सरकार का राजकोषीय घाटा लगभग 3.2 प्रतिशत कम हुआ है जो मुख्य रूप से अन्य ऋण भिन्न प्राप्तियों में कमी (1.4 प्रतिशत) तथा शेष व्यय में कमी (1.2 प्रतिशत) के साथ कर-सकल घरेलू उत्पाद के अनुपात (3.4 प्रतिशत) में वृद्धि के कारण है। विकास से कर सकल घरेलू उत्पाद के अनुपात में वृद्धि हुई है किंतु अप्रत्यक्ष कर आधार में कुछ विस्तार हुआ था तथा सेवा कर से संबंधित दरों मे वृद्धि हुई थी (चित्र 9.1)। यह कर 5 प्रतिशत की दर से 52 सेवाओं पर लगाया गया था जिससे वर्ष 2002-03 में 4122 करोड रुपए की प्राप्ति हुई थी किंतु यह 12 प्रतिशत की दर से 98 सेवाओं के लिए बढ़ाया गया था जिससे वर्ष 2007-08 में 51301 करोड़ रु. के राजस्व की प्राप्ति हुई।

स्टॉक पक्ष पर, ''ऋण गतिशील वेज'' में काफी सुधार के कारण ऋण में कमी हुई है जिसे एक ओर आर्थिक वृद्धि की वास्तविक दर (जी) तथा उधार की वास्तविक लागत (आर, जो स्वयं सरकारी प्रतिभूतियों पर ब्याज तथा सकल घरेलू उत्पाद के अपस्फीतिकारक की मुद्रास्फीति के बीच अंतर है) तथा दूसरी ओर प्राथमिक घाटे (पीडी) के बीच अंतर के रूप में परिभाषित किया गया है (चित्र 2.2)।

इस अवधि में वेज 9 प्रतिशत बढ़ा है, जिससे ऋण-सकल घरेलू उत्पाद के अनुपात में 8 प्रतिशत की कमी हुई है। इस पर ध्यान देना जरूरी है कि विकास, प्राथमिक शेष में सुधार करके प्रत्यक्ष (जी-बढ़ाकर) और अप्रत्यक्षरूप से इस सुधरते वेज का मुख्य प्रेरक था।

इस अवधि से दो महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं। पहले, राजकोषीय संकेतकों में लगभग सभी सुधार तीव्र विकास से उत्पन्न हुए हैं। जो इस चरण में औसतन लगभग 8 प्रतिशत है। दूसरा तथा भविष्य के लिए महत्वपूर्ण सबकों में से एक समग्र व्ययों को अनिवर्ती करना था। वर्ष 2005-06 तक, बढ़ते विकास के अनुसार व्यय तथा सकल घरेलू उत्पाद का अनुपात घटा है तथा अनुवर्ती दो वर्षों में, यह उस समय बढ़ा जब विकास औसतन 9.5 प्रतिशत था। अन्य शब्दों में, विचलित 10 प्रतिशत तक बढ़ा है।

वर्ष 2005-06 से 2007-08 में तीव्र व्यय वृद्धि सब्सिडी भार में किसी वृद्धि से उत्पन्न नहीं हुई थी। यद्यपि, इसने मुख्यत: ब्याज के भुगतानों में उच्च वृद्धि (13.2 प्रतिशत औसत वार्षिक वृद्धि) तथा राज्य स्तरीय राजकोषीय सुधारों के लिए 12वें वित्त आयोग द्वारा अभिशासित गैर योजना अनुदानों में वृद्धि प्रदर्शित की है। इस व्यय का कुछ अपरिहार्य रहा हो, परंतु परिणाम तीव्र वृद्धि के अनुकूल राजकोषीय प्रभाव तक सीमित था।

सारणी 2.1: चुनिंदा राजकोषीय संकेतक (स.घ.उ. के प्रतिशत के रूप में)

	विवरण	2002-03	2003-04	2004-05	2005-06	2006-07	2007-08	2008-09	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14	2014-15
1	वास्तविक स.घ.उ. वृद्धि (जी) (प्रतिशत के रूप में)	3.9	8	7.1	9.5	9.6	9.3	6.7	8.6	8.9	6.7	4.5	4.7^	5.9
2	सीपीआई मुद्रास्फीति# (प्रतिशत के रूप में)	5	4.1	4	3.7	6.8	5.9	9.2	10.6	9.5	9.5	10.2	9.5	7.2
3	Iस.घ.उ. बकायादार से मुद्रास्फीतिरु (प्रतिशत के रूप में)	3.7	3.9	5.7	4.2	6.4	5.8	8.7	6.1	9.0	8.5	7.2	6.9	
4	बाजार मूल्य रु. लाख करोड़ पर स.घ.उ.	25.3	28.4	32.4	36.9	42.9	49.9	56.3	64.8	78.0	90.1	101.1	113.6	128.8
		केन्द्र सरकार												
5	कुल राजस्व ## (अन्तरण से पहले)	12.8	14.6	13.9	12.3	13.1	14.8	12.6	11.9	13.4	11.6	12.0	12.2	12.8
6	सकल कर राजस्व	8.5	9.0	9.4	9.9	11.0	11.9	10.8	9.6	10.2	9.9	10.2	10.2	10.6
7	कुल व्यय (अन्तरण कर सहित)	18.5	18.9	17.8	16.2	16.4	17.3	18.5	18.4	18.2	17.3	16.8	16.8	16.9
	मुख्य सब्सिडी	1.6	1.5	1.4	1.2	1.2	1.3	2.2	2.1	2.1	2.3	2.4	2.2	1.9
	भोजन	1	0.9	0.8	0.6	0.6	0.6	0.8	0.9	0.8	0.8	0.8	0.8	0.9
	उर्वरक	0.4	0.4	0.5	0.5	0.6	0.7	1.4	0.9	0.8	0.8	0.6	0.6	0.6
	पेट्रोलियम	0.2	0.2	0.1	0.1	0.1	0.1	0.1	0.2	0.5	0.8	1.0	0.8	0.5
	राज्यों के कर अन्तरण	2.2	2.3	2.4	2.6	2.8	3.0	2.8	2.5	2.8	2.8	2.9	2.8	3.0
	राजस्व व्यय	13.4	12.8	11.9	11.9	12.0	11.9	14.1	14.1	13.4	12.7	12.3	12.3	12.2
	पूंजी व्यय	2.9	3.8	3.5	1.8	1.6	2.4	1.6	1.7	2.0	1.8	1.6	1.7	1.8
	गैर सुरक्षा	2.4	3.3	2.5	0.9	0.8	1.6	0.9	1.0	1.2	1.0	1.0	1.0	1.0
8	वित्तीय कमी	5.7	4.3	3.9	4	3.3	2.5	6	6.5	4.8	5.7	4.8	4.6	4.1
9	राजस्व कमी	4.3	3.5	2.4	2.5	1.9	1.1	4.5	5.2	3.2	4.4	3.6	3.3	2.9
10	मूल कमी (पीडी)	1.1	0	0	0.4	-0.2	-0.9	2.6	3.2	1.8	2.7	1.8	1.3	0.8
11	कुल शेष देनदारियां	66.9	66	65.5	63.9	61.4	58.9	58.6	56.3	52.1	51.7	51.7	50.9	49.8
12	उधार की औसत लागत (एन) (प्रतिशत के रूप में)	7.5	7.3	7.2	7	7.3	7.6	7.6	7.5	7.4	7.8	7.7	8.3	--
13	उधार की औसत लागत (आर) (प्रतिशत के रूप में)	3.8	3.4	1.5	2.8	0.9	1.8	-1.1	1.4	-1.6	-0.7	0.5	1.4	--
14	ऋण गतिशील वेज (जी-आर-पीडी)	-1.0	4.6	5.6	6.3	8.9	8.4	5.2	4.0	8.7	4.7	2.2	2.0	--

^: अनंतिम एन : नाम मात्र आर: वास्तविक

उरजीत पटेल समिति रिपोर्ट से पिछली श्रृंखला, 2014-15 के लिए नवम्बर, 2014 तक आरबीआई और सीपीआई आंकड़े।

जीटीआर, गैर-कर राजस्व, ऋण की प्राप्ति और अन्य प्राप्तियों का कुल राजस्व सहित।

टिप्पणी : 1. केन्द्र सरकार के लिए आंकड़े 2013-14 और 2014-15 के क्रमशः संसोधित अनुमान और बजट अनुमान।

2. सरकारी सार्वजनिक ऋण में अन्य देनदारियों (राष्ट्रीय लघु सेविंग फंड, राज्य भविष्य निधि और अन्य खातें) को मिलाकर कुल शेष देनदारियां।

3. वर्तमान बाजार मूल्यों पर स.घ.उ. आंकड़े तथा कारक लागत पर स.घ.उ. वृद्धि संख्या सीएसओ के राष्ट्रीय खाता श्रृंखला 2004-05 से।

4. ऋण गतिशील वेज के लिए सही सूत्र $d_{(t+1)} = p_{(t+1)} + [(r_t - g_t)/(1+g_t)]\, d_t$ जहां p_t स.घ.उ. के प्रतिशत के रूप में प्राथमिक घाटा है; r_t ब्याज की वास्तविक दर है; g_t वास्तविक वृद्धि दर; d_t डी ऋण और स. घ.उ. का अनुपात है

स्रोत : बजट दस्तावेज और एमओएसपीआई।

चित्र 2.1: वित्तीय प्रवाह के संकेतक, 2002-03-2014-15 (स.घ.उ. का प्रतिशत)

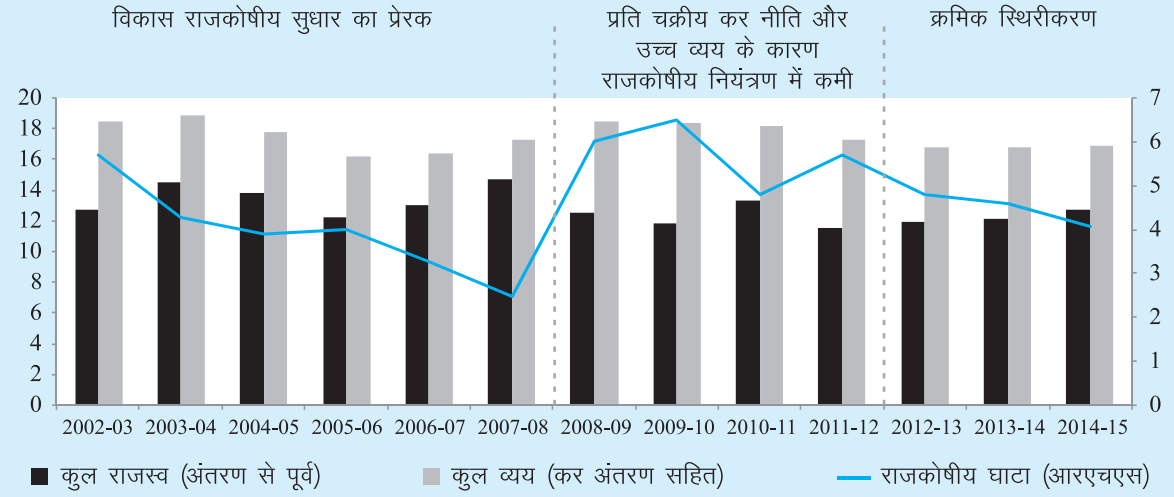

चित्र 2.2: राजकोषीय स्टॉक संकेतक, 2002-03-2014-15(स.घ.उ. का प्रतिशत)

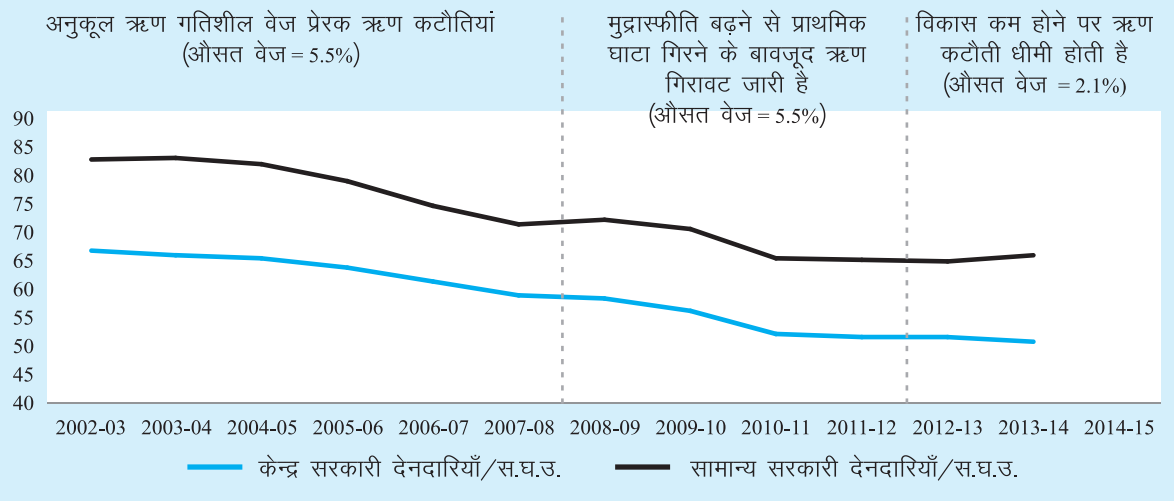

केन्द्र सरकार के लिए वर्ष 2013-14 और 2014-15 के लिए अंक : कमशः संशोधित अनुमान और बजट अनुमान। सामान्य सरकार के लिए 2012-13 और 2013-14 के लिए अंक क्रमशः संशोधित अनुमान और बजट अनुमान

चित्र 2.3: व्यय गुणवत्ता के संकेतक 2002-03-2014-15(स.घ.उ. का प्रतिशत)

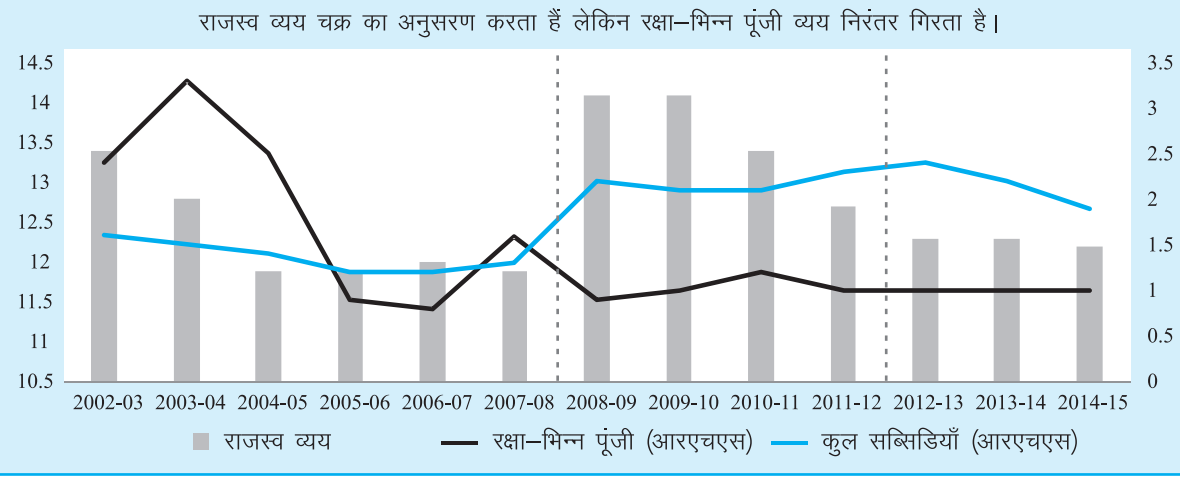

स्रोत : बजट प्रलेख और सीएसओ

भारतीय वित्तीय इतिहास का दूसरा और कठिन चरण लेहमान संकट के साथ 2008-09 में शुरू हुआ और चार वर्ष तक चला। इस अवधि के दौरान, पिछले छः वर्ष के सभी सकारात्मक रूझानों की पुनरावृत्ति हुई। वित्तीय घाटा लगभग 4 प्रतिशत बिन्दुओं तक बढ़ा तथा यह राजस्व में कमी (अप्रत्यक्ष करों में बड़ी कटौती के कारण) और बढे हुए व्यय के बीच एक समान रहा। शुरू के वर्षों में (2008-09 से 2011-12) आर्थिक सहायता बिल के बढने (सकल घरेलू उत्पाद के 1% बिन्दु तक बढ़ना); छठे वेतन आयोग की सिफारिशों के कार्यान्वयन के कारण वेतन और भत्तों में बढ़ोतरी (स.घ.उ. का 0.4 प्रतिशत); तथा एम.जी.एन.आर.ई.जी.ए. (स.घ.उ. का 0.3 प्रतिशत) जैसी स्थायी हकदारी वाली योजनाओं के कारण चालू व्यय (सार्वजनिक उपभोग) काफी अधिक बढ़ा। इसी बीच खर्च की गुणवत्ता प्रभावित हुई क्योंकि गैर-रक्षा पूंजीगत व्यय को विराम मिला जबकि चालू व्यय अवधि के दौरान औसत से लगभग 2% बिन्दु बढ़ा (आकृति 9.3)।

घाटे में कमी आने के बावजूद, सरकार का घाटा कम होता गया। प्राथमिक घाटे में बढ़ोतरी के कारण शुरू में आधारभूत ऋण गत्यात्मकता कम अनुकूल रही लेकिन बाद में उच्च विकास, बढ़ती हुई महंगाई दर और सम्बद्ध वित्तीय तेजी जिसने सरकार की उधार लेने की वास्तविक लागत को कम कर दिया के कारण बढ़ गई।

तीसरे और अधिकांश हाल ही के चरण में 2012-13 से 2014-15 तक, जिसमें नीचे की ओर तेज गति से विकास हुआ, वित्तीय स्थिति में अन्तिम रूप से सुधार होने लगा। लेहमन के बाद के चरण में आया वित्तीय चढाव, राजस्व बढोतरी और व्यय कटौती के एक समान अंशदान के कारण अन वाऊन्ड रहा जिससे घाटा कारोबार के चक्र के तुलनीय चरण में पूर्व 2000 में मौजूद स्तर के आस-पास रहा।

इसके बावजूद, अन्य मुख्य सूचकांकों में विकास, कम प्रोत्साहन दायक रहा। इस चरण के दौरान, ऋण जी.डी.पी. अनुपात, मन्दी विकास दर और रूके हुए उच्च घाटे के कारण कम होना बन्द हो गया जिसने ऋण गत्यात्मकता अन्तर को कम प्रतिकूल बना दिया। इसके अलावा गैर-रक्षा सार्वजनिक पूंजीगत व्यय आवादिक रूप से कम रहा तथा यह 2000 के पूर्व की अवधि में रिकार्ड किए गए स्तर से काफी कम था। महत्वपूर्ण यह है कि भारत को जुलाई/अगस्त, 2013 के दौरान मन्दी समतुल्य अनुभव हुआ क्योंकि यू.एस. संघीय रिजर्व के मौद्रिक रूझान को घटाने के लिए इसके निर्णय को भारत के चालू लेखा घाटे, उच्च मुद्रास्फीति और अत्यधिक वित्तीय घाटे के साथ जोड़ने से पूंजी का देश से बाहर प्रवाह हुआ। इस घटनाक्रम को अन्तिम और अत्यन्त महत्वपूर्ण झटका लगा, अर्थात भारत को अतिरिक्त वित्तीय स्थान बढाना है ताकि समष्टि स्थिरता सुनिश्चित हो तथा भविष्य में आर्थिक मंदी से निपटने के लिए बफर रखा जा सके।

2.3 मध्यावधि रणनीति

इस वित्तीय अन्तराल को स्थापित करने के लिए एक मध्यावधि वित्तीय रणनीति बनाए जाने की आवश्यकता है जोकि मूलभूत सिद्धान्तों तथा आर्थिक विरासत और विश्वसनीयता मुद्दों पर आधारित हो, ये दोनों विचारण, एक ही दिशा की ओर इंगित करते हैं।

2.3.1 निवेश और सुनहरा नियम

बढ़े हुए सार्वजनिक निवेश का मामला, इस सर्वेक्षण में पहले उठाया गया था। मध्यावधि प्रभाव क्या है? वित्तीय नीति का सुनहरा नियम है कि सरकारें निवेश के वित्तपोषण के लिए चक्र से अधिक ऋण ले, तथा चालू व्यय के वित्तपोषण के लिए नहीं। इससे यह पता चलता है कि सरकार के वित्तीय समेकन की उपलब्धियां, आदर्श रूप से कारोबार चक्र के ऊपर होनी चाहिए तथा तदनुसार लघु अवधि उद्देश्यों का निधरिण किया जाए।

हाल ही के वित्तीय इतिहास के प्रथम चरण में, भारत राजस्व घाटों की तरफ बढ़ा। किंतु 2008-09 से 2012-13 की अवधि में यह प्रक्रिया उलट गई। आगे देखते हुए और इस बजट से शुरू करते हुए सरकार को, सुनहरे नियम की ओर बढ़ने के क्रम में राजस्व घाटे में सतत् कमी लाने का लक्ष्य रखना चाहिए। इससे अर्थव्यवस्था को ऊंचे विकास के रास्ते पर ले जाने के लिए सरकार को सहयोग मिलेगा।

2.3.2 विरासत/विश्वसनीयता

इन विचारणों को लागू करना, भारत की पिछली रणनीतियों की विरासत है। भारत के एफ.आर.बी.एम. अधिनियम और केलकर समिति (2012) ने, केन्द्र के राजकोषीय घाटे को कम करके जी.डी.पी. के 3% पर लाने के क्रम में, उद्देश्य का सिद्धान्त स्थापित किया। विश्वसनीयता बनाए रखने तथा भारत को उभरते हुए बाजार के देशों के साथ-साथ चलने के लिए, इस उद्देश्य की पालना करना आवश्यक है। उदाहरण के तौर पर भारत में 2013-14 में औसत सामान्य सरकार का

सामान्य घाटा भारत के निवेश की ग्रेड रेटिंग[2] के देशों की औसत से लगभग 4.8% बिन्दु अधिक है। राज्य स्थिर है, जबकि सरकारें आती हैं और चली जाती हैं। इस बारे में यदि प्रत्येक नई सरकार, नियम बदलती रहेगी तो क्षणभंगुरता और अनिश्चितता हो जाएगी तथा इसके परिणाम स्वरूप राज्य और देश की समग्र विश्वसनीयता प्रभावित होगी।

तथापि यदि नियमों को परिवर्तित करने के सक्षम कारण हो तो भी दिशा निदेश की समस्या हो सकती है। वित्तीय रूप से जिम्मेदार सरकारें, अपनी कार्यावधि के शुरू के समय में बाजार को अपनी विश्वसनीयता नहीं दिखा सकती कि वे वास्तव में वित्तीय रूप से जिम्मेवार हैं। इस स्थिति में वे जब तक वे ट्रैक रिकार्ड स्थापित नहीं करें सरकारों को पूर्व समितियों की अनुपालना करनी होगी।

तदनुसार मध्यावधि वित्तीय रणनीति दो स्तम्भों पर आधारित होनी चाहिए। पहला यह कि राजकोषीय घाटे को कम करके मध्यावधि में जी.डी.पी. को 3% के स्थापित उद्देश्य पर लाना चाहिए। दूसरे पिछली दशाब्दि के अनुभव से फायदा उठाते हुए इस उद्देश्य को प्राप्त करने के प्रयास व्यय पर दृढ़ नियन्त्रण पर आधारित होने चाहिए तथा यह आर्थिक सहायता को कम करके तथा सामाजिक व्यय में कटौतियां करके किया जाना चाहिए।

इसके अलावा सार्वजनिक उपभोग (आर्थिक सहायता की कटौती के माध्यम से) से सार्वजनिक निवेश किए जाने के लिए समग्र व्यय के किसी भी दिए गए स्तर के सम्बन्ध में यह दीर्धावधि मुद्रास्फिति के दवाब का शमन करता है क्योंकि यह इसकी क्षमता बढाएगा तथा अर्थव्यवस्था औसत आपूर्ति क्षमता को बढावा देगा। इसके अलावा वित्त निवेश सम्बन्धी परिसम्पतियों की बिक्री, लघु अवधि में औसत मांग दवाब को बढाए बिना अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देने के अनुरूप होगी।

यदि व्यय नियंत्रण बनाए रखा जाता है, तो राजस्व में बढ़ोत्तरी, प्रवाह और स्टाक वितीय आकलन की तरफ प्रवाहित होगी। यह प्रभाव सर्वव्यापक होना चाहिए क्योंकि विकास को बढाने तथा 2016-17 में जी.एस.टी. को लाने से सामान्य सरकार में भारत का कर जी.डी.पी. अनुपात 17.5% के चालू स्तर से बढ़कर 20% के स्तर पर पहुंच जाएगा। तदनुसार ऋण गत्यामकता भारत के पक्ष में कार्य करेगी। साधारण आकलन यह सुझाते हैं कि यदि अगले तीन वर्ष में औसत विकास 9% है और वास्तविक ब्याज दरें, व्यापक रूप से वहीं रहें तो केन्द्र सरकार का समग्र ऋण-जी.डी.पी. अनुपात (जी.डी.पी. की कुल बकाया देयताओं[3] का अनुपात) चालू 49.8% के अनुपात की तुलना में कम होकर 2017-18 में लगभग 40% हो गया तथा सरकार के सामान्य ऋण में इसी प्रकार की गिरावट आएगी इससे भविष्य में आने वाली कमी के लिए बफर का सृजन होगा।

2.4 लघु अवधि मुद्दे

इस मध्यावधि पृष्ठभूमि के परिप्रेक्ष्य में लघु अवधि में वित्तीय नीति की क्या स्थिति होनी चाहिए। चक्रीय विचारणों और वन आफ कारकों सहित कई परिप्रेक्ष्य इसका उत्तर तैयार करते हैं।

1. चक्रीय विचारण

लघु अवधि में, वित्तीय नीति, भार सहने वाली, मांग को स्थिरता प्रदान करने वाली और विकास कारक मानी जाती है। एक सामान्य स्वीकार्य नियम यह है कि मांग प्रबन्धन परिप्रेक्ष्य में सरकारों को पूर्व चक्रीय वित्तीय नीति चलानी चाहिए जब तक व्यष्टि अर्थव्यवस्था, ओवर हीटिंग जैसे मजबूर करने वाले कारक नहीं हो। अलग से देखा जाए तो यदि लघु अवधि विकास, सम्भाव्य विकास से कम है अथवा निर्गत का वास्तविक स्तर, सम्भव्य निर्गत से कम है तो वास्तविक वित्तीय घाटा, वित्तीय विषयों की कमियां दर्शाए बिना बढ़ सकता है।

जैसा कि पहले चर्चा की गई है, व्यष्टि आर्थिक दबावों का पर्याप्त रूप में दुष्प्रेरण हुआ है। तथा नए जी.डी.पी. विकास अनुमानों की परवाह नहीं करते हुए, भारतीय अर्थव्यवस्था की पुन: बहाली हो रही है। ये दोनों कारक, पूर्व चक्रीय नीति के मामले को कमजोर बनाते हैं।

---

[2] फिच रेंटिग में, उदाहरण के लिए, भारत बीबीबी (निवेश ग्रेड) श्रेणी में है

[3] कुल बकाया देनदारियां केन्द्र सरकार के सरकारी ऋण में ''अन्य देनदारियों (इसमें राष्ट्रीय लघु बचत निधि, राज्य भविष्य निधि तथा अन्य खाते शामिल हैं) जोड़कर प्राप्त ही जाती है।

2. वन आफ/नए कारक

वर्ष 2015/16 के बजट का कई वन-आफ कारकों से टकराव होगा। एक वन-आफ कारक/विंडफाल जो कि आगे के समेकन के पक्ष में है, का आधार उन कीमतों की अत्यधिक कटौती है जो कि आर्थिक सहायता के भार को जी.डी.पी. के लगभग 0.2-0.3% तक कम कर देगी। तथापि दो विरोधी कारक भी है।

- चौदहवे वित्त आयोग ने राज्यों को संसाधनों के अन्तरण पर अपनी सिफारिशें प्रस्तुत की है। यह सम्भव है कि इन्हें लागू करने से केन्द्र को अतिरिक्त लागत चुकानी होगी।
- केन्द्र और राज्यों के बीच विश्वास में कमी के कारण जीएसटी पर वार्ता रूक गई थी जो इसलिए थी कि वैश्विक आर्थिक संकट के पश्चात् सीएसटी (केन्द्रीय बिक्री कर) 4 प्रतिशत से घटकर 2 प्रतिशत रहने को केन्द्र ने राज्यों को प्रतिपूरित नहीं किया। वर्ष 2016-17 में जीएसटी शुरू करने के लिए राजनीतिक सहमति लेना इसलिए सुसाध्य हुआ कि सरकार ने 25,000 करोड़ रुपए तक की सीएसटी क्षतिपूर्ति का बकाया राज्यों को प्रतिपूरित करने की पेशकश की।
- जैसे कि इस खंड अध्याय 4 में चर्चा की गई है, निजी निवेश और विकास का पुनरुद्धार करने के लिए सरकारी निवेश बढ़ाने की जबरदस्त जरूरत है।

2.5 निष्कर्ष

भारत में वृहद आर्थिक परिस्थितियां आकस्मिक रूप से सुधरी हैं। वृहद-आर्थिक दबाव कम हो गए हैं और स.घ.उ. के नवीनतम अनुमानों (2014-15) के अनुसार स.घ.उ. में हुई वृद्धि चीन समेत अधिकतर देशों से अधिक रही है। यदि यह राजकोषीय अनुशासन बनाए रखा जाता है तो भारत की श्रम संबंधी गतिशीलता असाधारण रूप से बनी रहेगी।

साथ ही, भारत की वित्तीय स्थिति अभी उस स्तर पर है जिस पर यह उस चक्र के दस वर्ष पहले थी। दूसरे शब्दों में पिछले कुछ वर्षों में दिए गए प्रोत्साहन लगभग वापस ले लिए गए हैं। ये सभी कारक इंगित करते हैं कि अल्पावधिक संदर्भ में अधिक राजकोषीय समेकन करने के दबाव कुछ हद तक कम हो गए हैं।

लेकिन निश्चित होकर बैठ जाने की कोई वजह नहीं है। राजकोषीय अनुशासन में कमी होने से वर्ष 2013 में लगभग संकट की स्थिति पैदा हो गई थी और पूर्णतया राजकोषीय उपायों के संदर्भ में भारत की स्थिति निवेश के मामले में अन्य देशों जैसी अनुकूल नहीं है। इस तथ्य को नजरअंदाज करते हुए कि राजकोषीय उपायों पर ही ध्यान देने से उन अनेकानेक कारकों की स्थिति ज्ञात नहीं होती जो विभिन्न देशों में पोर्टफोलियो आवंटित करते समय निवेशकों के जोखिम विश्व पुरस्कार के गंभीर आंकलन में शामिल किए जाते हैं, भारत को सरल घरेलू उत्पाद का 3 प्रतिशत का राजकोषीय घाटा मध्यावधिक लक्ष्य अवश्य हासिल करना चाहिए। भारत को हालिया वर्षों के विकास पत्र को भी उल्ट देना चाहिए और राजस्व घाटों को समाप्त करने के स्वर्ण नियम अपनाने की दिशा में बढ़ना चाहिए और यह सुनिश्चित करना चाहिए कि विकास चक्र में उधार केवल पूंजी निर्माण के लिए होते हैं।

इस आलोक में, हालिया वित्तीय इतिहास के सबक स्पष्ट हैं।

भारत के लिए मध्यावधिक राजकोषीय लक्ष्य प्राप्त करने की कुंजी व्यय नियंत्रण में निहित है, जो 2005-06 और 2008-09 के बीच उछाल वाले वर्षों के दौरान ऐसा करने में असफल रहना, वृहद-आर्थिक नियंत्रण में कमी की बड़ी भूमिका और जुलाई/अगस्त, 2013 के लगभग संकट के कारण हुई।

व्यय बनाए रखने में असफलता और राजकोषीय नियंत्रण की दूसरी लागत खर्च करने की गुणवत्ता थी जिसमें सरकारी निवेश कम हुआ और सरकारी उपभोग लाभार्थी रहा। इसके, बाद में, भारत के मध्यावधिक वृद्धि संभावना को प्रभावित किया।

उन प्रवृतियों को उलटने की जरूरत है और राष्ट्र के लोक वित्तों में स.घ.उ. के 3 प्रतिशत के घाटे पर लाने के लिए लगाने की जरूरत है जैसाकि एफआरबीएम (संशोधन) अधि नियम, 2012 में योजना बनाई गई है। ऐसा करने के लिए सब्सिडी घटाकर व्यय नियंत्रित करने, सरकारी उपभोग और निवेश को इन दोनों के बीच घालमेल बदलने की गुणवत्ता में सुधार लाने और केवल सरकारी निवेश के लिए भारत को उधार लेने के स्वर्णिम नियम बनाने के लिए इस बजट में ठोस कार्रवाई करने की जरूरत होगी। मौटे तौर पर सब्सिडी में कटौती और आर्थिक विनिवेश से प्राप्त लाभों सहित

राजकोषीय गुंजाइश में वृद्धि सार्वजनिक निवेश से समर्पित की जानी चाहिए।

इन उपायों के बावजूद अनेक नए और आपवादिक कारकों के चलते आगामी वित्त वर्ष में मध्यावधिक लक्ष्य प्राप्त करने में प्रगति सीमित रहेगी। यह चौदहवें वित्त आयोग की अनुशंसाओं के कार्यान्वयन, केन्द्रीय में बिक्री कर में कमी के लिए राज्यों को देनदारियों की क्षतिपूर्ति समाशोधित करने और सन्तुलित रूप से निवेश बढ़ाने के कारण है।

तद्नतर, चालू व्यय के अधोगामी रूख और सार्वजनिक उपभोग से निवेश की तरफ चलने के जरिए खर्च सुधार की गुणवत्ता, भारत की वृद्धि, जीएसटी की शुरूआत और संबद्ध राजस्व में वृद्धि मध्यावधिक लक्ष्यों को प्राप्त करना आराम से सुनिश्चित करेगी। यह उछाल इतिहास से आश्वासित है क्योंकि पिछले दशक में वृद्धि में उछाल, बिना ठोस कर सुधार के समग्र कर स.घ.उ. अनुपात लगभग 2–2.5 प्रतिशत बढ़ने के कारण हुआ है।

''हर आंख से आंसू पोंछना:'' जैम नं॰ त्रिसूत्री समाधान

03
अध्याय

3.1 परिचय

आजादी के अड़सठ साल बाद भी, गरीबी एक गंभीर समस्या बनी हुई है। कोई राष्ट्र तब तक महान नहीं बन सकता जब तक उसके इतने अधिक नागरिकों की जीवन संभावना कुपोषणग्रस्त हो, कम शिक्षा अवसरों तक सीमित हो, और लैंगिक भेदभाव किया जाता हो, (इस भाग के खंड 13 में चर्चित)। शिक्षा रिपोर्ट (वाल्यूम 2, अध्याय 2 का बाक्स 9.2 देखें) के हालिया वार्षिक सर्वेक्षण में ऐसे तथ्यों का विवरण है जिनसे पता चलता है कि कक्षा III के विद्यार्थियों के एक चौथाई ही दो अंकों का जोड-घटाव कर सकते हैं और कक्षा II की पुस्तक पढ़ सकते हैं। यह विशेष रूप से गंभीर मुद्दा है।

किसी भी सरकार के पास पिछड़े रह गए लोगों की मदद कैसे की जाए, इसके बारे में एजेंडा होना चाहिए। इस अध्याय में गरीब की मदद करने के लिए लागू प्रणालियों, उन प्रणालियों की कारगरता, आगे बढ़ने के लिए संभावित सुधारों के बारे में कुछ सामान्य तथ्यों और विश्लेषण का उल्लेख है।

ऐतिहासिक रूप से, आर्थिक विकास गरीब के लिए अच्छा रहा है। प्रत्यक्ष रूप से, इसलिए कि इससे आय बढ़ती है और अप्रत्यक्ष रूप से इसलिए कि इससे जनसेवा और सुरक्षा नेट जिनकी गरीब को आवश्यकता होती है (किसी भी और व्यक्ति अधिक) प्रदान करने के लिए राज्य संसाधन मिलते हैं। विकास से अवसर पैदा होने से व्यक्ति भी अपने स्वयं की मानव पूंजी में निवेश करने हेतु प्रोत्साहित होते हैं। हाल में किए गए अध्ययन में इस बात का असाधारण रूप से पता चला है कि बेंगलूरू से बाहर गांवों में परिवारों को केवल यह सूचित करने से कि काल सेंटर शिक्षित महिलाओं को काम पर रख रहे हैं, यह संभावना बढ़ी है कि उन गांवों में किशोर बालिकाएं स्कूली शिक्षा पूर्ण करें।[1]

परंतु, गरीब और कमजोर व्यक्तियों का आर्थिक जीवन स्तर सुधारने के लिए, विकास हेतु सक्रिय सरकारी सहायता दिए जाने की आवश्यकता है। इसके बारे में कोई विवाद नहीं है। मुद्दा यह है कि इस उद्देश्य की सहायता में वित्तीय संसाधनों को किस प्रकार सबसे अच्छी तरह लगाया जाए। प्रभावी गरीबी रोधी-कार्यक्रम निम्नलिखित आधार पर होनी चाहिए:

(i) लोकप्रिय धाारणा के बजाय डाटा पर आधारित,

(ii) इस बात का ध्यान रखा जाए कि किस प्रकार नीतियां उन प्रोत्साहनों को रूपाकार देती हैं - बल्कि विकृत करती हैं - जिनका सामना व्यक्ति और फर्में करती हैं, और

(iii) गरीब को लक्षित और सेवाएं प्रदान करने के लिए राज्य की स्वयं की सीमित क्रियान्वयन क्षमता के बारे में पूरी जानकारी।

कीमतों में दी जाने वाली सब्सिडियां भारत में गरीबी रोधी बहस और सरकार की अपनी नीतिगत टूलकिट का एक महत्वपूर्ण भाग बन गई हैं। केंद्रीय सरकार और राज्य सरकारें दोनों, अनेक उत्पादों की कीमत में सब्सिडी देती है जिनका सुविवेचित आशय गरीब के लिए उन्हें वहनीय कीमतों पर उपलब्ध कराना होता है। चावल, गेहूं, दाल, चीनी, केरोसिन, एलपीजी, नाफथा, पानी, बिजली, डीजल, उर्वरक, लौह अयस्क, रेलवे-ये जिंसों और सेवाओं, जिनके लिए सरकार सब्सिडी देती है, का केवल एक उपभाग है। सब्सिडी के इस उदाहरणस्वरूप सबसेट की अनुमानित प्रत्यक्ष वित्तीय लागत लगभग 378,000 करोड़ रुपए या जीडीपी का लगभग 4.24 प्रतिशत है। केवल यह परिलक्षित करने के लिए कि यह कितनी बड़ी राशि है: 394,000 रुपए की राशि मोटे तौर पर वह राशि है जो प्रत्येक परिवार के व्यय को, उस परिवार के स्तर तक, बढ़ाने के लिए जरूरी होगी जो आय वितरण के 35 प्रतिशतता पर है[2] (जो गरीबी रेखा के 21.9 प्रतिशत से काफी ऊपर है)[3] कितना बढ़ा पाएगा।

---

[1] Jensen, Robert "*Do Labor Market Opportunities Affect Young Women's Work and Family Decisions? Experimental Evidence from India*" , 2012, *Quarterly Journal of Economics*, 127(2), p. 753-792.

[2] भारत की आर्थिक समीक्षा 2014-15, अध्याय 3

[3] योजना आयोग, जुलाई 2013, तेंदुलकर आयोग संबंधी सूचना (http://planningcommission.nic.in/news/pre_pov2307.pdf)

प्रथम: दृश्ट्या, कीमतों में दी जाने वाली सब्सिडियों से ऐसा नहीं लगता कि इससे गरीब व्यक्ति के जीवन स्तरों के बारे में परिवर्तनकारी प्रभाव पड़ा हो, हालांकि इन्होंने महंगाई और मूल्य अस्थिरता को सहन करने के लिए गरीब परिवारों की संभवत: मदद की है। मूल्य सब्सिडी परिदृश्य पर अपेक्षाकृत पैनी नजर डालने से पता चलता है कि ये गरीबी से जूझने में सरकार का कदाचित सबसे अच्छा उपाय न हो।

3.2 सब्सिडी किसे दी जाए?

सरकार जो कई तरह की मूल्य सब्सिडी देती है, उनके बारे में सारणी 3.1 में मोटे रूप से उल्लेख है, न कि व्यापक रूप से, तथा सहज डाटा संगणना सहित अभीष्ट लाभार्थियों के साथ-साथ ब्यौरा दिया गया है और इनसे यह पता चलता है कि इन प्रसुविधाओं से वास्तव में गरीब व्यक्ति को कितना फायदा मिला है। सारणी से निम्नलिखित सामान्य टीका-टिप्पणियों का पता चलता है जो सफल गरीबी-निवारण कार्यक्रमों की तीन विशेषताओं को रेखांकित करती है:

3.2.1 मूल्य-सब्सिडियां प्राय: पश्चगामी हैं

पश्चगामी से हमारा अभिप्राय है कि इन प्रसुविधाओं के फायदे गरीब व्यक्ति के मुकाबले धनी व्यक्ति को अधिक मिलते हैं। यदि किसी ने आय के मुकाबले कल्याणकारी अभिलाभों के वितरण की योजना बनायी, तो पश्चगामी मूल्य सब्सिडी के फायदे बढ़ जाएंगे जैसे-जैसे हम आय वितरण में ऊपर बढ़ते हैं।

चित्र 3.1: आय डिसाइल के अनुसार ईंधन सब्सिडियों से प्राप्त कल्याण अभिलाभ (रूपया प्रतिव्यक्ति प्रतिमाह)

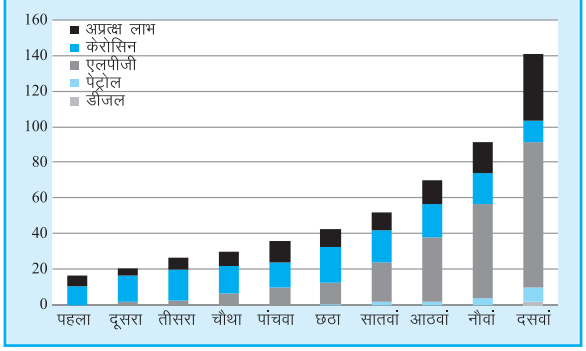

स्रोत : अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष का कार्य पत्र।

प्रारंभ में, बिजली में दी जाने वाली मूल्य सब्सिडियों के बारे में विचार करते है। पहली बात कि इन सब्सिडियों से केवल 67.2 प्रतिशत परिवारों, जिन्हें बिजली पहुंचायी गयी, को ही फायदा मिल सकता है।[4] दूसरी बात, कि विद्युतीकृत परिवारों में भी, अपेक्षाकृत धनी व्यक्ति (आनुमानिक रूप से) काफी अधिक बिजली का इस्तेमाल करते हैं: सारणी 3.1 से पता चलता है कि निचले पायदान पर जीवन बसर करने वाले परिवार औसतन 45 केडब्ल्यूएच या (कुल सब्सिडी का 10 प्रतिशत) प्रति व्यक्ति प्रति माह बिजली की खपत करते हैं जबकि धनी 121 केडब्ल्यूएच (बिजली सब्सिडियों का 37 प्रतिशत) का उपभोग करते हैं।

इसी प्रकार, फ्यूल सब्सिडियां भी अधोगामी कही जा सकती है। चित्र 3.1 में उन प्रसुविधाओं का ग्राफ दिया गया है जो फ्यूल मूल्य सब्सिडियां विभिन्न आय डेसिल्स के परिवारों को दी जाती है।[5] दूसरे डेसिल के परिवारों के लिए कल्याणकारी अभिलाभ लगभग 20 रुपए प्रति व्यक्ति प्रति माह है, जबकि उच्च (धनी) डिसाइल वाले परिवार को लगभग 120 रुपए का फायदा है। जब लिक्विफाइड पेट्रोलियम गैस (एलपीजी) के बारे में दी जाने वाली सब्सिडियों की कोई बात करता है तो यह कहानी भी बिल्कुल उसी तरह की है। पहली, इस सारणी से आश्चर्यपूर्ण बात का पता चलता है कि सबसे गरीब परिवारों में से 50 प्रतिशत परिवार एलपीजी का 25 प्रतिशत ही उपभोग करते हैं। चित्र 3.1 दर्शाता है कि निम्नतम 3 डिसाइल को सब्सिडीकृत एलपीजी से बहुत कम फायदा होता है - उनकी एलपीजी सब्सिडियों से प्राय मासिक लाभ 10 रु॰ प्रतिव्यक्ति से भी कम है - जबकि शीर्ष डिसाइल को आधा दाम फायदे में नहीं है (उनका मासिक लाभ लगभग 80 रु॰ प्रति व्यक्ति है)।

अब हम फ्यूल क्वालिटी पायदान की ओर आगे बढ़ते है तथा केरोसीन के बारे में बात करते हैं। पहली नजर में, केरोसीन मूल्य सब्सिडियों के लिए अच्छा कैंडिडेट दिखायी देता है क्योंकि इसका उपभोग प्राय: गरीब द्वारा किया जाता है। तथापि, सारणी 3.1 से पता चलता है कि कुल उपभोग के 46% का उपभोग गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों, अंत्योदय अन्न योजना कार्डधारी[6] परिवारों, और मूल्य सब्सिडीकृत केरोसीन (पीडीएस द्वारा वितरित) के 49 प्रतिशत का उपभोग, व्यय वितरण के निचले 3 डेसिल

4 भारतीय जनगणना (2011), प्रकाश का स्रोत

5 राहुल आनंद डेविड कोडी, आदिल मोहम्मद, विनोद ठाकुर और जेम्स पी. वाल-''दि फिसकल एंड वेलफेयर इम्पेक्टस ऑफ रिफोर्मिंग फ्यूल सब्सिडी इन इंडिया'' मई, 2013, आईएमएफ वर्किंग पेपर।

6 निर्धनतम 5 प्रतिशत परिवारों के लिए अंत्योदय अन्न योजना के कार्ड दिए जाते है।

सारणी 3.1 : सब्सिडियों से गरीब को कितना फायदा मिलता है?

उत्पाद	उत्पादक हस्तक्षेप	उपभोक्ता हस्तक्षेप	राजकोषीय लागत (करोड़)	सब्सिडियों की लागत (2011-12 के सं॰घ॰उ॰ का %)	फायदों का कितना हिस्सा गरीब को मिलता है?
रेलवे	उप॰ नहीं	सब्सिडीकृत यात्री किराया	51,000	0.57%	निचले परिवारों का 80% रेलवे पर कुल यात्री आद्यांत किराए का 28.1% बैठता है।
एलपीजी	उप॰ नहीं	सब्सिडी (अब प्र॰ ला॰अं॰ द्वारा)	23,746	0.26%	निचले परिवारों का 50% एलपीजी का 25% ही उपभोग करता है।
केरोसीन	उप॰ नहीं	सा॰वि॰ प्रणाली द्वारा सब्सिडी	20,415	0.23%	पीडीएस केरोसिन आवंटन का 41% क्षति के रूप में नष्ट हो जाता है और शेष के केवल 46% का उपभोग गरीब परिवारों द्वारा किया जाता है।
उर्वरक एवं नाइट्रोजिनस वस्तुएं	फर्म विशिष्ट और पोषण विशिष्ट सब्सिडियां उर्वरक विनिर्माताओं को सरकार द्वारा विनियमित एवं वितरित यूरिया आयात	यूरिया का अधिकतम खुदरा मूल्य सरकार द्वारा तय किया जाता है	73,790	0.82%	यूरिया और पीएंडके विनिर्माताओं को अधिकांश आर्थिक फायदा सब्सिडी से मिलता है क्योंकि किसान, विशेषकर गरीब किसान की यूरिया के लिए मांग कम होती है
चावल (धान)	न्यूनतम मूल्य (न्यूनतम समर्थन मूल्य)	पीडीएस द्वारा सब्सिडी	1,29,000	1.14%	पीडीएस चावल का 15% क्षति के रूप में नष्ट हो जाता है। निचले 3 डेसिल वाले परिवार शेष 85% का 53% उपभोग करते है, यही परिवारों तक पहुंच पाता है।
गेहूं					पीडीएस गेहूं का 54% क्षति के रूप में नष्ट हो जाता है। निचले 3 डेसिल वाले परिवार शेष 46% का 56% उपभोग करते है यही परिवारों तक पहुंच पाता है।
दाल	न्यूनतम मूल्य (न्यूनतम समर्थन मूल्य)	-वहीं-	15%	0.002%	निचले तीन डेसिल वाले परिवार, सब्सिडीकृत दालों का 36% उपभोग करते हैं
बिजली	सब्सिडी	उच्च सीमा सरकार द्वारा बाजार मूल्य से कम	32,300	0.36%	निचले डेसिल वाले परिवारों का औसतन मासिक उपभोग = 45 के डब्ल्यूएच जबकि ऊंचे क्विन्टाइल वाले परिवारों का = 121 केडब्लूएच। निचले क्वाइनटाइल वाला कुल बिजली सब्सिडी का केवल 10% ही उपभोग करता है जबकि ऊचे इनटाइल वाला सब्सिडी का 37% उपभोग करता है।
जल	उप॰ नहीं	सब्सिडी	14,208	0.50%	अधिकांश जल सब्सिडियां प्राइवेट नलों के लिए आबंटित की जाती है, जबकि गरीब परिवारों के 60% परिवारों को सरकारी जल प्रणालियों के साथ नहीं जोड़ा गया है।
चीनी	चीनी, गन्ना किसानों के लिए न्यूनतम मूल्य, गन्ना मिलों को सब्सिडी	पीडीएस द्वारा सब्सिडी	33,000	0.37%	पीडीएस चीनी की 48% क्षति के रूप में नष्ट हो जाती है। निचले 3 डेसिल वाले परिवार, शेष 52% का 44% का उपभोग करते है। यही परिवारों तक पहुंच पाता है।
जोड़			377,616	4.24%	

रेलवे – www.ncaer.org/free-download.php?pID+111 पृष्ठ 107 एवं एनएसएस 68वां दौर
एलपीजी – एनएसएस के 68वें दौर की संगणनाएं (2011-12)
केरोसिन – भारत की आर्थिक समीक्षा 2014-15 अध्याय 3
उर्वरक – कृषि इनपुट सर्वे *http://inputsurvey.dacnet.nic.in/nationaltable3.aspx*
चावल और गेहूं – भारत की आर्थिक समीक्षा 2014-15 अध्याय 3
दालें – एनएसएस के 68वें दौर से संगणनाएं (2011-12)
जल – एमआइटी और विश्व बैंक द्वारा सूचित *http://web.mit.edu/urbanupgrading/waterandsanitation/resources/pdf-files/WaterTariff-4.pdf , p2*
चीनी – खाद्य और सार्वजनिक वितरण मंत्रालय *(http://dfpd.nic.in/fcamin/sugar/Notice1.pdf)*

वाले परिवारों द्वारा किया जाता है। इस प्रकार, लोकप्रिय धारणा आंशिक रूप से सही है: धनी परिवारों की तुलना में गरीब परिवार केरोसीन का इस्तेमाल वास्तव में अधिाक करते हैं। परंतु मूल्य सब्सिडीकृत केरोसीन के अपेक्षाकृत अधिक भाग (51 प्रतिशत) का उपभोग ऐसे परिवारों द्वारा किया जाता है जो गरीब नहीं है और वास्तव में इसके 15% प्रतिशत का उपभोग अपेक्षाकृत संपन्न परिवारों (सबसे धनी 40 प्रतिशत) द्वारा किया जाता है।

सब्सिडीकृत पानी भी लगभग सब्सिडीकृत हीट और लाइट के कार्यक्रमों की तरह अधोगामी है। सारणी 3.1 से पता चलता है कि जल यूटिलिटि के लिए आबंटित मूल्य सब्सिडी का बड़ा हिस्सा एक अनुमान से 85 प्रतिशत तक सब्सिडाइजिंग प्राइवेट नलों पर खर्च किया जाता है, जबकि गरीब परिवारों के 60 प्रतिशत परिवार सरकारी नलों से अपना पानी लेते हैं।

यह केवल जिंस सब्सिडियां ही नहीं है जो कभी-कभी अधोगामी स्वरूप की होती हैं, कुछ सब्सिडीकृत सेवाएं भी हैं। रेलवे पैसेंजर टैरिफ कृत्रिम रूप से कम हैं-1993 से, उपभोक्ता मूल्य सूचकांक बढ़कर 4 गुणा से अधिक हो गया है जबकि औसतन यात्री किराए दरें दुगनी भी नहीं हुई है (1993-94 में प्रति पैसेंजर-कि.मी. दर 16.7 पैसे थी, जो 2013-14[8] में बढ़कर 31.5 पैसे ही हुई है) यह मूल्य नियंत्रण प्रणाली, वास्तव में, गरीब परिवारों के मुकाबले, धनी परिवारों को अधिक फायदे प्रदान करती है क्योंकि निचले 80 प्रतिशत परिवार नॉन-सबअर्बन रेलवे मार्गों पर कुल मूल यात्रियों का केवल 28.1 प्रतिशत[9] बैठते हैं।

उपर्युक्त कवायद, सब्सिडियों के संभावित लाभार्थियों के बारे में राय बनाते समय, परंपरागत विवेक के साथ ठोस आंकड़ों को इस्तेमाल करने का महत्व दिखती है।

3.2.2 मूल्य सब्सिडियां बाजारों में इस तरह की गडबड़ी कर सकती है कि उनसे अंततः गरीब आदमी आहत हो

बाजार अर्थव्यवस्था में, मूल्य विभिन्न एजेंटों को दुर्लभ संसाधन आबंटित करने में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। सब्सिडियां परिवारों एवं फर्मों के प्रोत्साहनों में गड़बड़ी कर सकती हैं। इससे सभी सेक्टरों और फर्मों के लिए संसाधनों का गलत आबंटन हो जाएगा जिससे समग्र उत्पादकता कम हो जाती है और अक्सर गरीब व कमजोर वर्ग ही सबसे अधिक आहत होते हैं।[10]

अन्य चावल और गेहूं के लिए दी जा रही सब्सिडियों की बात करते हैं। सरकार उत्पादक और उपभोक्ता, दोनों को कुल लगभग 125,000 करोड़ रुपए की सब्सिडियां देती हैं। गेहूं और चावल की किसानों से गारंटिड न्यूनतम समर्थन मूल्यों (न्यूनतम समर्थन मूल्य-गेहूं 14/- रुपए प्रति किलो, चावल 13.6 रुपए प्रति किलो) पर खरीद की जाती है जो बाजार मूल्य से सामान्यतया अधिक होते हैं।

उच्च न्यूनतम समर्थन मूल्य होने से निम्नलिखित गड़बड़ियां होती है जिनसे गरीब आहत होता है।

(क) रामास्वामी, शेषाद्रि और सुबामणयन (2014) यह बताते हैं कि किस प्रकार उच्च न्यूनतम समर्थन मूल्यों की वजह से किसान चावल और गेहूं का अधिक उत्पादन करते हैं, जिसे भारतीय खाद्य निगम, बाद में, अधिक कीमत पर खरीद कर भाण्डागार में रख लेता है। उच्च न्यूनतम समर्थन मूल्यों की वजह से, बिना न्यूनतम समर्थन वाली फसलों का कम उत्पादन भी प्रोत्साहित होता है। इससे आपूर्ति-मांग में अंतर आने से, बिना न्यूनतम समर्थन मूल्य वाले खाद्य उत्पादों की कीमतें ऊंची हो जाती हैं तथा उनमें अधिक घट-बढ़ होती है। इससे खाद्य वस्तुओं की मंहगाई बढ़ती है और जिससे सबसे अधिक गरीब परिवार प्रभावित होते हैं क्योंकि इनकी अनिश्चित आमदनी होती हैं तथा आर्थिक झटकों से उबरने के लिए आस्तियों की कमी होती है।

(ख) उच्च न्यूनतम समर्थन मूल्यों और पानी के लिए मूल्य सब्सिडी, दोनों के कारण ऐसी फसलें उगाई जाने लगती हैं जिनके लिए अधिक पानी की आवश्यकता होती है। इसकी वजह से भू-जल स्तर

---

7 क्या चालू जल सब्सिडी गरीब तक पहुंचती है? एमआईटी ओर विश्व बैंक वर्किंग पेपर *(http://web.mit.edu/urbanupgrading/waterandsanitation/resources/pdf-files/WaterTariff-4.pdf)*

8 भारत की आर्थिक समीक्षा 2015, खंड 1 अध्याय 6 (रेलवे पर)

9 www.ncaer.org/free-download.php?pID=111 , p107 & 68th Round of the NSS

10 शिए चांग-ताई और क्लेनो, पीटर जे ''चीन व भारत में गलत आबंटन और विनिर्माण टीएफटी'' 2009, दि क्वाटिलि जर्नल ऑफ इकोनोमिक्स 124(4), पीपी 1403-1448.

गिर जाता है जिसके कारण किसान, विशेषकर बिना सिंचाई वाले किसानों को नुकसान होता है।

उपर्युक्त 3.2.1 में विवेचित रेलवे पैंसेंजर सब्सिडियां केवल अधोगामी ही नहीं हैं, उनसे निम्नलिखित गड़बड़ियां भी होती हैं:

(क) घाटा उठा रहे यात्री ट्रांजिट से अभिप्राय है कि रेलवे क्षमता विस्तार निवेशों के वित्तपोषण के लिए पर्याप्त आंतरिक संसाधन नहीं जुटा सकता,

(ख) उच्च भाड़ा टैरिफ में क्रॉस-सब्सिडाइज्ड यात्री किरायों से, रेलों से की जाने वाली ढुलाई सड़क परिवहन के जरिए की मांग की जाने लगती है। इससे न केवल वित्तीय एवं कारगरता लागतें बढ़ती हैं, बल्कि उत्सर्जन से संबद्ध लागतें, यातायात भीड़-भाड़ और सड़क ट्रैफिक भी बढ़ जाता है।

(ग) चूंकि कम यात्री भाड़े को क्रॉस-सब्सिडाइज्ड किया जाता है, इसलिए भाड़ा टैरिफ विश्व में सर्वाधिक हैं (इस वाल्यूम में रेलवे संबंधी अध्याय 6 देखें)। इससे भारतीय विनिर्माण की प्रतिस्पर्धा क्षमता कम हो जाती है एवं विनिर्मित वस्तुओं की लागत बढ़ जाती है जिनका गरीब परिवारों सहित सभी परिवार उपयोग करते हैं।

उर्वरक सब्सिडियां एक और कठिनाई को उजागर करती हैं कि मूल गरीबी-निवारण नीति के रूप मूल्य सब्सिडियों का इस्तेमाल किया जाता है। सब्सिडी का सही आर्थिक प्रभाव मांग-पूर्ति की सापेक्ष लोचनीयताओं पर निर्भर करता है। जो पार्टी मूल्य परिवर्तनों के प्रति कम जवाबदेह होती है उसे सब्सिडी से अधिक फायदा होता है। उर्वरकों के मूल्य में सब्सिडी देने का अंतत: उद्देश्य किसान के लिए सस्ते उर्वरक उपलब्ध कराना है ताकि उन्हें उच्च उपज वाली किस्मों के प्रयोग एवं उत्पादन के लिए प्रोत्साहित किया जा सके। फिर भी यह संभावना है कि उर्वरक के लिए किसान की मांग, उर्वरक विनिर्माता द्वारा आपूर्ति की अपेक्षा, कीमतों[11] के प्रति अधिक संवेदनशील होती है। कीमत सब्सिडी से आर्थिक फायदों का बड़ा हिस्सा संभवत: उर्वरक विनिर्माता को चला जाता है, न कि अभीष्ट लाभार्थी, किसान को।

भिन्न-भिन्न सब्सिडियों से भी कदाचित गरीब ही आहत होता है। उदाहरण के लिए, उर्वरक विनिर्माताओं के पास भौगोलिक दृष्टि से अलग-थलग पड़े क्षेत्रों में अपने उत्पाद बेचने में प्रोत्साहित नहीं होते हैं क्योंकि मूल्य नियंत्रणों से अभिप्राय है कि मूल्य हर जगह समान हो, इसलिए रेलवे के संबंध में भाड़ा सब्सिडी शुरू की गयी है ताकि विनिर्माता अपना उत्पाद की व्यापक रूप से आपूर्ति करने के लिए प्रोत्साहित हों। परन्तु कुछ सब्सिडियां, कभी-कभी, अपर्याप्त होती हैं, क्योंकि भाड़ा दरें विश्व में सबसे अधिक दरों जितनी हैं, तथा ऐसा जानबूझकर कृत्रिम रूप से कम यात्रा किराए रखने के लिए क्रॉस-सब्सिडी की व्यवस्था है। यह एक उदाहरण मात्र है जिसका साफ अर्थ है कि मूल्य नियंत्रणों से प्रोत्साहनों में इस ढंग से गड़बड़ी की जाती है कि उससे अंतत: आहत गरीब परिवार ही होता है।

सब्सिडियों का क्रियान्वयन काफी जटिल हो सकता है, और स्वयं स्थायीकरण के बर्बर तर्क के प्रति अतिसंवेदनशील हैं। उर्वरकों के मामले में, ये पक्के विशिष्ट और आयात कनसाइनमैंट विशिष्ट हैं, ये उर्वरकों की दृष्टि से भी भिन्न हैं, और कुछ नियत-मात्रा आधार पर हैं जबकि अन्य परिवर्तनीय हैं। चीनी के मामले में, गन्ना उत्पादकों के संरक्षण के लिए उच्च समर्थन मूल्य दिए जाते हैं। मिल मालिकों पर इस कर प्रतिसंतुलित करने के लिए, इनका समर्थन, सब्सिडीकृत ऋणों और निर्यात सब्सिडियों के माध्यम से किया जाता है; और उसके पश्चात, उनपर, शीरे की बिक्री पर प्रतिबंध लगाकर पुन: कर लगा दिया जाता है। शीरे को, सह-उत्पाद के रूप में उत्पादित किया जाता है।

संबंधित गड़बड़ियों से सब्सिडियों की कुल लागत प्रत्यक्ष राजकोषीय लागत के मुकाबले काफी बढ़ जाती है और इन गड़बड़ियों में से ज्यादातर उन्हें नुकसान पहुंचाती हैं जो सर्वाधिक कमजोर हैं और जिनके पास उन्हें वहन करने के साधन भी बहुत कम हैं।

3.2.3 हेरा-फेरी (लीकेज़) से उत्पाद सब्सिडियों की कारगरता पर गंभीर दुष्प्रभाव

प्रधानमंत्री ने हाल ही में यह उल्लेख किया कि सब्सिडियों में होने वाली हेरा-फेरी (लीकेज), सब्सिडियों को कम किए बिना, अवश्य समाप्त हों।

राज्य के लिए मूल्य सब्सिडियों को क्रियान्वित करना अक्सर चुनौतीपूर्ण रहता है क्योंकि इनमें कालाबाजारी करने वालों के लिए काफी गुंजाइश होती है। लीकेज से हमारा अभिप्राय ऐसे सब्सिडीकृत माल/सामान/वस्तुओं से होता है जो किसी

[11] एक अनुमान से यह पता चलता है कि उर्वरक मूल्य में 10 प्रतिशत की वृद्धि होने से किसानों द्वारा उर्वरकों की मांग में 6.4 प्रतिशत की कमी आई है। ''रवीन्द्र एच. ढोलकिया और मजुमदार जगदीप'' *Estimation of Price Elasticity of Fertilizer Demand in India*,", 2006, Working Paper.

परिवार तक नहीं पहुंचती। ऊपर वर्णित गड़बड़ियों की तरह, लीकेज़ में न केवल बर्बादी की सीधी लागत शामिल होती है, बल्कि अवसर लागत भी जिसे सरकार उन राजकोषीय संसाधनों को अन्यत्र लगाने पर खर्च करती।

सब्सिडी लीकेज को विवेकपूर्ण ढंग से खत्म करने की हमारी कोशिश को, इन्हीं कारणों की वजट से गरीबों के प्रति प्रसार के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए। पहले, अधोगामी स्वरूप और मूल्य सब्सिडियों से हुई प्रोत्साहन की गड़बड़ी से गरीबी-निवारण उपायों के रूप में उनकी क्षमता कम हो जाती है। दूसरे, सब्सिडी लीकेज कम करने से, अत्यधिक प्रतिलाभ वाले सामाजिक अंतरण कार्यक्रमों के लिए, कल्याणकारी कार्य रोक के बिना, सरकार को राजकोषीय गुंजाइश मिल जाती है; और तीसरे, मूल्य सब्सिडियों के जरिए परिवारों द्वारा प्राप्त की जाने वाली यही कल्याण राशि एक मुश्त आय अंतरणों के जरिए गरीबों को दी जा सकती है।

इसलिए सभी सब्सिडियों को प्रत्यक्ष लाभ अंतरण में रूपांतरित करना सरकारी नीति का एक सराहनीय लक्ष्य है। लेकिन सब्सिडियों का स्थान लेने के लिए प्रत्यक्ष अंतरणों को कार्यान्वित करने की सरकार की क्षमता बढ़ाने में समय लगेगा और इसकी वजह से मूल्य सब्सिडियों की व्यवस्था को सुधारने की रफ्तार धीमी नहीं होनी चाहिए। इस बीच क्या सब्सिडियों को बनाए रखने और लीकेज कम करने का उद्देश्य हासिल किया जा सकता है?

आगे के पैराग्राफों में हम जनगणना और एनएसएस से प्राप्त आंकड़ों का प्रयोग करके लीकेजों का अनुमान लगाएंगे। हमारे आकलन बताते हैं कि ये लीकेजें बहुत बड़ी हैं और इन्हें कम से कम केरोसिन के मामले में परिवार कल्याण पर समझौता किए बिना कम किया जा सकता है।

3.3 केरोसिन का मामला

गरीब और बिजली की सुविधा से वंचित परिवारों में शामें ठंडी और अंधेरी हो सकती हैं। इसलिए केन्द्र सरकार ऊर्जा के इस विशेष स्रोत को प्राप्त करने की लागत कम करने के लिए केरोसिन पर सब्सिडी देती है। 2013-14 में कुल केरोसिन सब्सिडी 30,574 करोड़ रुपए थी और इस वित्त वर्ष में इसके 28,382 करोड़ रुपए होने की संभावना है।

हम एनएसएस के 68वें दौर (2011-12) के पारिवारिक व्यय माड्यूल से प्राप्त आंकड़ों और 2011 की जनगणना के जनसांख्यिकीय आंकड़ों का प्रयोग करके विभिन्न राज्यों में पीडीएस केरोसिन की लीकेज की मात्रा तय करते हैं। पीडीएस लीकेज को पीडीएस केरोसिन के कुल आवंटन और वास्तविक खपत के बीच अंतर के रूप में परिभाषित किया गया है। इन आंकड़ों के आधार पर हम पांच निष्कर्षों पर पहुंचे हैं;

- ***लीकेजें बड़ी और सर्वव्यापी हैं:*** चित्र 3.2 में विभिन्न राज्यों में प्रति पीडीएस उपभोक्ता केरोसिन की जरूरत की तुलना में प्रति पीडीएस उपभोक्ता केरोसीन का आवंटन दिखाया गया है। इस चार्ट में दिखाया गया है कि लगभग प्रत्येक राज्य में

चित्र 3.2: प्रति पीडीएस उपभोक्ता को आवंटन की तुलना में प्रति पीडीएस उपभोक्ता की आवश्यकता

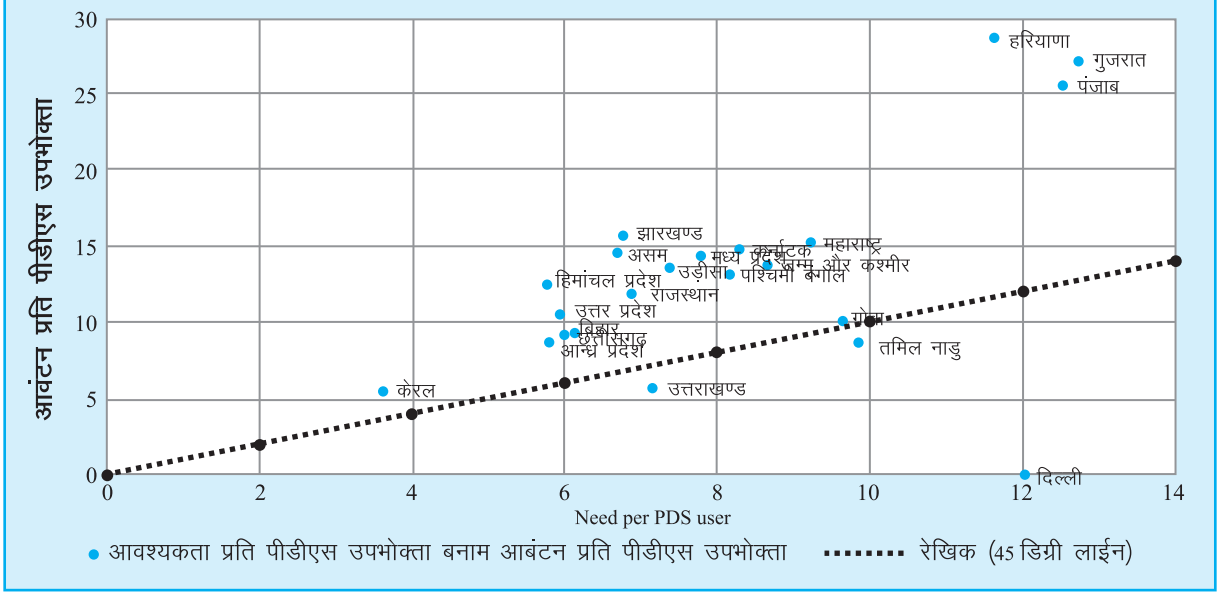

[12] तमिलनाडु और दिल्ली जैसे कुछेक राज्यों के संबंध मं आंकड़ों से जुड़ी समस्याएं है।

चित्र 3.3: आवंटन की मात्रा में अन्तर के साथ पीडीएस केरोसिन के लीकेज की मात्रा में भी अंतर होता है।

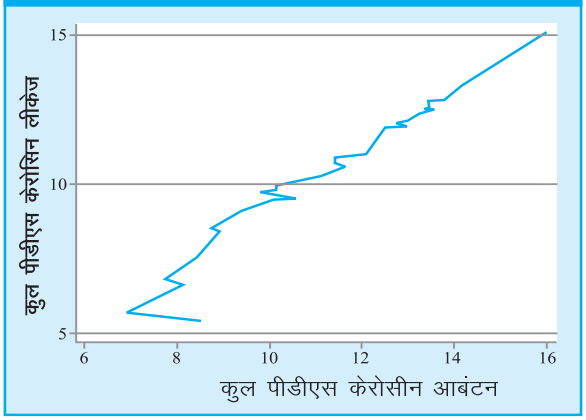

पीडीएस केरोसिन का आवंटन खपत से अधिक है अर्थात् लगभग सभी राज्यों में पीडीएस केरोसिन की कुछ लीकेज देखी गई है।[12] समग्र तौर पर, ये लीकेज उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, गुजरात और महाराष्ट्र में सबसे अधिक है; प्रति व्यक्ति संदर्भ में, ये लीकेज हरियाणा, गुजरात और पंजाब में सबसे अधिक है और वास्तविक आवंटनों के प्रतिशत के संदर्भ में ये पूर्वोत्तर राज्यों में मणिपुर, सिक्किम और अरुणाचल प्रदेश में सबसे अधिक है।

- ***पीडीएस आवंटनों की मात्रा के साथ-साथ लीकेज़ बढ़ते हैं:*** चित्र 3.3 दर्शाता है कि पीडीएस केरोसिन

सारणी 3.2 : पीडीएस में आवंटन और रिसाव के बीच सम्बन्ध

	सभी राज्य	पूर्वोत्तर राज्यों को छोड़कर	सिर्फ बड़े राज्य
लाग (प्रति व्यक्ति पीडीएस आवंटन)	1.389*** (0.000)	1.130*** (0.002)	1.227*** (0.007)
लाग (सघउ प्रति व्यक्ति)	-0.376 (0.308)	-0.565 (0.158)	-0.558 (0.174)
भ्रष्टाचार का पैमाना	0.223 (0.169)	0.281 (0.121)	0.277 (0.134)
प्रेक्षण	28	21	17
समायोजित आर^2	0.670	0.702	0.685

पी-कोष्ठकों में अधिमान * p < 0.10, ** p < 0.05, *** p <0.01

चित्र 3.4: स.घ.उ. प्रति व्यक्ति के लॉग की तुलना में उपभोक्ता को केरोसिन का अतिरिक्त आवंटन

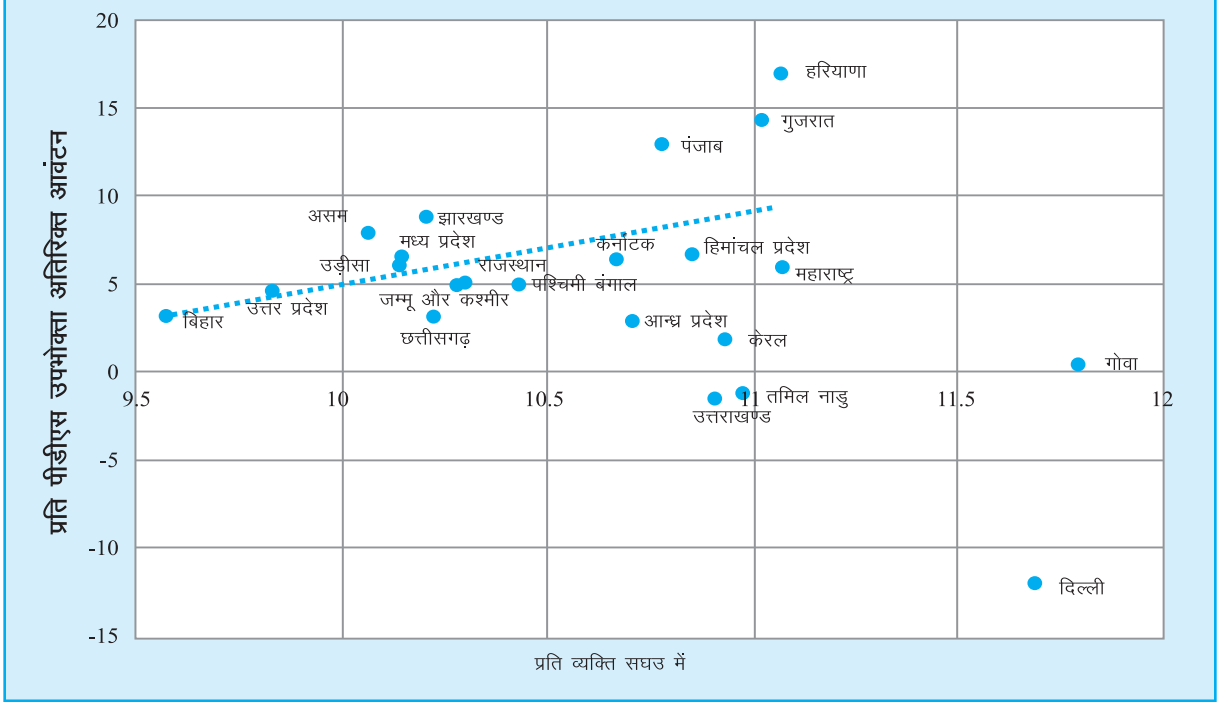

सारणी 3.3 : केरोसिन निर्भरता की आय लोचशीलता के लाग में अंतर (कुल केरोसिन खपत)

	सभी राज्य	पूर्वोत्तर राज्यों को छोड़कर	सिर्फ बड़े राज्य
लाग (सघउ प्रति व्यक्ति)	-1.857*** (0.004)	-2.228*** (0.000)	-1.620*** (0.001)
भ्रष्टाचार का पैमाना	0.0169 (0.963)	0.363* (0.080)	0.395** (0.048)
प्रेक्षण	30	23	19
समायोजित आर^2	0.152	0.424	0.420

पी-कोष्ठकों में अधिमान * पी< 0.10, ** पी< 0.05, * पी<0.01**

के आवंटन और लिकेज के बीच सकारात्मक संबंध है। यह सकारात्मक संबंध अधिकाधिक औपचारिक विश्लेषण में बना रहता है- आबंटन पर लिकेज की रेखीय परावर्तन और राज्य स्तरीय आर्थिक विकास के लिए नियंत्रण एवं भ्रष्टाचार समाप्त करने के उपायों के रूप में ।

- **समायोजित निर्धन सब्सिडी प्राप्त केरोसीन का केवल 46 प्रतिशत का उपयोग करता है, जिनती अधिक पीडीएस केरोसिन का आवंटन किया जाता है - वास्तविक खपत उतनी कम होती है। इन्हें साम्यता के आधार पर उचित ठहराना कठिन हैं:** सब्सिडी प्राप्त केरोसीन का अधिक आवंटन को कभी-कभी उस पृष्ठभूमि पर उचित ठहराया जाता है कि उनका उपयोग निर्धन परिवारों में प्रकाश के स्रोत के रूप में किया जाता है। यद्यपि वह सही है, चित्र 3.4 दर्शाता है कि संपन्न राज्यों में पीडीएस केरोसीन का नि:सरण अधिक होता है। इन राज्यों में आवंटन में कटौती करना बफर की अनुमति दी जाती है ताकि वे अब भी वास्तविक खपत स्तर से बहुत अधिक हैं - इससे अपेक्षाकृत संपन्न राज्य अधिक प्रभावित होंगे। इसके अतिरिक्त, एनएसएस सूक्ष्म आंकड़े दर्शाते हैं कि बीपीएल या एएवाई कार्डधारक परिवारों द्वारा 46 प्रतिशत सब्सिडी प्राप्त केरोसीन की खपत होती है जो लोकप्रिय अवधारणा के अनुरूप है कि केवल विशिष्ट निर्धन परिवार ही केरोसीन का उपयोग करते हैं।
- ***केरोसिन तुच्छ वस्तु है:*** आय बढ़ने के साथ ही केरोसिन की खपत गिरने लगती है। ज्योंहि परिवार अमीर होते हैं वे इसकी खपत कम करते हैं क्योंकि वे अधिक गुणवत्ता और अधिक स्वच्छता वाले एलपीजी जैसे ज्यादा महंगे ईंधनों का प्रयोग करने लगते हैं। सारणी 3.3 में राज्य के प्रति व्यक्ति सघउ पर प्रति व्यक्ति कुल केरोसिन के रेखीय ह्रास के क्रम का अनुमान लगाते हुए इस पूर्वाभास को प्रदर्शित किया गया है। इस वृद्धि को रोकने के लिए राज्यों के विभिन्न नमूनों के परिणाम दर्शाए गए हैं। किसी राज्य की आय में प्रति 1 प्रतिशत वृद्धि से केरोसिन की खुली खपत 1.5 प्रतिशत से अधिक गिरने की प्रवृत्ति हो जाती है। वर्ष 2011-12 (एनएसएसओ का 68वां दौर) और चालू वर्ष के बीच आय में वृद्धि से यह उम्मीद है कि इससे केरोसिन की मांग प्रति परिवार बढ़ने की बजाय घटेगी।
- सारणी 3.4 दर्शाती है कि ***भारत में पीडीएस केरोसिन का आवंटन पीडीएस और पीडीएस-भिन्न केरोसिन खपत के जोड़ से भी अधिक है।*** 1.8 मिलियन किलोलीटर आवंटित सब्सिडी वाला केरोसिन बिना हिसाब-किताब के रहता है अर्थात बिना खपत का होता है और यह पेट्रोल और डीजल ईंधनों में मिलावट जैसे गैरकानूनी कार्यकलापों का संकेतक हो सकता है।

सारणी 3.4 इन लीकेजों की वित्तीय लागत भी दर्शाती है। प्रति लीटर 33.9 रुपए की प्रति यूनिट सब्सिडी दर का प्रयोग करते हुए (कालम 3 और 4), हमने आकलन किया है कि राज्यों की केरोसिन खपत को तब भी पूरा किया जा सकता है, यदि सब्सिडी वाले केरोसिन का आवंटन लगभग 9 मिलियन किलोलीटर के मौजूदा स्तर से 41 प्रतिशत घटाकर लगभग 5.3 मिलियन किलोलीटर रह जाए। इन लीकेजों की वित्तीय लागत लगभग 10,000 करोड़ रुपए है और यह इंगित करता है कि इन वित्तीय संसाधनों को व्यर्थ करने की सुयोग लागत वास्तव में महत्वपूर्ण है।

सारणी 3.4 : आवंटनों के यौक्तिकीकरण से बचत

राज्य	कुल पीडीएस आवंटन (कि.ली.)	सकल एनएसएस डाटा 2011-12 के अनुसार कुल पीडीएस खपत (कि.ली.)	गरीब परिवारों द्वारा उपयोग का अंश	अतिरिक्त पीडीएस आवंटन (कि.ली.)	लीकेज %	एनएसएस माइक्रो डाटा 2011-12 (कि.ली.) के अनुसार राशन कार्ड धारकों का कुल पीडीएस खपत	अतिरिक्त पीडीएस आवंटन को राजकोषीय लागत (करोड़ रुपये)
अखिल भारत	**9,028,806**	**5,349,541**	**46**	**3,679,265**	**41**	**4,776,000**	**10,044**
उत्तर प्रदेश	1,590,000	897,104	28	692,896	44	771,600	**1,892**
प. बंगाल	963,528	598,645	33	364,883	38	548,400	**996**
गुजरात	673,416	316,528	45	356,888	53	296,400	**974**
महाराष्ट्र	730,464	442,258	37	288,206	39	399,600	**787**
म. प्रदेश	625,668	339,104	50	286,564	46	291,600	**782**
बिहार	814,068	537,918	49	276,150	34	453,600	**754**
कर्नाटक	522,888	294,351	79	228,537	44	270,000	**624**
राजस्थान	508,764	294,658	30	214,106	42	262,800	**585**
उड़ीसा	398,988	217,362	60	181,626	46	176,400	**496**
असम	327,966	150,700	50	177,266	54	132,000	**484**
आंध्र प्रदेश	465,996	310,257	96	155,739	33	298,800	**425**
झारखंड	268,704	116,363	50	152,341	57	91,440	**416**
छत्तीसगढ़	180,072	118,196	69	61,876	34	105,360	**169**
हरियाना	91,260	37,113	83	54,147	59	36,840	**148**
पंजाब	90,132	44,260	50	45,872	51	38,640	**125**
केरल	120,192	79,595	35	40,597	34	78,960	**111**
जम्मू एवं कश्मीर	90,072	56,831	30	33,241	37	43,440	**91**
मणिपुर	24,967	3,893	35	21,074	84	2,556	**58**
मेघालय	25,943	7,827	62	18,116	70	7,092	**49**
नागालैंड	17,100	579	7	16,521	97	310	**45**
त्रिपुरा	39,179	25,273	37	13,906	35	24,360	**38**
हिमाचल प्रदेश	24,660	11,394	36	13,266	54	10,560	**36**
अरुणचल प्रदेश	11,479	2,766	21	8,713	76	2,016	**24**
सिक्किम	6,348	1,282	67	5,066	80	1,142	**14**
मिजोरम	7,800	3,216	36	4,584	59	2,868	**13**
अण्डमान निकोबार द्वीप समूह	6,912	3,100	12	3,812	55	2,832	**10**
पडुचेरी	4,440	2,653	76	1,787	40	2,508	**5**
दादरा नगर हवेली	2,280	1,326	41	954	42	1,308	**3**
चण्डीगढ़	3,528	2,764	52	764	22	2,208	**2**
लक्षद्वीप	1,008	699	16	309	31	583	**1**
गोआ	5,244	5,016	11	228	4	4,884	**1**
दमन दीव	876	920	12	(44)	(5)	533	**(0)**
दिल्ली	-	4,704	51	(4,704)	-	3,504	**(13)**
उत्तराखण्ड	36,168	45,478	31	(9,310)	(26)	42,360	**(25)**
तमिलनाडू	348,696	396,244	39	(47,548)	(14)	366,000	**(130)**

टिप्पणियां : (क) प्रति लीटर 33.9 रुपए की सब्सिडी लागत 2013-14 के वार्षिक सब्सिडी बिल का औसत निकाल कर आकलित की गई थी। यह डाटा पैट्रोलियम मंत्रालय के नीति और विश्लेषण प्रकोष्ठ द्वारा उपलब्ध कराया गया था।

(ख) एनएसएस 2011 के 68 के दौर में सकेतिक किए गए परिवारों द्वारा केरोसिल की पीडीएस खपत की सूचना की गई है। हम प्रत्येक परिवार के गुणने से उसके द्वारा की गई खपत को मापते है। जिससे कि समग्र प्रतिमानों में एक परिवार के प्रतिनिधित्व का पता चलता है।

सारणी 3.5 : पीडीएस चावल रिसाव की राजकोषीय लागत की मात्रा का निर्धारण करना और अनुमान लगाना

राज्य	कुल पीडीएस ऑफटेक (टन)	एनएसएस 2011-12 के अनुसार कुल पीडीएस खपत (टन)	लिकेज (टन)	लिकेज (%)	अतिरिक्त पीडीएस आवंटन की राजकोषीय लागत (करोड़ रुपये)
अखिल भारत	**24,325,843**	**19,188,000**	**3,639,478.89**	**15**	**5,892**
अतिरिक्त एनएफएसए	**17,717,053**	**13,881,541**	**3,835,512**	**22**	**6,210**
उ. प्रदेश	2,824,555	1,635,600	1,188,955	42	1,925
महाराष्ट्र	1,432,041	892,320	539,721	38	874
आंध्र प्रदेश	3,031,942	2,960,400	71,542	2	116
प. बंगाल	1,222,344	798,480	423,864	35	686
कर्नाटक	1,925,849	1,428,000	497,849	26	806
झारखंण्ड	1,000,369	568,800	431,569	43	699
असम	1,229,041	895,200	333,841	27	540
बिहार	1,630,176	1,368,000	262,176	16	424
केरल	1,155,661	922,800	232,861	20	377
तमिलनाडू	3,532,541	3,156,000	376,541	11	610
गुजरात	305,644	154,800	150,844	49	244
मणिपुर	124,444	5,268	119,176	96	193
दिल्ली	129,384	18,672	110,712	86	179
उड़ीसा	1,685,706	1,536,000	149,706	9	242
नागालैण्ड	106,512	9,780	96,732	91	157
मेघालय	155,719	90,120	65,599	42	106
त्रिपुरा	256,990	225,600	31,390	12	51
हिमाचल प्रदेश	190,807	151,200	39,607	21	64
अरुणाचल प्रदेश	75,963	50,760	25,203	33	41
गोआ	51,562	28,560	23,002	45	37
सिक्किम	42,236	22,560	19,676	47	32
पडुचेरी	41,209	36,120	5,089	12	8
उत्तराखण्ड	190,977	170,400	20,577	11	33
दादरा नगर हवेली	9,219	5,340	3,879	42	6
चण्डीगढ़	3,353	917	2,436	73	4
अण्डमान एवं निकोबार द्वीप समूह	10,873	19,200	(8,327) -	77-	13
दमन दीव	3,041	125	2,916	96	5
लक्षद्वीप	4,053	4,344	(291) -	7-	0
पंजाब	0	534	(534)	--	1
हरियाणा	0	2,436	(2,436)	--	4
राजस्थान	0	4,380	(4,380)	--	7
मिजोरम	58,378	67,560	(9,182)	167	15
म. प्रदेश	404,878	316,800	88,078	22	143
जम्मू एवं कश्मीर	522,074	505,200	16,874	3	27
छत्तीसगढ़	892,302	1,123,200	(230,898) -	26-	374

सारणी 3.6 : पीडीएस चावल रिसाव की राजकोषीय लागत की मात्रा का निर्धारण करना और अनुमान लगाना

राज्य	कुल पीडीएस ऑफटेक (टन)	एनएसएस 2011-12 के अनुसार कुल पीडीएस खपत (टन)	लीकेज (टन)	लीकेज (%)	अतिरिक्त पीडीएस आवंटन की राजकोषीय लागत (करोड़ रुपये)
अखिल भारत	**18,776,070**	**8,592,000**	**10,184,070**	**54**	**12,598**
अतिरिक्त एनएफएसए	**13,350,441**	**5,605,725**	**7,744,716**	**58**	**9,580**
उ. प्रदेश	3,820,778	1,380,000	3,013,326	69	3,727
महाराष्ट्र	2,107,204	1,088,400	1,018,804	48	1,260
प. बंगाल	2,058,861	552,000	1,506,861	73	1,864
गुजरात	937,155	312,000	625,155	67	773
राजस्थान	2,078,693	870,000	1,208,693	58	1,495
मध्य प्रदेश	2,248,539	1,094,400	1,154,139	51	1,428
बिहार	1,127,174	1,015,200	111,974	10	139
पंजाब	686,355	264,000	422,355	62	522
हरियाणा	586,431	313,200	273,231	47	338
दिल्ली	415,911	74,760	341,151	82	422
असाम	363,710	12,960	350,750	96	434
उड़ीसा	372,299	88,920	283,379	76	351
चंडीगढ़	192,892	116,520	76,372	40	94
झारखण्ड	15,669	7,428	8,241	53	10
उत्तर प्रदेश	265,889	166,800	99,089	37	123
केरला	273,146	150,000	123,146	45	152
हिमाचल प्रदेश	321,856	235,200	86,656	27	107
कर्नाटक	308,763	243,600	65,163	21	81
नागालैण्ड	33,582	109	33,473	100	41
मणिपुर	20,440	3	20,437	100	25
त्रिपुरा	18,391	4,152	14,239	77	18
मेघालय	26,971	358	26,613	99	33
चण्डीगढ़	30,863	8,820	22,043	71	27
अण्डमान एवं निकोबार द्वीप समूह	5,153	3,072	2,081	40	3
मिजोरम	7,855	754	7,101	90	9
गोआ	8,859	3,984	4,875	55	6
अरुणाचल प्रदेश	7,626	686	6,940	91	9
दमन दीव	1,628	40	1,588	98	2
सिक्किम	2,700	71	2,629	97	3
पडुचेरी	6,607	9,276	(2,669)	(40)-	3
दादरा नगर हवेली	1,028	174	854	83	1
लक्षद्वीप	-	42	(42)	-	-
आंध्र प्रदेश	33,532	40,680	(7,148)	(21)-	9
जम्मू एवं कश्मीर	221,411	187,200	34,211	15	42
तमिलनाडू	-	352,800	(352,800)	--	436

सारणी 3.5 और 3.6 पर टिप्पणियां

क) ज्यादा आवंटन पीडीएस आवंटन और पीडीएस खपत के बीच अंतर के रूप में परिकलित किये जाते हैं।

ख) यह राजकोषीय लागत कुल ज्यादा आबटन हो प्रति क्विंटल सविसडी (1237 रुपए) गुणित करके परिकलित की जाती है.

ग) हमारा प्रस्तावित आवंटन एनएसएस के अनुसार 2011-12 की पीडीएस खपत को 25 प्रतिशत बढ़ा कर परिकलित किया जाता है।

घ) हमारे प्रस्ताव के कारण होने वाली बचत पीडीएस आवंटन और हमारे प्रस्तावित आवंटन के वीच अंतर है।

ङ) राजकोषीय वचत कुल बचत (अनाज टन में) को प्रति क्विंटल सब्सिडी से गुणित करके पुनः परिकलित की जाती है।

3.4 भोजन का मामला

पीडीएस के द्वारा सब्सिडी वाले अनाज के वितरण में इसी प्रकार की स्थिति होती है। सारणी 3.5 और 3.6 यह दर्शाती है कि रिसाव ज्यादा है और बहुत से राज्यों में मौजूद है और यह चावल (15 प्रतिशत) के अपेक्षा गेहूं (54 प्रतिशत) में काफी ज्यादा है। इन रिसावों की राजकोषीय लागत भी कीमत ज्यादा है। पीडीएस चावल के लिए लगभग 5800 करोड़ रु॰ तथा पीडीएस गेहूं को लिए 12,600 करोड़ रु॰। पीडीएस रिसाव के विषय पर हाल ही की शैक्षाणिक शोध से पता चला है कि रिसाव के कम हो रहे हैं। यद्यपि अभी भी अस्वीकार्य रूप से ज्यादा है।[16] यह भी सांकेतिक साक्ष्य है कि बीपीएल श्रेणी की अपेक्षा एपीएल में ज्यादा है।[17] हम यह नोट करते हैं कि भोजन सब्सिडी रिसाव को कम करने का किसी भी प्रस्ताव पर विचार करते हुए राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षाअधिनियम के प्रावधानों को ध्यान में रखना होगा जो परिवारो को कुल 5 कि॰ग्रा॰ सब्सिडी वाला अनाज (चावल, गेहूं और/अथवा बाजारा क्रमश: 3, 2 और 1 रुपए प्रति कि.ग्रा. तथा गर्भवती महिलाओं को नकद लाभ तथा छोटे बच्चों को गर्म भोजन प्रदान करते हैं।

रिसाव उन राज्यों में ज्यादा है जिनका आवंटन ज्यादा है। (सारणी 3.7), और जैसे ही परिवार धनी होता जाता है, अनाज की खपत बढ़ती जाती है (सारणी 3.8)।

सारणी 3.7 चावल आवंटन तथा पीडीएस रिसाव के बीच संबंध।

	सभी राज्य	उत्तरपूर्वी राज्यों को छोड़कर	केवल बड़े राज्य
लॉग (प्रति व्यक्ति पीडीएस आवंटन)	0.972***	0.736***	0.913***
	(0.000)	(0.010)	(0.015)
लॉग (प्रति व्यक्ति स.घ.उ.)	0.226	0.332	0.252
	(0.382)	(0.139)	(0.340)
भ्रष्टाचार का पैमाना	-0.172	-0.225	-0.270
	(0.262)	(0.212)	(0.186)
प्रेक्षण	27	20	17
समायोजित आर ^{2}	0.428	0.292	0.279

आश्रित परिवर्तनीय कारक लॉग (प्रतिव्यक्ति अतिरिक्त पीडीएसआवंटन) है* पी < 0.10, ** पी < 0.05, * पी <0.01**

सारणी 3.8 चावल संबंधी आय में घट-बढ़

	लॉग (खपत)	लॉग (खपत)	लॉग (खपत)	लॉग (खपत)
लॉग (प्रतिव्यक्ति पीडीएस आवंटन)	-0.142*** (0.000)	-0.137*** (0.000)	0.106*** (0.000)	-0.123*** (0.000)
जिला नियत प्रभाव	No	Yes	Yes	Yes
राज्य नियत प्रभाव	No	Yes	Yes	Yes
प्रेक्षण	30835	3085	18581	1703
समायोजित आर^2	0.019	0.518	0.516	0.628

पी॰-कोष्ठकों में मान* पी॰ < 0.10, ** पी॰ < 0.05, * पी॰ <0.01**

12 अशोक गुलाटी और श्वेता सैनी ''लीकेजिज फ्रॉम डिस्ट्रीव्यूशन सिष्टम (पीपीएस) एंड वे फारवर्ड,'' 2015, आईसीआरआईईआर वर्किंग पेपर।

13 जीन ड्रेज और रीतिका खेरा ''सार्वजनिक वितरण प्रणाली के रिसाव को समझना'' 2015 आर्थिक तथा राजनीतिक, साप्ताहिक 14 फरवरी।

3.5 नकद अन्तरण से सुलभ होने वाली सम्भावनाएं

प्रौद्योगिकी, निर्धनों का आर्थिक जीवन सुधारने के लिए सरकार के लिए किफायती रूप से बेहतर रास्ते उपलब्ध करवा रही है। विशेष रूप से प्रोद्योगिकियां जो राज्य को बेहतर ढंग से व्यक्तियों तथा घरेलू क्षेत्र को वित्तीय संसाधनों को, उनके लक्ष्य बनाकर उन्हें अन्तरण करने में समर्थ बनाती है, वे गरीबी रोधी कतिपय साधनों को बढ़ाती है, जो सरकार के अधिकार-क्षेत्र में है। इन प्रौद्योगिक खोजों ने निर्धनों की सहायता के लिए सीधे नकद अन्तरण की संभावना में राजनैतिक, नीतिगत और एकेडमिक रुचि का पुनः नवीकरण किया है। हाल ही के प्रौद्योगिक साक्ष्य यह दस्तावेज प्रस्तुत करते हैं कि बिना शर्त के नकद अन्तरण का अगर लक्ष्य सही होता तो यह घरेलू उपभोग और परिसम्पाति स्वामित्व को बढ़ावा दे सकता है और अल्ट्रा निर्धनों[14] की खाद्य सुरक्षा की समस्याओं को कम कर सकता है।

नकद अन्तरण, मौजूदा गरीबी रोधी कार्यक्रमों की कारगरता को भी बढ़ा सकते हैं। वितरण प्रक्रिया से जुड़े सरकारी विभागों की संख्या को कम करके लीकेज के अवसरों में कमी लाई जा सकती हैं। हाल ही के आन्ध्र प्रदेश में किए गए अध्ययन[15] से यह पता चला है कि एम॰जी॰ नरेगा और सामाजिक सुरक्षा भुगतान को आधार से जुड़े बैंक खातों से भुगतान किया जा रहा था। आधार से जुड़ी, नई सीधे लाभ अन्तरण की प्रणाली के माध्यम से परिवारों को औसत 10 दिन पहले भुगतान प्राप्त होता है तथा लीकेज 10.8 प्रतिशतांकन तक कम हो गई है। कम लीकेज के कारण वित्तीय बचतों का मान कार्यक्रम के कार्यान्वयन की लागत से 8 गुणा अधिक था। यह सुरक्षित भुगतान की सुपुर्दगी के लिए अपेक्षित राज्य की क्षमता में सार्वजनिक निवेश में उच्च प्रतिलाभ दिखाता है।

कुल वित्तीय बचतों के अतिरिक्त, आय अन्तरण उपर्युक्त सेक्शन ।। में बताए गए अनुसार उपभोक्ता तथा उत्पादनकर्ताओं के प्रोत्साहनों को प्रभावित किए बिना उन कल्याणकारी लाभों, जो वे मूल्य संबंधी आर्थिक सहायता से प्राप्त करते है, के लिए उन्हें प्रतिपूर्ति कर सकता है।

3.6 जेएएम नम्बर त्रिसूत्री समाधान

आर्थिक सहायताओं को समाप्त करना अथवा चरणबद्ध तरीके से कम करना न तो व्यवहार्य है और न ही वांछनीय जब तक निर्धनों और निचले वर्गों को ऊपर उठाने के लिए सहायता के अन्य तरीके न अपनाए जाएं और उन्हें उनके आर्थिक लक्ष्य पूरा करने के लिए समर्थ न बना दिया जाए। जैम नम्बर त्रिसूत्री समाधान जन धन योजना, आधाार और मोबाइल नंबर से सरकार एक लक्षित रूप में और कम विकृत रूप से निर्धन परिवारों को यह सहायता दे सकती है।

दिसम्बर 2014 की स्थिति के अनुसार, 720 मिलियन से अधिक नागरिकों को आधार-कार्ड आबंटित किए गए हैं। इनकी संख्या 20 मिलियन प्रति माह की दर से बढ रही है तथा दिसम्बर 2015 तक, देश में कुल आधार कार्डधारकों की संख्या 1 बिलियन हो जाएगी। आधार संख्या को एक सक्रिय बैंक खाते से जोड़ना, आय अन्तरण को लागू करने मे महत्वपूर्ण है। इस आशय से भारत सरकार ने दिसम्बर, 2014 तक 100 मिलियन बैंकखातों को पंजीकृत आधार संख्या के साथ जोड़ दिया। जन-धन योजना के शुरू होने से, बैंक खातों की संख्या में और वृद्धि होने की सम्भावना है तथा यह निर्धनों के लिए वित्तीय संसाधनो के लक्ष्य बनाने तथा उन्हें अन्तरण करने के लिए अत्यधिक अवसर दे रही है। वास्तव में सरकार पहले ही कुछ क्षेत्रों में 9.75 करोड़ प्राप्त कर्ताओं के बैंक खातों में सीधे लाभ अन्तरण के माध्यम से सीधे कुकिंग गैस आर्थिक सहायता का भुगतान करते हुए यह प्रयास कर रही है।

यह दो वैकल्पिक वित्तीय सुपुर्दगी तंत्रों की यहां व्याख्या करते हैं।

- **मोबाइल मनी:** इस समय 900 मिलियन से अधिक सैल फोन प्रयोग कर्ता तथा 600 मिलियन यूनीक प्रयोगकर्ता है, मोबाइल मनी से जनसंख्या के एक बड़े हिस्से को सीधे लाभ की सुपुर्दगी करने का अनुपुरक तंत्र प्रस्तुत करता है।[16] इन सैल-फोनों में से 370 मिलियन फोन ग्रामीण क्षेत्रों में है तथा यह संख्या 2.82 मिलियन नए प्रयोगकर्ताओं की दर से प्रति माह बढ़ रही है। आखिरी मील की क्नैक्टिविटी की चुनौती की शर्तों के अनुसार, मोबाइल मनी,

[14] जोहेन्स और हाशोफर एण्ड जेशिमि शैपिगे (2013), हाऊसओतड रेसपान्स टू इन्कम चेन्जेस : एवीडैन्स फाम एन अन कन्डश्शनल कैश ट्रान्सफर प्रौग्राम इन केन्या, वर्किंग पेपर

[15] 158 उप-जिलों के एक समूह ने इस नई भुगतान प्रणाली को कार्यान्वित किया, अपितु उन्हें इस कार्यक्रम में औचक क्रम में दर्ज किया गया जिसे अनुसन्धान कर्ता, एम॰जी॰ नरेगा भुगतान की लीकेज पर दर्ज करने की ध्यानपूर्वक जांच पड़ताल कर सकते है। कार्तिक मुरलीधरन, पॉल निहास एंड सन्दीप सुखटंकर (2014), बिल्डिंग स्टेट कपैसिटी : एविडन्स फ्राम बायोमेंट्रिक स्मार्ट काडर्स इन इण्डिया, वर्किंग पेपर।

[16] *http://www.trai.gov.in/WriteReadData/WhatsNew/Documents/Presspercent20Release-TSD-Mar,14.pdf*

अत्यधिक व्यवहार्य विकल्प प्रस्तुत करती है। यह कि आधाार के रजिस्ट्रेशन में उपभोक्ता का मोबाइल नं॰ भी शामिल है, अत: मैं यह अपेक्षा कि मोबाइल नं॰ को नागरिकों के यूनीक आइडैन्टीफिकेशन नं॰ के कोड से जोड़ने के लिए जरूरी प्रचालनात्मक अड़चनें भी कम है। यह पता चला है कि कई सैल फोन आप्रेटर फरवरी 2015[17] मे भुगतान बैंक लाइसेंस के लिए आवेदन कर रहे थे, मोबाइल मनी प्लेटफार्म, सीधे आधाार पर आधारित अन्तरण के लिए पर्याप्त अवसर उपलब्ध करवाता है।

- **डाकघर:** भारत में विश्व का सवसे बड़ा डाक नेट वर्क है जिसमे 1,55,015 डाक घर है तथा इन में से (89.76%) ग्रामीण क्षेत्रों[18] में हैं। मोबाइल मनी ढांचे की तरह डाकघर (भुगतान अथवा नियमित बैंक के रूप में) आधाार से जुड़े लाभ अन्तरण ढांचे में, आईएफएससी कोड का आवेदन करके बड़ी सरलता से इसमें फिट हो सकता है तथा आई॰एफ॰एस॰सी॰ से डाकघर आधार से जुड़े खातों को अपने साथ सीडिंग करना शुरू कर सकता है। देश में उपभोक्ताओं की एक बड़ी संख्या को सेवाएं प्रदान करने में डाकघर नेटवर्क की प्रतिष्ठा है।

यदि जैम नम्बर त्रिसूत्री को आसानी से जोड़ा जा सकता है तथा सभी आर्थिक सहायताएं किसी एक सहायता में अथवा कुछ मासिक अन्तरणों में समाहित की जा सकती हैं तो निर्धनों को आमदनी की सहायता किए जाने में वास्तविक प्रगति अन्तत: सम्भव हो पाएगी। भारतीय अर्थव्यवस्था की उज्ज्वल संभावनाएं यह हैं कि सरकारी क्षमता के अनुसार अधिकाधिक निवेश करने से निर्वाण की प्राप्ति संभव है। यह निर्वाण दो कारणों से हो सकता है: निर्धन व्यक्तियों को संरक्षण प्रदान किया जाएगा और उन्हें सुविधाएं उपलब्ध कराई जाएंगी तथा भारत में अनेक वस्तुओं के मूल्यों को अर्थव्यवस्था में संसाधन आवंटन करने में उनकी भूमिका को दक्षतापूर्वक निष्पादित करने के लिए विनियंत्रित किया जाएगा और दीर्घकालिक विकास को बढ़ावा दिया जाएगा। हालांकि इस संबंध में उपादान बाज़ारों में दूसरी और पीढ़ी के सुधारों पर बल दिया जा रहा है, इस प्रकार भारत बुनियादी पहली पीढ़ी के आर्थिक सुधारों को पूरा कर पाने में सफल होगा।

---

[17] *http://articles.economictimes.indiatimes.com/2015-02-03/news/58751845_1_payments-banks-small-banks-shinjini-kumar*

[18] *http://www.indiapost.gov.in/our_network.aspx.*

निवेश वातावरण: अवरूद्ध परियोजनाएं, बकाया ऋण और इक्विटी समस्याएं

04 अध्याय

4.1 परिचय

पिछले कुछ वर्षों में भारत का निवेश क्षमता से कम रहा है। वित्त वर्ष 2009-10 की आखिरी तिमाही में यह 24% से सकल नियत पूंजी निर्माण की दर शून्य पर आ पहुंची है (चित्र 4.1)। अवसंरचना, विनिर्माण, खनन, विद्युत आदि में भारी आर्थिक उपक्रमों के संदर्भ में परियोजनाओं में बाधा इस गिरावट का अहम कारण है। दिसम्बर, 2014 के अंत में बाधा ग्रस्त परियोजनाओं की संख्या 8.8 लाख करोड़ अथवा जीडीपी का 7% रही थी।

रूकी हुई परियोजनाओं के विश्लेषण, उन्हें कुछ आंतरिक और नीति संबंधी सुझाव देने के लिए इन विश्लेषणों में भारतीय अर्थव्यवस्था निगरानी केंद्र (सीएमआईई) में कैपेक्स डाटाबेस प्रयुक्त किया गया है। उसमें फार्म स्तर के निजी तथा सार्वजनिक निवेश ऑकड़े, तुलनपत्र रिपोर्टें और परियोजनाओं की टाइमलाइन शामिल है। इस मिश्रण से देश में निवेश माहौल की एक यथार्थ तस्वीर बनती है। साथ ही चेतावनी मिलती है कि यह तस्वीर एक नमूना भर है।

यह अध्याय पांच अहम और आधारभूत नीतिगत परामर्श प्रस्तुत करता है। मुख्य संदेश निम्नलिखित है।

(i) पिछले 5 सालों में परियोजनाओं के बन्द होने की दर चेतावनी के स्तर पर सबसे ज्यादा रही है और यह दर निजी क्षेत्र से बहुत ज्यादा है।

(ii) अच्छी खबर यह है कि पिछली 3 तिमाहियों में बंद होने की दर थम गई है उसके अलावा गत वर्ष 8. 3 प्रतिशत से घटकर 2014-15 की तीसरी तिमाही में रूकी हुई परियोजनाओं का स्टॉक सकल घरेलू उत्पाद के 7 प्रतिशत तक हो गया था।

(iii) आंकड़े दर्शाते है कि निजी क्षेत्र में विनिर्माण और अवसंरचना क्षेत्र हावी है तथा अवसंरचना में रूकी

चित्र 4.1: सकल नियत पूंजी निर्माण, (वर्षानुवर्ष, वृद्धि दर)

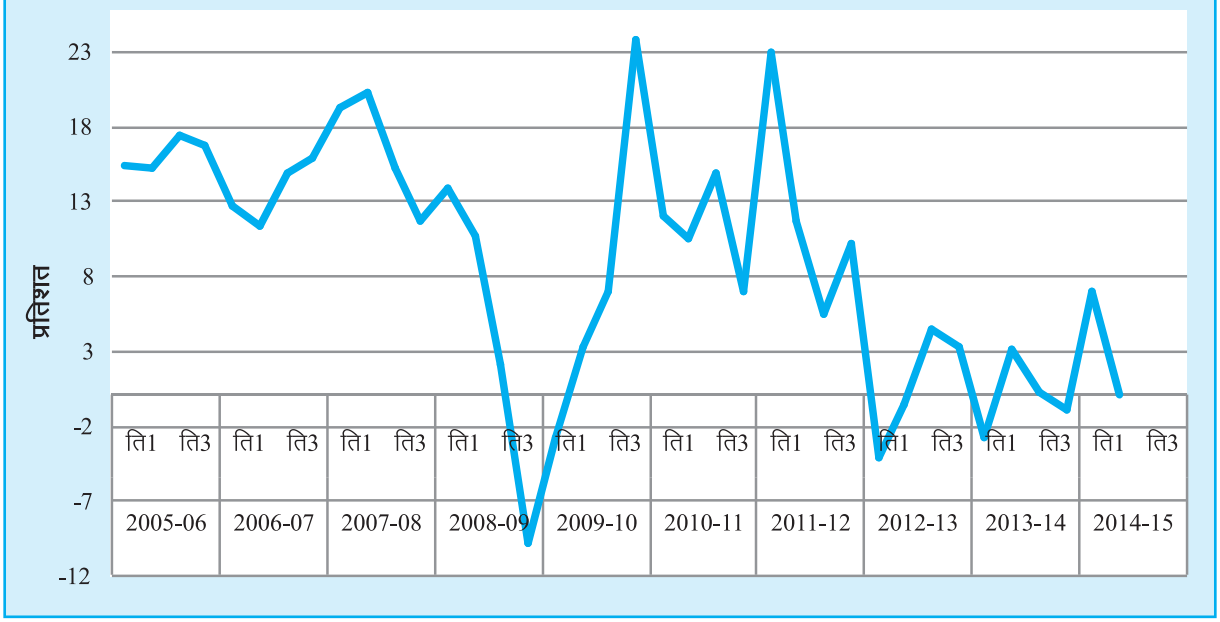

स्रोत : केन्द्रीय सांख्यिकी कार्यालय

हुई परियोजनाओं के कुल मूल्य में विनिर्माण हावी है। अवसंरचना क्षेत्र में सरकार की रूकी हुई परियोजनाएं पहले से ही हाबी है। प्रतिकूल बाजार स्थितियों से (और सांविधिक निकासियों के न होने) निजी क्षेत्र में परियोजनाओं की भारी संख्या रूक रही है। और इसके उलट सांविधिक कारण निजी क्षेत्र में रूके होने की व्याख्या करते रहे है। शीर्षस्थ 100 रूकी हुई परियोजनाओं की क्लीयरिंग से मूल्यगत स्तर पर 83% रूकी परियोजनाएं स्वीकार हो जाएगी।

(iv) परियोजनाओं के रूकने से कारपोरेट क्षेत्र की सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की वैलेंसशीट भी बुरी तरह प्रभावित होती है जो कि आगे चलकर निजी क्षेत्र के भावी निवेश को बाधित करती है और ऐसा चक्र बनाती है जिससे कमजोर निवेश के कारण अपेक्षा से कम वित्तपोषण होता है और कुल मिलाकर निवेश में मंदी आती है।

(v) अवरूद्ध होने की उच्च दर, और कमजोर वैलेंससीट के अलावा इक्विटी मार्केट को भी सुव्यवस्थित रूप से काम करना चाहिए एक सुस्पष्ट अवधारणा है कि प्रभावित कंपनियों के इक्विटी मूल्यांकन पर्याप्त रूप से लाभदायक नहीं हो रही है। एक अध्ययन में दर्शाया है कि परियोजनाओं के बंद होने से सुदृढ़ इक्विटी में कोई खास प्रभाव नहीं है। शुद्ध राजनीतिक, आर्थिक कारण से इस बात की संभावना हो सकती है कि बाजार बेल आउट के अपवादों का आंतरिकीकरण कर रहा है।

दो और नीतिगत सुझाव भी इस प्रकार हैं।

(i) भारतीय सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों और निगम क्षेत्र की बैलेंस सीटों के तालमेल से यह प्रत्याशा बनती है कि निजी क्षेत्र निवेश जरूरतों की संतुलित रूप से जारी रखने की जरूरत है इस परिप्रेक्ष्य में पूंजी निर्माण के लिए नयी रूपरेखा के साथ सार्वजनिक निवेश को बढ़ाए जाने की जरूरत है और अल्पावधि क संदर्भ में निजी क्षेत्रीय निवेश के लिए बहुलता का वातावरण बनाए जाने की जरूरत है।

(ii) निवेश के लिए सार्वजनिक-निजी सहभागिता (पीपीपी)। मॉडल को नए सिरे से बहाल किया जाना जरूरी है। (इस संबंध में विशिष्ट ब्यौरे बॉक्स 4.1) में दिए गए हैं। इसके अतिरिक्त एक स्वायत्त रिनेगोसिएशन कमेटी बनाने के लिए गंभीर रूप से विचार विमर्श किए जाने का सुझाव दिया गया है। दिवालिएपन और एक्सिट के लिए अपेक्षा कमजोर तंत्र की मौजूदगी से हमारा मानना है कि इससे सभी संबद्ध पक्षों में व्यवधानकारी पीड़ा बढ़ेगी क्योंकि यह अपेक्षा कामयाब नहीं है।

4.2 अवरूद्ध परियोजनाओं का स्टॉक और उनके अवरूद्ध होने की दर

4.2.1 निजी क्षेत्र द्वारा अभिभावी उच्च चेतावनी

चित्र 4.2 अवरूद्ध दर पर आकड़े प्रस्तुत करता है। जोकि परियोजनाओं के मूल के संदर्भ में क्रियान्वयनवाधीन रूकी हुई परियोजनाओं के स्टॉक के रूप में परिभाषित किया गया है। इस बात के पर्याप्त साक्ष्य है कि रूकी हुई परियोजनओं का स्टॉक खतरे के स्तर तक बढ़ गया है। इसमें ज्यादातर संख्या निजी क्षेत्र की है और इसमें भी विशेष तौर पर पिछले 5 वर्षो के दौरान ही हुई है। चालू वित्त वर्ष की तीसरी तिमाही के अंत में क्रियान्वयन के अधीन ऐसे 100 रुपए की परियोजनाओं में 10.3 रुपए के मूल्य की परियोजनाएं ही रूकी हुई थी और निजी क्षेत्र के लिए यह संख्या 16 है।

4.2.2 पिछली तीन तिमाहियों का आकलन

अवरूद्ध परियोजनाओं का स्टॉक दो वजहों, अवरूद्ध होने की दर और बहाल होने की दर से चालित होता है। चित्र 4.3 में अवरूद्ध परियोजनाओं के सकल मूल्य और पिछली तीन तिमाहियों में बहाल की गई परियोजनाओं को दर्शाया गया है। और देखा जा सकता है दोनों ही समस्या में योगदान कर रही है। परियोजनाओं की एक अच्छी खासी संख्या रूकी हुई थी और काफी संख्या में पुनर्बहाल नहीं किया जा रहा है। तथापि, विगत कुछ तिमाहियों में दोनों मोर्चों पर कुछ सुधार हुआ है।

सारणी 4.1 सघउ के अंश के रूप में रूकी हुई परियोजनाओं की सूचना देती है। पिछले तीन वित्तीय वर्षो से सघउ के 8-9 प्रतिशत की दर पर रूका हुआ निवेश पहले चित्र 4.1 में देखे गए सकल नियत पूंजी निर्माण में गिरावट के प्रमुख कारण रहे है। तथापि, 2014-15 की तीसमी तिमाही के अंत में यह संख्या घटकर सघउ के 7% पर आ गई है जो धीरे-धीरे सुधार दर्शाता है।

चित्र 4.2: मूल्य के अनुसार रूकी हुई दर (कार्यान्वयन के अधीन परियोजनाओं के प्रतितशत के रूप में रूकी परियोजनाओं का स्टॉक)

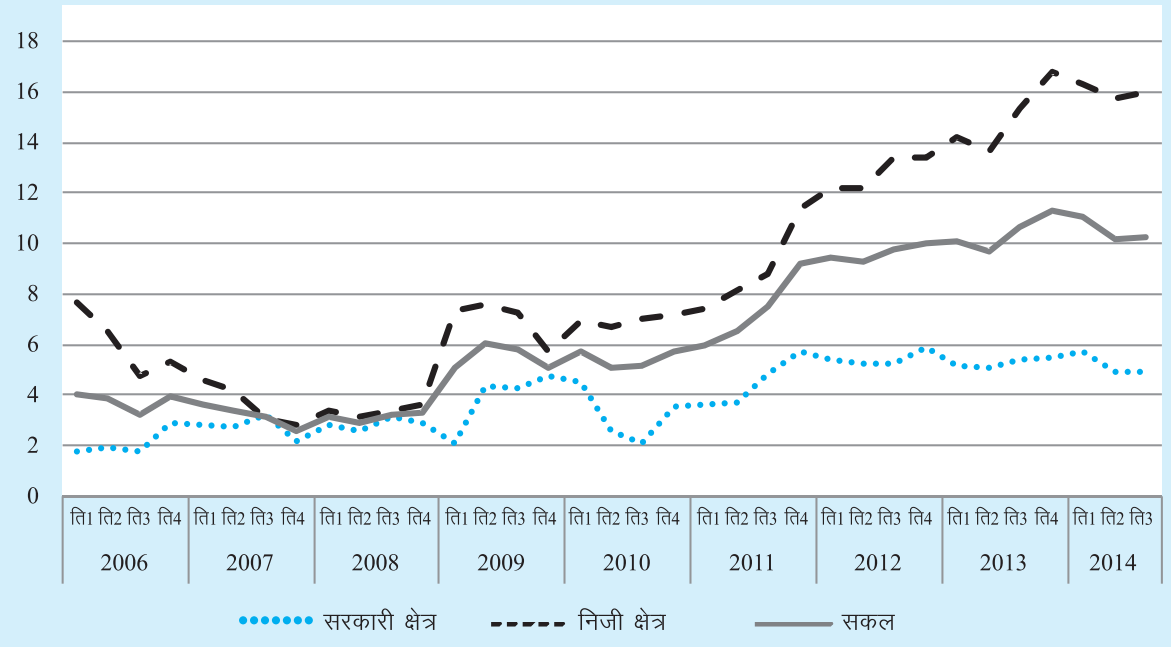

स्रोत : सीएमआईई

4.3 रूकी परियोजनाओं का विश्लेषण

कैपेक्स आंकड़ाधार में उपलब्ध सभी सूचनाओं का उपयोग करते हुए हम पांच आयामों के साथ रूकी परियोजनाओं का विश्लेषण करते हैं: मूल्य, क्षेत्र, भूगोल और रोकने के कारण (सारणी 4.2 में और अधिक अलग-अलग ब्यौरा दिया गया है)।

चित्र 4.4 और 4.5 क्रमश: सरकारी और निजी क्षेत्र के फार्मों के लिए 8.8 लाख करोड़ रुपए के मूल्य की रूकी हुई परियोजनाओं के क्षेत्रीय विखंडन दर्शाते हैं। नोट करने की पहली बात है कि रूकी हुई परियोजनाओं के कुल मूल्य में से सरकारी और निजी क्षेत्र का हिस्सा क्रमश: 1.8 और 7 लाख करोड़ रुपए है। कुल में हिस्सें के अर्थ में सरकारी और

चित्र 4.3: परियोजनाओं का रूकना औन पुन: प्रवर्तित होना (लाख रूपये में)

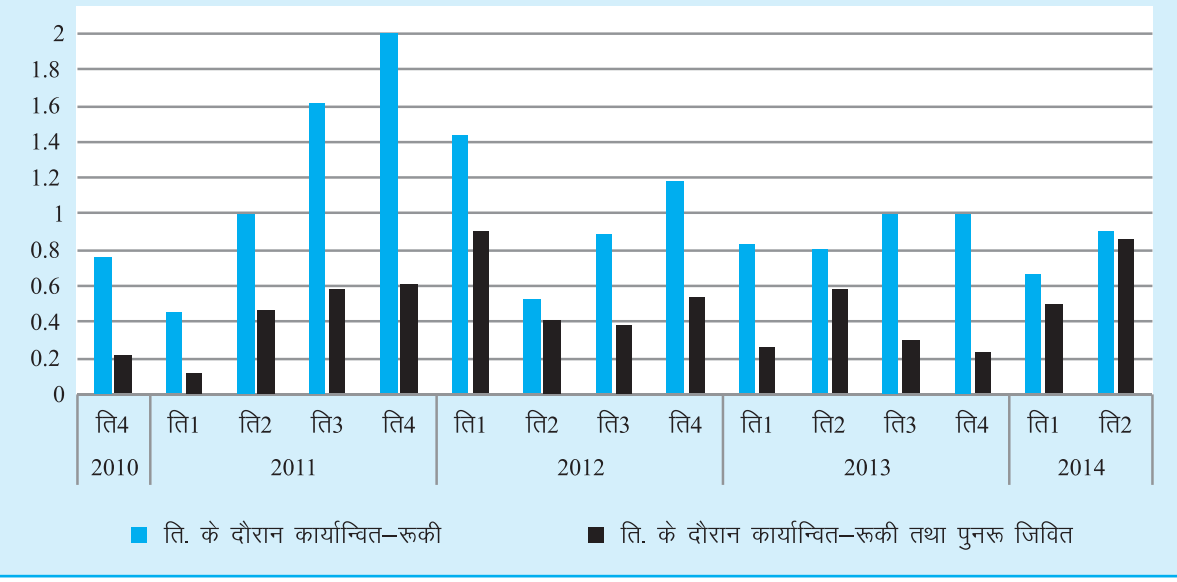

स्रोत : सी एमआईई

सारणी 4.1 सघउ के भाग के रूप में रूकी परियोजनाएं (मूल्य-अनुसार)

वर्ष	सरकारी	निजी	कुल
2011-12	2.0%	5.7%	7.7%
2012-13	1.9%	6.1%	8.9%
2013-14	1.8%	6.5%	8.3%
2014-15 तीसरी तिमाही तक	1.4%	5.5%	6.9%

स्रोत : सीएमआईई और केन्द्रीय सांख्यिकी कार्यालय

निजी दोनों क्षेत्रों में बिजली और सेवाओं का वचर्स्व हैं, जबकि निजी क्षेत्र में विनिर्माण रूकी परियोजनाओं का प्रमुख संघटक है।

सरकारी और निजी दोनों क्षेत्रों में जिस क्षेत्र की अधिक संख्या में रूकी परियोजनाएं है, वह है बिजली क्षेत्र। इस वित्त वर्ष की तीसरी तिमाही के आंकड़े बिजली क्षेत्र की 80 परियोजना को रोकी गई जिसमें से 75 उत्पादन क्षेत्र के और 5 वितरण क्षेत्र की है तथा 80 में से 54 वस्तुत: निजी क्षेत्र की है। उल्लेखनीय है कि निजी श्रेणी के अंतर्गत बिजली में लगभग सभी परियोजनाएं ही सरकारी निजी भागीदारी की है, जिनसे सरकारी क्षेत्र सीधे प्रभावित होता है।

सारणी 4.2 : रूकी परियोजनों का चरित्र चित्रण

आयाम	संघटक
स्वामित्व	सरकारी, निजी (भारत) निजी (विदेशी)
क्षेत्र	अवसंरचना: बिजली राजमार्ग, हवाई अड्डा, निर्माण, खनन: कोयला, लोहा विनिर्माण: इस्ताप, सीमेन्ट औषध, गारमेन्ट, प्रसंस्कृत खाद्य
भूगोल	राज्य
मूल्य	रुपए में
रोकने के कारण	मंजूरी: पर्यावरणीय, भूमि इंधन: अन्य कच्ची सामग्री बाजार: मांग, निधियों की कमी

स्रोत : सीएमआईई

अधिक सूक्ष्म विश्लेषण करने पर पता चलता है कि विनिर्माण,खनन और बिजली की उस क्रम में सभी क्षेत्रों में पिछली कुछ तिमाहियों में सबसे अधिक रूकने की दर रही है। हवाई परिवहन, सड़क और पोत परिवहन अवसंरचना में दूसरे सबसे बड़े योगदानकर्ता है और इस्पात, सिमेन्ट, गारमेन्ट्स तथा खाद्य प्रसंस्करण विनिर्माण क्षेत्र के भीतर सबसे बड़े योगदानकर्ता है।

चित्र 4.4: अवरूद्ध सरकारी परियोजनाओं में क्षेत्रक का हिस्सा (लाख करोड़ में)

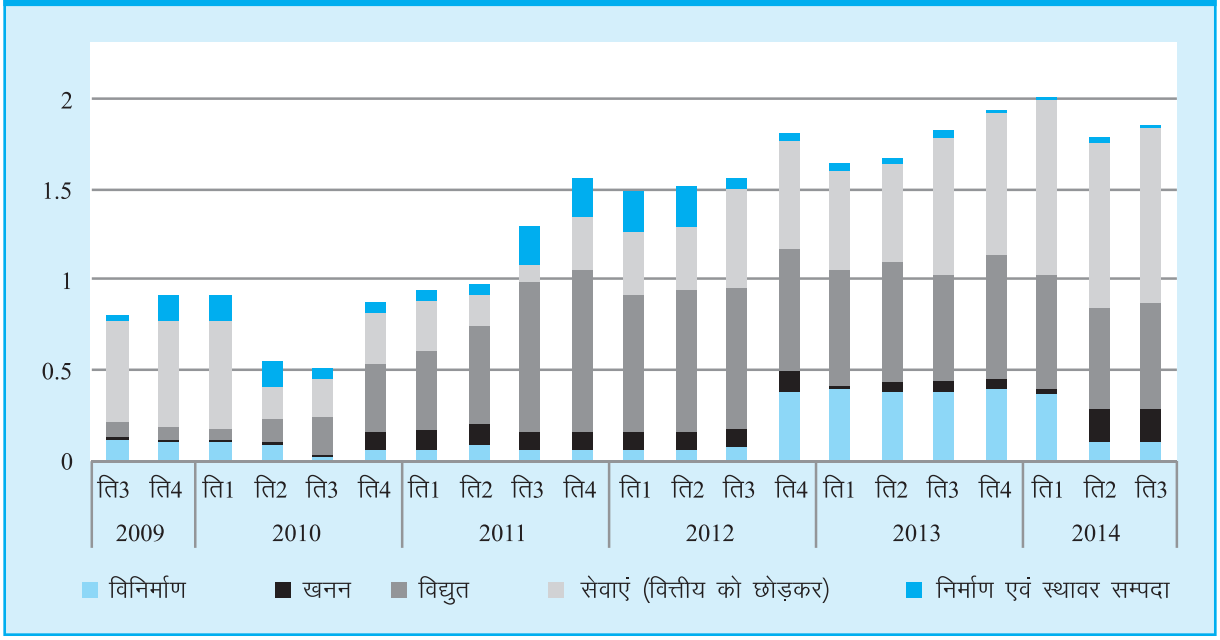

स्रोत : सीएमआईई

[1] सेवाओं में होटल और पर्यटन, थोक एवं खुदरा व्यापार, परिवहन सेवाएं, संचार सेवाएं, आईटी और अन्य विविध गैर-वित्तीय सेवाएं शामिल है।

चित्र 4.5: अवरूद्ध निजी परियोजनाओं में क्षेत्रक का हिस्सा

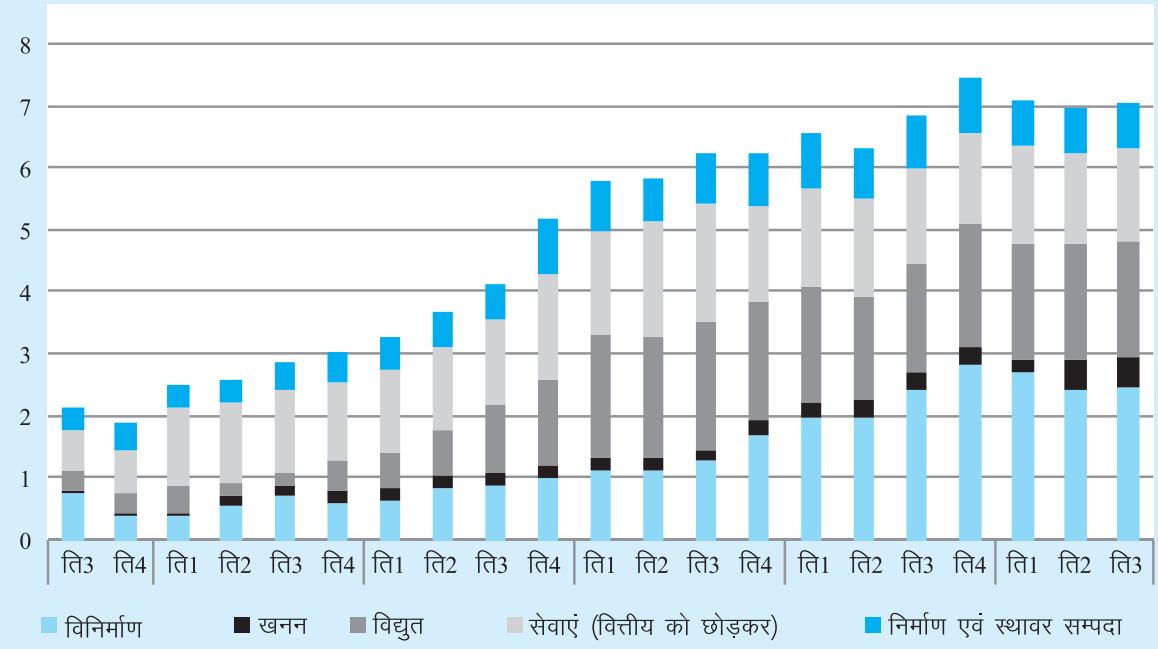

स्रोत : सीएमआईई

अगली तालिका 4.3 में, हम सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों में रोके जाने के प्राथमिक कारणों का विश्लेषण करते हैं। यह स्पष्ट है कि निजी परियोजनाएं अत्यधिक रूप से बाजार परिस्थितियों और गैर विनियामक कारकों के कारण रूकती हैं जबकि सरकारी परियोजनाएं आवश्यक अनापत्ति न मिलने के कारण रूकती है।

संभवतया सामान्य प्रचलित विश्वास के विपरीत, परियोजनाओं को रोकने के लिए प्राथमिक कारणों के रूप में (विनियामक अनापत्तियों के अभाव के बजाय) बहुत आधिक्य और एक क्रेडिट बॅबल की ओर साक्ष्य में संकेत किया गया है। उछाल की दृष्टि से विनियामक अनापत्तियों के संबंध में ''निजी गतिहीनता'' के कारण सरकारी क्षेत्र की परियोजनाएं सबसे बुरी तरह प्रभावित हुई। वास्तव में अंतर्निर्भरताएं हैं, परंतु एक निजी क्षेत्र ''परियोजना बॅबल'' इस डाटा के साथ बेमेल नहीं है।

तालिका 4.4 में क्षेत्रों में रोकने के शीर्ष कारण दर्शाए गए हैं, यहां दो निष्कर्ष महत्वपूर्ण हैं। पहला, वृहत् आर्थिक पर्यावरण में विनिर्माण क्षेत्र एक सामान्य विकृति से दबावग्रस्त हो रहा है। दूसरा, बिजली के क्षेत्र में रूकी हुई परियोजनाएं, कोयले (या कोयले से संयोजन) के अभाव के कारण हैं।

तालिका 4.5 में ऐसे सभी राज्य दिए गए है जहां रोके जाने की दर 10 प्रतिशत से अधिक है। जबकि यह सत्य है कि कुछ राज्यों में, आरंभ में कार्यान्वयन हेतु बड़ी संख्या में परियोजनाएं हैं। (इस प्रकार बड़ी संख्या में रूकी परियोजनाएं, राज्य में समग्र संख्या में परियोजनाओं के कारण हो सकती हैं) रूकी हुई परियोजनाओं के मूल्य के रूप में रूकी दर की हमारी परिभाषा कार्यान्वयन के अधीन परियोजना के प्रतिशत, और उपयुक्त रूप से संख्याओं के पैमाने से है। इस आधार पर ऐसा प्रतीत होता है कि कुछ अपवादों को छोड़कर अपेक्षाकृत कमजोर संस्थागत माहौल वाले राज्यों में रूकी हुई परियोजनाओं की संख्या अधिक है।

तालिका 4.3 : स्वामित्व में रोके जाने के शीर्ष कारण

स्वामित्व	परियोजनाओं की संख्या	रोकने के शीर्ष कारण
निजी (भारतीय)	585	प्रतिकूल बाजार दशाएं प्रवृत्ति के हित का अभाव, गैर पर्यावरणीय समाशोधनों का अभाव
सरकारी	161	भूमि अधिग्रहण समस्या गैर-पर्यावरणीय समाशोधनों का अभाव निधियों का अभाव

स्रोत : सीएमआईई

तालिका 4.4 : उद्योगों में रोके जाने के शीर्ष कारण

उद्योग की संख्या	परियोजनाओं की संख्या	शीर्ष कारण
विनिर्माण	212	प्रतिकूल बाजार दशाएं
खदान	40	गैर-पर्यावरणीय अनापत्तियों का अभाव
बिजली	80	फ्यूल/फीडस्टॉक/कच्ची सामग्री की आपूर्ति समस्या
सेवाएं	283	प्रमोटर की रूचि का अभाव
निर्माण एवं रियल इस्टेट	143	गैर पर्यावरणीय अनापत्तियों का अभाव

स्रोत : सीएमआईई

अंतत: रूकी हुई परियोजनाओं के मूल्य का वितरण क्या है? वे इस अर्थ में काफी उच्च स्तर पर है कि रूकी हुई परियोजनाओं के कुल मूल्य की एकल राशि में काफी कम हिस्सेदारी है। सारणी 4-6 में दर्शाया गया है कि मूल्य के आधार पर शीर्षस्थ 100 परियोजनाओं को क्लियरेंस प्रदान करने से सभी परियोजनाओं में रूके हुए कुल निवेश का 83% निश्चित तौर पर पूरा हो जाएगा। इससे रूकी हुई परियोजनाओं की समस्या अपेक्षाकृत नियंत्रणाधीन प्रतीत होती है।

4.4 भारतीय अभिलक्षणों से युक्त तुलन पत्र सिंड्रोम

जैसाकि मध्य वार्षिक आर्थिक विश्लेषण (2014-15) में सूचित किया गया है, भारत में कारपोरेट क्षेत्र का तुलन पत्र अति विस्तृत बना हुआ है। यहां हम उसका एक सघन अनुभवाश्रित विश्लेषण प्रस्तुत कर रहे हैं और बैंक के तुलन पत्रों को शामिल कर रहे हैं।

सारणी 4.5 : 10% से अधिक रूकी हुई परियोजनाओं वाले राज्य

राज्य	2013 (चौथी तिमाही)	2014 (तीसरी तिमाही)
पश्चिम बंगाल	34.4	28.9
हिमाचल प्रदेश	20.2	22.7
ओडिशा	11.4	19.9
झारखंड	32.0	17.3
उत्तर प्रदेश	26.2	16.6
छत्तीसगढ़	20.2	15.4
आंध्र प्रदेश	12.3	14.9
महाराष्ट्र	7.5	12.4
तेलंगाना	9.0	10.0

स्रोत : सीएमआईई

सारणी 4.6 : रूकी हुई परियोजनाओं के कुल मूल्य में शीर्षस्थ रूकी हुई परियोजनाओं की हिस्सेदारी।

पर्सेन्टाइल	कुल का प्रतिशत
शीर्षस्थ 10	28.67%
शीर्षस्थ 20	43.91%
शीर्षस्थ 50	65.73%
शीर्षस्थ 100	82.55%

स्रोत: सीएमआईई

चित्र 4.6 में समय के अनुसार बीएसई 500 में और अन्य देशों की तुलना में भारतीय गैर-वित्तीय कारपोरेट क्षेत्र का ऋण और इक्विटी अनुपात वित्तीय लाभ का एक उपाय है जिसे कंपनी द्वारा अपनी आस्तियों को वित्तपोषित करने के लिए प्रयुक्त ऋण और इक्विटी अनुपात को सूचित करता है। इस आंकड़े से एक असंदिग्ध तथ्य यह प्राप्त होता है कि भारतीय गैर-वित्तीय कारपोरेट के लिए ऋण और इक्विटी अनुपात समय के अनुसार एक उचित चेतावनी दर पर बढ़ता

चित्र 4.6क: गैर वित्तीय कारपोरेटों के इक्विटी अनुपात का ऋण (एमएससीआई सूचकांक दिसम्बर 2014)

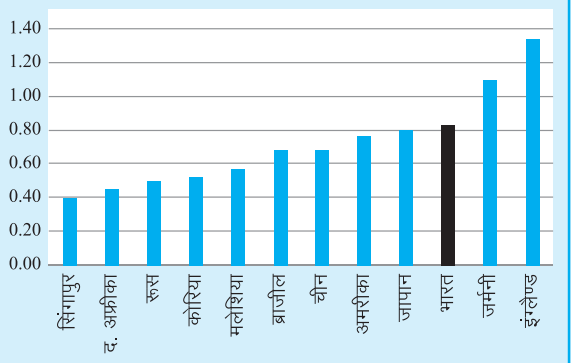

चित्र 4.6ख: भारतीय कारपोरेटों के इक्विटी अनुपात में ऋण (बीएसई 500)

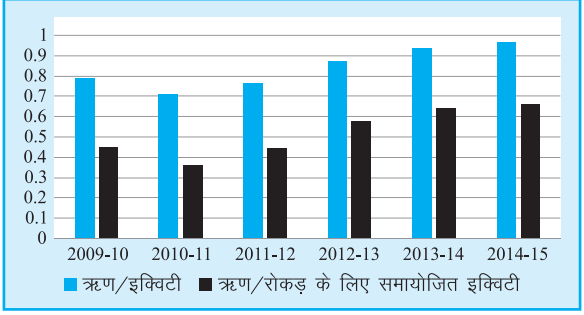

स्रोत : ब्लूमबर्ग तथा जजेपी मॉर्गन

रहा है और जिन अन्य देशों से तुलना की जाती है उनके मुकाबले पर्याप्त उच्च रही है।

यदि किसी कंपनी की आय इतनी अधिक हो कि उसे बकाया ऋण के ब्याज घटक का भुगतान करने में कोई कठिनाई न हो तो कुछ हद तक ऋण के उच्च स्तर को युक्तियुक्त ठहराया जा सकता है। कंपनी की अपने बकाया ऋण पर ब्याज के भुगतान की यह क्षमता की माप ब्याज कवरेज अनुपात (आईसीआर) का प्रयोग करके की जाती है। तकनीकी रूप से आईसीआर की परिभाषा किसी एक अवधि के दौरान ब्याज और कर के भुगतान से पूर्व कंपनी की आय (ईबीआई) और उसी अवधि के दौरान उसके ब्याज व्यय के अनुपात के रूप में दी जाती है। अत: यदि आईसीआर का मान 1 से कम हो तो यह ब्याज व्यय की तुलना में कम ईबीआईटी को सूचित करेगा और कंपनी के तुलन पत्र में गंभीर कमी को सूचित करेगा।

चित्र 4.7 में भारत में 3700 सूचीबद्ध कंपनियों के एक बड़े प्रतिदर्श में 1 से अधिक आईसीआर मान वाली कंपनियों का प्रतिशत दर्शाया गया है। इनमें से ऐसी कंपनियों का एक बड़ा हिस्सा है जिन्होंने जिन अंतिम चार तिमाहियों के संबंध में आंकड़े उपलब्ध थे, उनमें ब्याज का भुगतान नहीं कर पाए। वास्तव में क्रेडिट सुइस की रिपोर्ट के अनुसार, प्रतिदर्श में शामिल कुल 450 बिलियन अमरीकी डालर के ऋण में से 140 बिलियन अमरीकी डालर का ऋण (लगभग 33%) ऐसी कंपनियों पर है जिनका आईसीआर मान 1 से अधिक है। चार वर्ष पहले ऐसी कंपनियों के पास केवल 17% ऋण था।

पहले भी जापान सहित अनेक देशों का 1980 के दशक के अंतिम वर्षों कें रियलएस्टेट और इक्विटी क्षेत्र में आई उछाल के बाद अति विस्तृत कारपोरेट तुलन पत्र रहा है तथापि, इस परिघटना के संदर्भ में कुछ बातें मूल रूप से भारतीय संदर्भ की प्रतीत होती है।

पहला, कारपोरेट सेक्टर का पिछले ऋण में लगभग 6 प्रतिशत की अपेक्षाकृत उच्च वृद्धि हुई है। दूसरा, इसके साथ उच्च मुद्रास्फीति (जापान उदाहरण में मूल्य अपस्फीति के बजाय) भी हुई है, देखें अध्याय 1का चित्र 1.1क। तीसरे सरकारी क्षेत्र के बैंकों द्वारा लिए गए उधार तथा सरकारी निजी भागीदारी के रूप में उठाए गए कारपोरेट जोखिम से सरकारी क्षेत्र का पर्दाफाश किया जाता है। चौथे, वर्तमान में उच्च ऋण से इक्विटी अनुपातों के साथ, अन्य कई देशों की तरह भारत का ऋण अधिकांशत: सिर्फ सरकारी क्षेत्र के बैंकों द्वारा वित्तपोषित किया गया था। इन बैंकों के लिए यह उच्च तथा बढ़ते अनर्जक आस्तियों को रूपान्तरित हो गया है। चित्र 4.8 देखें।

चीजों को एक साथ जोड़ते हुए, सकल पूंजी निर्माण में तीव्र गिरावट, आस्थगित अवस्था में बड़ी संख्या में परियोजनाएं,

चित्र 4.7: 1 से कम आइसीआर वाली कम्पनियाँ

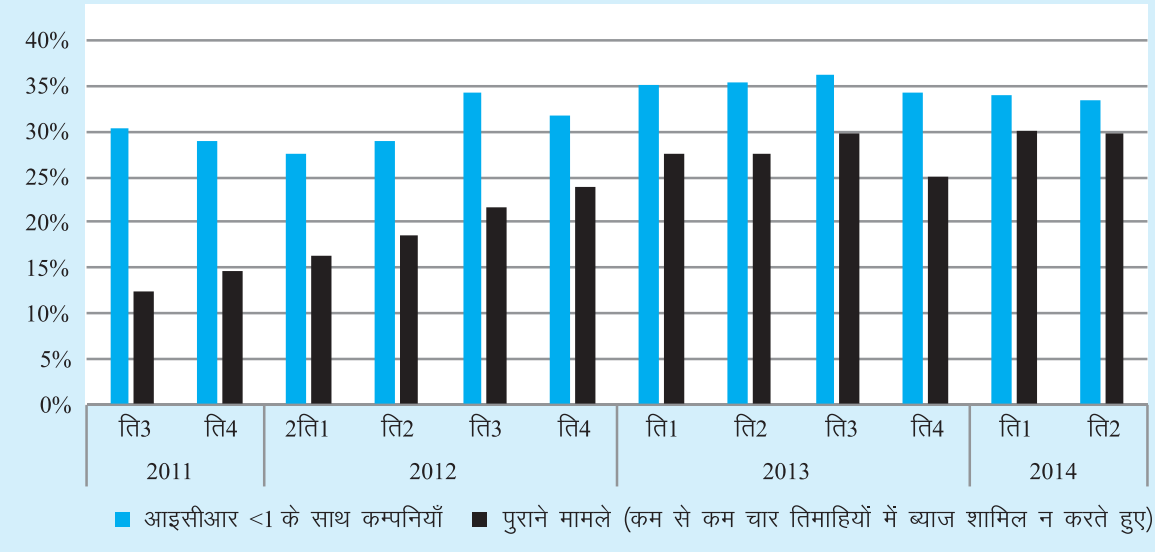

स्रोत : क्रेडिट सुइस (3700 सूचीबद्ध कंपनियों का प्रतिदर्श)

चित्र 4.8: कुल अग्रीमो के प्रतिशत के रूप में सकल एनपीए और पुनः आस्तियां निर्मित

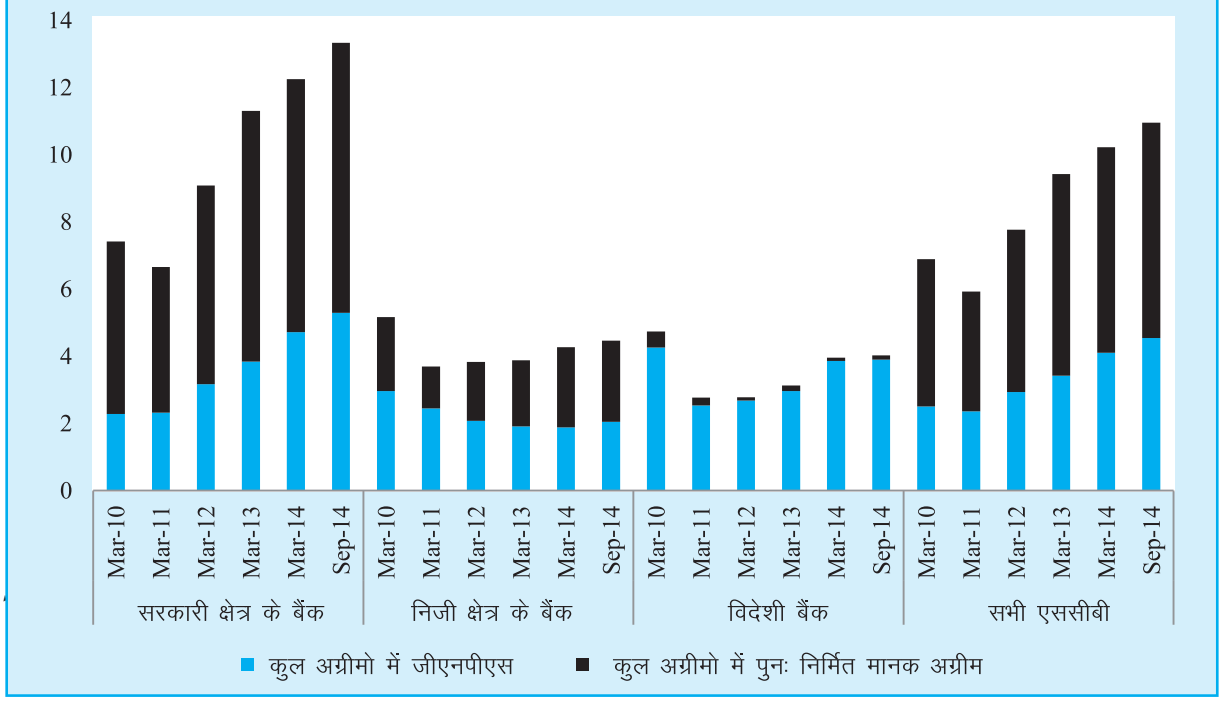

स्रोत : आरबीआई

बैंकों में दवाब में पड़ी अधिक संख्या में आस्तियों की चिन्ता करते हुए, तुलन-पत्र तथा अधिक लेवरेज्ड कारपोरेट क्षेत्रों का सुझाव है कि भारतीय फर्मे भारतीय विशिष्टताओं वाली तुलन-पत्र सिन्ड्रोम में रूपान्तरित, ऋण बढ़ाने वाले निवेश के परिणामस्वरूप ऋण लंबित रहने की समस्या का सामना करती है।

4.5 फर्म इक्विटी पर तुलन-पत्र सिन्ड्रोम का क्या प्रभाव पड़ता है?

चित्र 4.9क जनवरी, 2011 से निफ्टी सूचकांक को दर्शाता है। विगत वर्षों में भारतीय फर्मों के इक्विटी मूल्य में स्पष्ट तेजी आई है। हालांकि उलझन यह है कि बड़ी परियोजनाओं की रूकी दरों (चित्र 4.2 देखें) कमजोर तुलन-पत्र (चित्र 4.6 तथा 4.7 देखें) निजी क्षेत्र में नए निवेशों में आई कमी (चित्र 4.9 ख देखें) तथा बैंकों के तुलनपत्र संबंधी विष-जन्य आस्तियों के साथ-साथ तेजी आई है।

अवरूद्ध ऋण तथा क्या ओवरलेवरेज्ड तुलन-पत्रों का सिद्धांत रूप में फर्मों के स्टॉक मूल्य पर सीधा प्रभाव पड़ता है। यह इससे प्रमाणित होता है (I) वृहत-आर्थिक माहौल में उल्लेखनीय उन्नति की संभावनाएं और (II) राजनीतिक आर्थिक कारकों का अन्तरीकरण ऐसी स्थिति में बाजार अनुभव करता है कि अवरूद्ध परियोजनाओं के प्रोत्साहनकर्ता तथा वित्तदाताओं को किसी न किसी रूप में सरकार द्वारा सहायता प्रदान की जाएगी (जितनी बड़ी होगी उतनी नहीं)

जहां वृहत-अर्थव्यवस्था (मुद्रास्फीति तथा चालू खाता घाटा) में कतिपय संकेतकों में निश्चित तौर पर प्रगति हुई है, यह हालिया अवधारणा है। इसके अलावा, निवेश नाममात्र का ही रहा है (चित्र 4.1 तथा 4.9 ख देखें) नई सरकार के लिए एक सुदृढ़ राजनीतिक अधिदेश के प्रति बाजार की प्रतिक्रिया निश्चित तौर पर एक कारण है, जैसा कि मई, 2014 में इक्विटी में आई तेजी की रफ्तार में हुई वृद्धि से देखा जा सकता है। लेकिन क्या यह विशिष्ट स्पष्टीकरण हो सकता है।

इस भाग के शेष हिस्से में इस परिकल्पना की जांच की गई है कि परियोजनाओं के रूकने से सुदृढ़ इक्विटी पर कोई महत्वपूर्ण प्रभाव नहीं पड़ा था। उस दिशा में, हम रूकी हुई परियोजनाओं की सभी फर्मों की रूकने की तारीख के आसपास स्टाक विवरणियों का विश्लेषण करते हैं और निफ्टी सूचकांक से उसकी तुलना करते हैं।

चित्र 4.10 में रूकी हुई परियोजनाओं वाली सभी सूचीबद्ध कंपनियों की कच्ची विवरणी में परिवर्तन की दर सौ दिन पहले और रूकने की तारीख के बाद सूचित की जाती है। 100 दिन वाली विंडों का प्रयोग रूकने की सही तारीख और फर्म पर इसका संभावित प्रभाव दोनों के बारे में अनिश्चितता

[2] मूल्य सांख्यिकीय रूप से महत्पवपूर्ण है कि यदि आत्मविश्वास अंतरण X अक्ष से ऊपर या नीचे दे।

चित्र 4.9क: निफ्टी स्टाक मूल्य सूचकांक (प्रतिदिन, दिन समाप्ती पर)

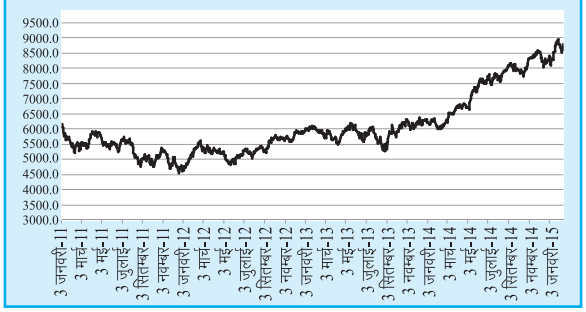

चित्र 4.9ख: नए निजी निवेश (लाख करोड़ में)

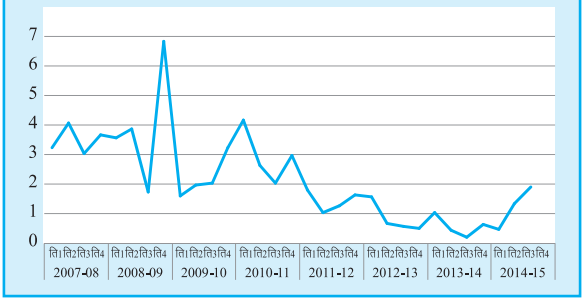

स्रोत : निफ्टि और सीएमआईई

जानने के लिए किया जाता है। वास्तविक संख्याओं के साथ नमूने[3] के 90 प्रतिशत विश्वास अंतराल होते हैं। कार्य रुकने की तारीख के आसपास रूकी हुई परियोजनाओं वाली फर्मों के मूल्य में स्पष्ट गिरावट होती है। यह गिरावट परियोजना को रूकी हुई घोषित करने से थोड़ा पहले ही शुरू हो जाती है क्योंकि बाजार डाटाबेस द्वारा घोषणा होने से पहले ही कि परियोजना रूक गई है वह पहले ही परियाजना की स्थिति को आंतरिक रूप से विश्लेषण करने लगती है।

प्रश्न है कि–क्या ''गिरावट'' काफी है? दूसरे शब्दों में रूकी हुई परियोजना सूचकांक की तुलना में फर्म की इक्विटी पर कितना प्रभाव डालती है?[4] इस प्रश्न का उत्तर जानने के लिए हमने रूकी हुई परियोजनाओं वाली सभी सूचीबद्ध कंपनियों की रूकने की तारीख के आसपास असामान्य विवरणियों की स्थिति देखी (चित्र 4.11)। असामान्य विवरणियों की परिभाषा उन विवरणियों के रूप में की जाती है जो उस अवधि की तुलना में दी गई प्रतिभूति अथवा पोर्टफोलियों द्वारा सृजित की गई है और जो विवरणी की संभावित दर से अलग है। हम इस पोर्टफोलियों को रूकी हुई परियोजनाओं वाली कंपनियों का मानते हैं और विवरणी की संभावित दर निफ्टी सूचकांक होगी। चूंकि यह इवेंट अध्ययन है, इक्विटी विवरणियों का विश्लेषण रूकने की तारीख के आसपास किया जाता है।

हमने पाया है कि असामान्य विवरणियां सांख्यिकीय रूप से शून्य से भिन्न नहीं हैं। रूकी हुई परियोजनाओं वाली फर्मों की आय रूकने से पहले और परियोजना के रूकने के कम से कम 50 दिन बाद तक सांख्यिकीय रूप से निफ्टी सूचकांक से भिन्न नहीं होती है। रूकने के पश्चात् 50वें से 100वें दिन तक भी आय में 5 प्रतिशत से ज्यादा ह्रास नहीं होता है। यह इस साक्ष्य की ओर इंगित करता है कि बाजार ऐसी फर्मों को खराब होने वाले निवेशों के आलोक में बढ़े हुए ऋण के लिए बुरी तरह दंडित नहीं करता है।[4] यह संभावित रूप से विशुद्ध राजनीतिक आर्थिक कारणों से हो सकता है कि बाजार घाटे से उबारने की संभावनाओं का आंतरिकीकरण कर रहा हो।

चित्र 4.10: रूकी हुई परियोजनाओं वाली सभी सूचीबद्ध कंपनियों को रोकने वाली तारीख के आसपास अनुचित विवरणियों की परिवर्तन दर

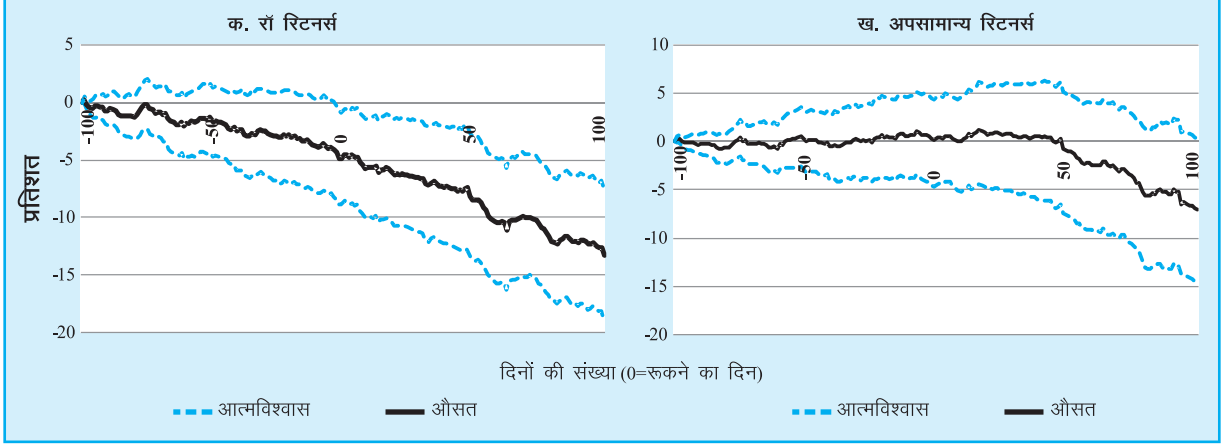

स्रोत : सीएमआईई, प्राउस एंड ब्लुमबर्ग

स्रोत : सीएमआईई, प्राउस एंड ब्लुमबर्ग

[3] तकनीकी रूप से बोलते हुए अमान्य परिकल्पना है कि क्या बाजार रूकी हुई परियोजनाओं वाली फर्मों को समग्र निफ्टी सूचकांक के संबंध में समुचित रूप से दंडित करता है।

[4] इस परिणाम से हमें चेतावनी लेनी चाहिए कि यह कवायद सबसे कम स्वरूप पर आधारित है। यद्यपि यह विचार के लिए काफी सामग्री और प्रेरणा देता है ताकि इक्विटी समस्या का और भी समाधान किया जा सके।

4.6 नीतिगत सबक

भारत को निवेश प्रेरित विकास का पथ लेने की जरूरत है। क्या निजी क्षेत्र से आशा की जा सकती है कि वह इस अवसर तक पहुंचे? उच्च लेवरेज वाली कारपोरेट तुलन पत्र तथा अधिक दवाब के अंतर्गत बैंकिंग प्रणाली यह सुझावदेती है कि यह चुनौतीपूर्ण प्रमाणित होगा। इस पृष्ठभूमि के मुकाबले, निजी क्षेत्र में निवेश को बढ़ाने संबंधी एक वातावरण पुन: सृजित करने हेतु सरकारी निवेश को बढ़ाने की जरूरत होगी। सरकारी निवेश की वांछनीयता हेतु उचित तथा इसकी वास्तविकता हेतु राजकोषीय निष्कर्ष ब्यौरा अध्याय 2 और 6 में दिया गया है।

किंतु, सरकारी निवेश की मांग आगे बढ़ते निजी संदेशों के लिए निराशा की बात नहीं है। विशेषरूप से सरकारी निजी भागीदारी के मॉडल के लिए निवेश के सरकारी निजी भागीदारी के मॉडल के पुन:उन्मुखकरण संबंधी ठोस विचार बॉक्स 4.1 में दिए गए हैं।

रूकी हुई परियोजनाओं तथा सहबद्ध ऋण सहायता प्राप्त अवसंरचना से सबसे बड़ा रूका मद है कि शायद चालू समस्या से अधिक (अत्याधिक और गलत दिशावाली सरकारी निवेश), हमारे सामने स्वच्छ समस्या (दिवालियापन वाले कानून, आस्ति पुनर्संरचना आदि) है। विगत गलत सौदेबाजी से हुई दर्द के हितधारकों के बीच बांटने के लिए रचनात्मक हल जरूरी है।

स्वास्थ्य समस्या को निश्चित करने का विचार उच्चाधिकार प्राप्त स्वतंत्र पुन: वार्ता समिति है। बाजारी और विनियामक असफलता में, रचनात्मक कदम समस्याओं के शीघ्र और स्वतंत्र हल हेतु बाहरी विशेषज्ञों को शामिल करना होगा।

बाक्स 4.1 : सरकारी निजी भागीदारी के लिए रूपरेखा का पुनर्निर्माण

बहुत सी अवसंरचना परियोजनाएं आज कल, वित्तीय दवाब में हैं जिसके कारण बैंक में तिहाई आस्तियां दवाब में है। नई परियोजनाएं प्रायोजकों को आकर्षित नहीं कर सकती, जैसाकि हाल ही की एनएचएआई संबंधी बोलियों में है तथा बैंक कर्ज देने को तैयार नहीं है। इसके जोखिम को देखते हुए, पेंशन और बीमा निधियों के पास इन परियोजनाओं के लिए सीमित निष्पादन है। सरकारी-निजी भागीदारी (पीपीपी) के मॉडल की चालू स्थिति घटिया विनिर्दिष्ट रूपरेखाओं के कारण है जिसमें पुनर्निर्माण की जरूरत है।

विद्यमान डिजाइन में कमी

प्रथम, विद्यमान संविदाएं दक्ष सेवा प्रावधान ने अपेक्षा राजकोषीय लाभों पर अधिक ध्यान देती है। उदाहरणार्थ, पत्तन और वायुपत्तन रियायतों में, सरकार के लिए संग्रहीत सकल राजस्व के सर्वाधिक हिस्से की पेशकश कर रहे बोली लगाने वालों का चयन किया जाता है। इस प्रकार, यदि यह हिस्सा 33% हो (अनेक वास्तविक संविदाओं में अपेक्षाकृत अधिक) तो उपयोगकर्ता अपेक्षित से 50% अधिक अदायगी करता है, यद्यपि ग्राही को प्रभारित हर 1.50 रुपए के लिए केवल 1 रुपए प्राप्त होता है।

दूसरा, वे इसका प्रबंध करने में समर्थ श्रेष्ठ कंपनी के लिए विनिधान जोखिम के खतरे की अनदेखी करते हैं। इसके बजाय, अप्रबंधनीय खतरे, अर्थात् राजमार्गों संबंधी खतरे, उनकी कार्रवाइयों से काफी हद तक अप्रभावित होने के बावजूद, ग्राहियों को स्थानांतरित कर दिए जाते है। यह रेल और पत्तनों (यद्यपि अन्तर-टर्मिनल प्रतिस्पर्धा संभव है) और वायुपत्तनों के संबंध में अंशत: सत्य है।

तीसरा. चूक राजस्व प्रवाह सीधे ही उपयोगकर्ता प्रभार संग्रहीत करता है। जहां इसे अपर्याप्त माना जाता है वहां बोलीदाता निर्माण के दौरान विशिष्ट रूप से संवितरित अर्थक्षमता अनुदान हेतु अनुरोध कर सकते है। यह संरचना निष्पादन न करने के मामले में, सरकार के पास अल्प समापन के कुछ संविदात्मक उपचारों के साथ कोई शक्ति नहीं छोड़ती है।

राजकोषीय सूचक पद्धतियां इस विकल्प को भी प्रभावित करती है। वर्तमान लेखांकन नियमावली भावी प्रतिबद्धता वाले व्यय को एक आकस्मिक बाध्यता मानती है। तथापि, छोड़ दिए गए भावी राजस्व की गणना नहीं की जाती है।

चौथा. पुन: वार्ता के लिए कोई प्रत्याशित अवसंरचना नहीं है। यदि कोई नौकरशाह किसी परियोजना को संरचित करता है तो इसके लिए कोई पुरस्कार नहीं है, इससे रिश्वत के लिए जांच की जा सकती है। परियोजनाओं के असफल रहने पर न तो शस्तियां लगाई जाती है न जांच ही की जाती है। ऐसे विषम प्रोत्साहनों से नौकरशाह पुन: वार्ता से स्वाभाविक रूप से बचते हैं।

अंतत:, संविदाएं बाजार चातुर्य पर अत्यधिक निर्भर होती है, अर्थात्, अत्यधिक बड़ी विद्युत परियोजनाओं (यूएमपीपी) मैं बोलीदाता ईंधन की कीमतों और विनिमय दरों दोनों के लिए प्रशुल्क बोलियों की सूची बना सकते हैं, किन्तु लगभग सभी अति सीमित सूचीकरण का विकल्प चुनते हैं। जब ईंधन के मूल्य बढ़ते है और रुपया गिरता है तब ये बोलियां अव्यवहार्य हो जाती है। बाजार में अनुशासन को प्रवर्तित करने और अविवेकपूर्ण बोली पर शास्ति लगाने के लिए, इन परियोजनाओं को असफल हो जाने देना चाहिए।

आवश्यक संशोधन

ऐसी खामियों के बावजूद, पीपीपी ने महत्वपूर्ण निवेश सृजित किया। क्या भारत जैसे देश, जो ग्राहियों को असफल होने देने के लिए इच्छुक नहीं है, में इन खामियों को सुधारा जा सकता है? भावी संविदाएं किस प्रकार की होनी चाहिए?

पहला, निर्माण की गुणवत्ता को प्रोत्साहित करने के लिए निर्माण और अनुरक्षण संबंधी उत्तरदायित्वों को जोड़ते रहना बेहतर है। अनेक परियोजनाओं, खासकर राजमार्ग परियोजनाओं में, अनुरक्षण लागतें निर्माण की गुणवत्ता पर अत्यधिक निर्भर करती है। यदि कोई एकल

कंपनी निर्माण और अनुरक्षण दोनों के लिए उत्तरदायी हो, तो यह जीवनचक्र लागतों को ध्यान में रखती है। इन उत्तरदायित्वों का पृथक्करण निर्माण के दौरान लागतों में कमी करके लाभों की वृद्धि के लिए प्रोत्साहन प्रदान करता है। सरकारी क्षेत्र को आस्तियों के निर्माण करने और निजी क्षेत्र को बनाए रखने तथा संचालन के सुझाव इस संबंध की अनदेखी करते हैं।

दूसरा, खतरा केवल उन्हीं के लिए स्थानांतरित किया जाना चाहिए जो इसकी व्यवस्था कर सकें। किसी राजमार्ग या किसी रेल परियोजना में, इस प्रयोग संबंधी खतरे को स्थानांतरित करना समझदारी नहीं है हालांकि यह प्रचालक के नियंत्रक से बाहर की बात है। लेकिन, दूरसंचार परियोजनाओं और वैयक्तिक पत्तन टर्मिनलों के संबंध में ऐसा किया जा सकता है क्योंकि वे एक-दूसरे से प्रतिस्पर्धा करते हैं, जहां मांग का प्रशुल्क और गुणवत्ता से संबंध होता है।

तीसरा, वित्तपोषण संरचनाएं, पेंशन और बीमा निधियों को आकर्षित करने में समर्थ होनी चाहिए। जो दीर्घावधि अवसंरचना परियाजनाओं के लिए वित्तपोषण का एक प्राकृतिक स्रोत हैं।

महत्वपूर्ण क्षेत्रों के लिए इसका अर्थ क्या है? प्रथम, राज्यों को मॉडल रियायत करारों के निर्धारण की अपेक्षा प्रयोग करने की अनुमति दी जानी चाहिए। उदाहरणार्थ, पत्तनों में, टर्मिनलों की प्रतिस्पर्धा की अनदेखी करके, पूर्णत: प्रशुल्क लोचशीलता के साथ, वार्षिक शुल्क के आधार पर बोली लगाई जा सकती है। विद्युत उत्पादन के संबंध में, विनियामक द्वारा निर्धारित मानकीय दक्षता पर आधारित या वैकल्पिक रूप से, परिवर्तनीय प्रभार और क्षमता प्रभार के साथ दो-भाग में बोलियां लगाई जा सकती है।

उस दोष से रहित दूसरा विकल्प राजस्व का न्यूनतम वर्तमान मूल्य (एलपीवीआर) संविदा है जहां बोली रिआयत ग्राही द्वारा प्राप्त सकल राजस्व का अल्पतम वर्तमान मूल्य (पूर्व घोषित दर पर छूट प्राप्त) होती है। रियायत की अवधि परिवर्तनीय होती है और यह बोली की वर्तमान मूल्य की राशि प्राप्त होने तक बनी रहती है। इस संविदा का मुख्य लाभ यह है कि इससे उपयोग के दौरान होने वाले जोखिम उस संविदात्मक अवधि के उस जोखिम में बदल जाता है जो वित्तीय संस्थाओं के लिए अधिक संभालने योग्य है। चूंकि बोली सकल राजस्व पर होती है। अत: यह ऐसे बोली लगाने वालों का चयन करती है जो अल्प लागत पर काम कर सकते हों और अपेक्षाकृत अल्प लाभों की मांग करते हो तथा एलपीवीआर बोली के शेष प्राप्त न हुए मूल्य तक पुन: बातचीत करने की गुंजाइश को सीमित करके यह बीच-बीच में होने वाली बोली को हतोत्साहित करती है। इसके आलावा, चूंकि वर्तमान मूल्य रक्षित होता है, अत:, यह प्रणाली पेंशन और बीमा निधि यों के लिए उपयुक्त है।

विद्यमान संविदाओं का पुन: प्रणालीकरण

निजी ब्याज और बैंक के उधार देने के पुन: प्रचालन के लिए विद्यमान संविदाओं के पुन: प्रणालीकरण की जरूरत है जिससे कि विभिन्न हितधारकों के बीच बोझ बँट जाए। उधारदाताओं ने आवश्यक रूप से उचित संचेतना के बगैर यह मानकर ऋण दिया होगा कि परियोजनाएं अप्रत्यक्षत: गारंटी वाली थीं। बोझ साझा किए बिना यह प्रक्रिया पुन: प्रवर्तित की जाएगी। इसी प्रकार अनेक बोली लगाने वालों ने यह समझा होगा कि वे नकारात्मक आघात पड़ने की सूरत में पुन: बातचीत कर सकते है। ऐसे में उन फर्मों का संभवत: प्रतिकूल चयन हुआ जिन्हें यह अहसास हुआ कि वे बातचीत फिर से करने में सक्षम थे। ऐसे में परियोजना का बेहतर कार्यान्वयन और प्रचालन करने वाले फर्मों का चयन नहीं हुआ। खासकर इसीलिए विदेशी कंपनियों की भागीदारी, इसमें सीमित रही होगी। बोझ साझा करने के अभाव में ऐसे प्रतिकूल चयन का समर्थन किया जाएगा। अत: अस्थायी अतरलता और दिवालियेपन के बीच अंतर करते हुए दिशा निर्देशक सिद्धांत परियोजना के राजस्व के आधार पर संविदाओं के पुन: प्रणालीकरण के लिए होना चाहिए।

उदाहरणार्थ, सभी दबावग्रस्त राज्यमार्गी परियोजनाओं को इलैक्ट्रानिक टोलिंग पर स्विच किया जा सकता है। अभी, राजस्व निलम्ब विलेख लेखा में जा सकते हैं, परन्तु तरजीह के संशोधित आदेश के साथ। दीर्घावधि बुलेट बंध-पत्रों, जोखिम-मुक्त सरकारी दर पर, को परियोजना में ऋण के विस्तार क्षेत्र तक जारी किया जा सकता है। प्रचालनों और अनुरक्षण के पश्चात्, इन बंध-पत्रों पर ब्याज संदाय प्रथम तरजीही होगी जिसकी गारंटी केंद्रीय सरकार द्वारा भी दी जाएगी। ऋणप्रदाता इन बांडों के मौजूदा ऋण को स्विच करने के विकल्प का चयन कर सकते हैं। उनके मूलधन की अदायगी के लिए आबंटन दूसरी तरजीही होगी और स्विच नहीं किया गया मौजूदा ऋण अगली तरजीही होगी। इक्विटी अवशिष्ट दावेकार हो सकती है। यदि परियोजना इसकी आयुसीमा के पश्चात् भी धन अर्जन करती है तों इक्विटी धारकों को छूट पर प्रतिफल प्राप्त होगा, यद्यपि कुछ अभी तक छोड़ चुके होंगें।

निजी क्षेत्र उच्च गुणवत्ता की अवसंरचना की शीघ्र सुपर्दगी कर रहा है। पुनर्संरचित पीपीपी रूपरेखा अवसंरचना में उनके हितों का पुनरूद्धार करेगी और पेंशन तथा बीमा निधियों से निधियन अंतर्गमन लाएगी।

***पार्थ मुखोपाध्याय से निविष्टि (नीति अनुसंधान केंद्र, नई दिल्ली) की सादर पुन: प्राप्ति की गई हैं**

[6] एंजिल इ, आर फिशर एंड गलेटोविक (1997), हाइवे फैंचाइजिंग, पिटफाल्स एंड आपार्टनिटिज', दि अमरीकन इकोनोमिक रिव्यू, 87(2), पीपी 68-72। इंजिलइ अपर फिशर एंड गलंटोविक (2001), 'लिस्ट प्रेजेंट-वैल्यू ऑफ आक्शन एंड हाइवें फैंचाइजिंग, जर्नल ऑफ पोलिटिकल इकोनामी, 109(5), पीपी 993-1020)

ऋण, संरचना तथा दोहरा वित्तीय नियंत्रण: बैंकिंग सेक्टर का एक निदान

05
अध्याय

कौटिल्य ने लगभग तीसरी शताब्दी ई॰पू॰ अपने प्रसिद्ध ग्रंथ अर्थशास्त्र में लिखा था, ''ऋणदाताओं और ऋण प्राप्तकर्ताओं के बीच जिस लेन-देन पर राज्य का कल्याण निर्भर करता है उसके स्वरूप की हमेशा समीक्षा की जाएगी।''

5.1 भूमिका

भारत में बैंकिंग क्षेत्र से संबंधित नीतिगत विचार विमर्श के दौरान हाल में आपके विशिष्ट संकल्पनाओं और चुनौतियों पर प्रकाश डाला गया है। जिनमें से कुछ महत्वपूर्ण चुनौतियां है-नियंत्रित और पुनर्गठित आस्तियों की समस्या, पूंजी पर्याप्तता पर लूमिंग बेसल III अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए संसाधनों को प्राप्त करने में कठिनाई, तथा शासन में सुधार की आवश्यकता। (उदाहरण के लिए नायक समिति की रिपोर्ट देखें)[1]। इन आसन्न समस्याओं का समाधान करने के बाद हमें भारतीय बैंकिंग व्यवस्था की समस्याओं की गहन विश्लेषणात्मक पहचान करने का अवसर प्राप्त होता है जिससे हमें अपेक्षाकृत अधिक सुनिर्धारित समाधानों के लिए आधार प्राप्त होता है।

हम भारत में ऋण के आकार से शुरूआत करते हैं। अनेक संसूचको के संदर्भ में प्रतीत होता है कि भारतीय वित्तीय क्षेत्र समकालीन दौर में पीछे नहीं छूटा है। समग्र ऋण, स.घ.उ. अनुपात और साथ ही बैंकिंग सेक्टर द्वारा परिकलित कुल ऋण का अनुपात भारत के विकास स्तर को देखते हुए लीक से बाहर नहीं है। इसके अतिरिक्त, अन्य देशों की तुलना में समय के अनुसार इसके आकार में कोई नाटकीय बदलाव नहीं आया है। हालांकि सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में पिछले दशक में उछाल वाले वर्ष आए और ऋण वृद्धि द्वारा उनका पोषण किया गया किंतु अन्य देशों में ऐसे ही अनुभवों के कारण सीमातीत अनुचित एवं भिन्न व्यवहार दृष्टिगोचर नहीं हुआ है।

इसके अतिरिक्त, भारतीय बैंकिंग प्रणाली में चुनौतियां अन्यत्र उत्पन्न होती है तथा दो श्रेणियों में आती है: नीति एवं संरचनात्मक चुनौतियां।

नीतिगत चुनौतियां वित्तीय नियंत्रण से संबंधित है। भारतीय बैंकिंग प्रणाली एक ऐसी स्थिति से ग्रस्त है जिसे ''दोहरा वित्तीय नियंत्रण'' (चित्र 5.1) कहा जाता है। तुलन पत्र के

चित्र 5.1: भारतीय बैंकिंग तुलन पत्र पर दोहरा वित्तीय नियंत्रण

एनपीए: अनर्जक आस्तियां (डूबा ऋण), एसएलआर: सांविधिक नकदी अनुपात, पीएसएल: प्राथमिक क्षेत्र ऋण ।

[1] कृष्णमूर्ति सुब्रह्मण्यन (आईएसबी और नायक समिति के सदस्य) द्वारा लगाए गए अनुमान के अनुसार सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के लिए पुनर्पूंजीकरण आवश्यकता 9.6 लाख करोड़ रु. से 4.8 लाख करोड़ रु. के बीच है जो सरकार द्वारा फोरबियरेन्स की नीति अपनाए जाने तथा अनर्जक आस्तियों में बदल रही पुनर्गठित आस्तियों पर निर्भर करती है।

आस्ति पक्ष पर, वित्तीय नियंत्रण सांविधिक नकदी अनुपात (एसएलआर) अपेक्षा द्वारा सृजित होता है जो बैंकों को सरकारी प्रतिभूतियों को धारित करने के लिए प्रेरित करनी है तथा प्राथमिकता क्षेत्र के ऋण (पीएसएल) है जो पूर्ण से कम दक्ष तरीकों से संसाधन तैनाती को प्रेरित करते हैं। वर्ष 2007 से उच्च मुद्रास्फीति के कारण देयता पक्ष पर, वित्तीय नियंत्रण उत्पन्न हुआ है जिससे ऋणात्मक वास्तविक ब्याज दरें उत्पन्न हुई है और घरेलू वित्तीय बचतों में तेजी से कमी आई है। चूंकि भारत घटती हुई मुद्रास्फीती के साथ ही देयता पक्ष के नियंत्रण से बाहर निकल रहा है, अत: यह समय आस्ति पक्ष के प्रतिपक्षों का समाधान करने के लिए उपयुक्त हो सकता है।

संरचनात्मक समस्याएं प्रतिस्पर्धा और स्वामित्व से संबंधित है। प्रथमत: ऐसा प्रतीत होता है कि प्रतिस्पर्धा की कमी है जो निजी क्षेत्र के बैंकों में प्रतिबिंबित होता है, जो अपनी उपस्थिति बढ़ाने में सक्षम नहीं है। वास्तव में वर्तमान बैंकिंग प्रणाली का एक विरोधाभाष यह है कि समग्र बैंकिंग समुच्चय में निजी क्षेत्र की हिस्सेदारी ऐसे समय में बढ़ गई जबकि देश में सर्वाधिक तेजी से विकास हो रहा था तथा जिसे निजी क्षेत्र से बल प्राप्त हो रहा था। यह निजी क्षेत्र के बैंकों से वित्तपोषण के बिना ही निजी क्षेत्र के विकास का एक विसंगत मामला था। निजी क्षेत्र के बैंकों के असाधारण विकास जिसके कारण इस विकास चरण को वित्तपोषण प्राप्त किया जा सका, निजी क्षेत्र की चुप्पी आश्चर्यजनक थी।

अंतत: सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में भी निष्पादन में पर्याप्त अंतर है। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों को एक बड़ा समांग खंड मानना एक गलती होगी। एक ही आकार हर दृष्टिकोण के उपयुक्त हो, हमें ऐसे दृष्टिकोण को अपनाने के बजाय पुन: पूंजीकरण, निर्गम और सरकारी स्वामित्व के स्तर के संबंध में अधिक चयनात्मक दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है।

यह अध्याय चार प्रमुख नीतिगत सिफारिशों के साथ समाप्त होता है, अर्थात: नियंत्रणमुक्त करना (वित्तीय नियंत्रण के संदर्भ में), विभेदन (निजी क्षेत्र के बैंकों के भीतर) विविधीकरण (बैंकिंग के भीतर और बाहर) तथा अन्वेषण (अधिक दक्ष निर्गम मार्ग सृजित करना)।

5.2 देयता पक्ष पर वित्तीय नियंत्रण

चित्र 5.2 में गत 14 वर्षों के दौरान भारत में सभी अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों में जमाराशि पर प्राप्ति की औसत दर का आलेखित किया गया है। इनका परिकलन भारतीय रिर्जव बैंक द्वारा सूचित किए गए अनुसार सावधि जमा पर भारित औसत प्राप्ति तथा केंद्रीय सांख्यिकी कार्यालय द्वारा उस वर्ष के संदर्भ में सूचित किए गए अनुसार सीपीआई-आईडब्ल्यू मुद्रास्फीति दर के बीच के अंतर के रूप में किया जाता है। उच्च मुद्रास्फीति तथा बैंक आस्तियों पर सीमित प्राप्ति से यह सुनिश्चित हुआ है कि बैंकों द्वारा प्रतिधारित दरों से परिवारों को जमाराशि पर एक ऋणात्मक वास्तविक प्राप्ति दर हासिल हुई है।

चित्र 5.2: जमाराशियों पर प्राप्तियों की औसत वास्तविक दर

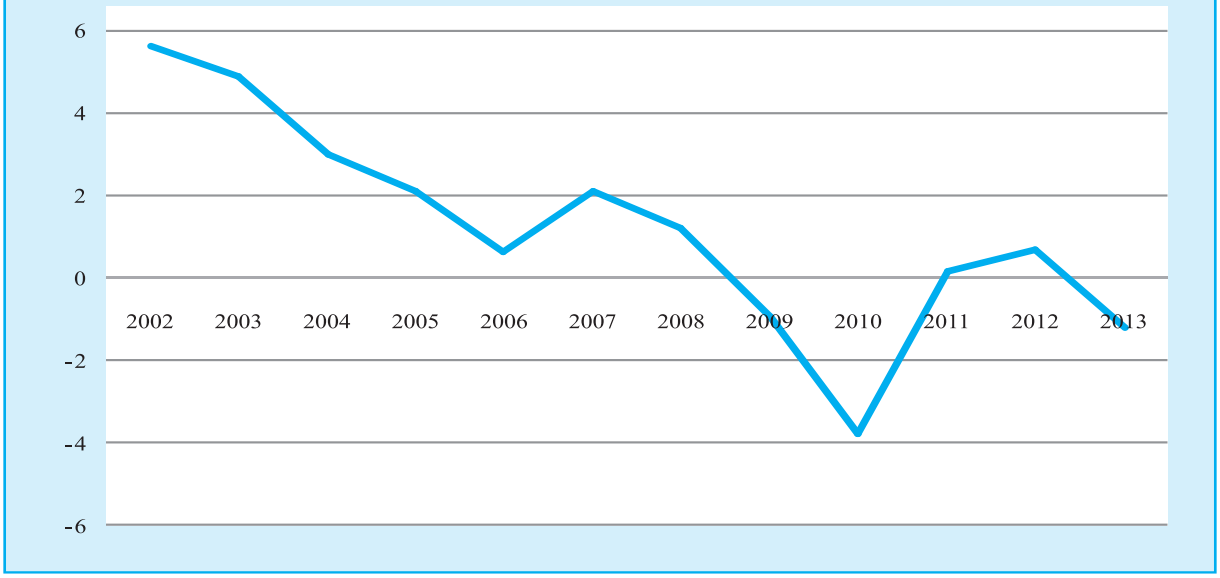

स्रोत : भारतीय रिजर्व बैंक तथा केंद्रीय सांख्यिकी कार्यालय

सारणी 5.1 : स.घ.उ. के प्रतिशत के रूप में बचत

	2004-05	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14
पारिवारिक (वित्तीय)	10.1	12.0	9.9	7.0	7.1	7.2
पारिवारिक (भौतिक)	13.4	13.2	13.2	15.8	14.8	10.6
पारिवारिक (कुल)	23.6	25.2	23.1	22.8	21.9	17.8
सकल	32.4	33.7	33.7	31.3	30.1	30.6

स्रोत : केंद्रीय सांख्यिकी कार्यालय ध्यान दें: 2013-14 में नई विधि प्रयोग में लाई गई।

परिवारों द्वारा की गई बचत सकल पूंजी निर्माण में सबसे बड़ा सहयोजक है। परिवारिक बचतों के दो संघटक होते है- वित्तीय और भौतिक, जबकि परवर्ती संघटक अर्थव्यवस्था में वित्तीय मध्यस्थता के लिए अपनानी से प्राप्त नहीं होता। जैसाकि सारणी 5.1 से देखा जा सकता है, पारिवारिक बचतों में भौतिक आस्तियों का योगदान गत दशक की संपूर्ण अवधि में 60% से अधिक के स्तर पर रहा है।

5.3 आस्ति पक्ष पर वित्तीय नियंत्रण

आस्ति पक्ष पर वित्तीय नियंत्रण का भारत में एक लंबा इतिहास रहा है। 1970 के दशक में सरकार द्वारा अर्थव्यवस्था और विशेषकर वित्तीय क्षेत्र में अपनी भूमिका विस्तृत करने पर इसके लिए पूंजी का प्रावधान करने के लिए बैंक पूंजी को एक तरफ रखने के लिए नए नियम लागू करने पड़ें। इस संदर्भ में दो प्रमुख बातें सांविधिक नकदी अनुपात और प्राथमिकता क्षेत्र को ऋण देना हैं।

5.3.1 सांविधिक नकदी अनुपात

सांविधिक नकदी अनुपात बैंकों द्वारा नकद आस्तियों जैसेकि नकदी, सरकारी बांडों और सोना जैसी आस्तियों में अपने संसाधनों को धारित करने की अपेक्षा है। सिद्धांत रूप में, एसएलआर एक विवेकपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर सकता है क्योंकि जमाकर्ताओं की किसी भी अनपेक्षित मांग को इन आस्तियों का नकदीकरण करके आसानी से पूरा किया जा सकता है।

एसएलआर अपेक्षाएं परंपरागत रूप में उच्चस्तर पर बनी रही है। 1991 से पूर्व के 38% से नाटकीय रूप में घट कर यह 1990 के दशक के आखिरी वर्षों में लगभग 25% हो गया। तथापि, उसके बाद यह संख्या एक चौथाई के आसपास रही केवल हाल ही में घटकर यह 22% हो गया है। 4 फरवरी, 2015 की स्थिति के अनुसार न्यूनतम अपेक्षा कुल आस्तियों के 21.5% की है। बैंक आम तौर पर अपेक्षित एसएलआर से अधिक राशि अपने पास सुरक्षित रखते हैं। वास्तव में मौजूदा प्राप्त एसएलआर 25%[2] से अधिक है। व्यवहार में, एसएलआर सरकार के बड़े राजकोषीय घाटे को वित्तपोषित करने (अनुमानत: बाजार में प्रचलित से कम दर) का एक साधन जिससे यह ज्ञात होता है कि एसएलआर में कटौती करना सरकार की राजकोषीय स्थिति[3] का द्योतक है।

बॉक्स 5.1 में इस अपेक्षा अर्थात बैंकों के लिए पूंजी मुक्त करने और सरकारी बांडों के लिए बाजार को अधिक तरल बनाने की अपेक्षा को क्रमश: कम करने के लिए एक मामला प्रस्तुत किया गया है।

5.3.2 प्राथमिकता क्षेत्र के लिए ऋण (पीएसएल)

भारत में ऋण की समानता का एक प्रमुख संघटक तथा कथित ''प्राथमिकता क्षेत्र के लिए ऋण'' (पीएसएल) रहा है। सभी भारतीय बैंकों के लिए पीएसएल के संबंध में 40% लक्ष्य को प्राप्त करना अपेक्षित है। कानून कहता है कि सरकारी या निजी सभी घरेलू वाणिज्यिक बैंकों की अपने समायोजित निवल बैंक ऋण (एएनबीसी) का 40% या अपने ऑफ बैलेन्स शीट एक्सपोजर की ऋण समतुल्य राशि इनमें से जो अधिक हो का प्राथमिकता वाले क्षेत्रों के लिए ऋण देना होगा और विदेशी बैंकों (20 से अधिक शाखाओं वाले) के संबंध में संख्या 32% है। इसके अतिरिक्त, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों ने उपश्रेणियों-कृषि, सूक्ष्म और लघु उद्यमों, शिक्षा, आवास निर्माण, निर्यात ऋण और अन्य उपश्रेणियों के संबंध में अपने द्वारा पालन किए जाने वाले नियमों का स्पष्टत: उल्लेख किया है। इनमें से सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि प्राथमिकता वाले क्षेत्रों को दिए जाने वाले संपूर्ण ऋण का 45% भाग निश्चित रूप से कृषि क्षेत्र को दिया जाए।

---

[2] यह विसंगति संभवत: उच्च दबावयुक्त आस्तियों के परिणामस्वरूप हो सकता है जो एक समादृत जोखित भारित पूंजी पर्याप्तता अनुपात बनाए रखने के लिए जोखिम मुक्त सरकारी प्रतिभूतियों में अतिनिवेश को प्रोत्साहित करता है। बैंकों के इस स्थिति से उबरने और वित्तीय क्षेत्र के अपनी क्षमता तक वापस आ जाने के बाद हम इस विसंगति को समाप्त कर सकते हैं।

[3] विश्वनाथन, विविनम, ''डीवाईके: सीआरआर और एसएलआर के बीच अंतर'' लाइवमिन्ट, 2014।

बॉक्स 5.1 : सांविधिक नकदी अनुपात में कमी लाना

एसएलआर एक प्रकार का वित्तीय नियंत्रण है जिसमें सरकार निजी क्षेत्र के व्यय पर घरेलू बचत को बढ़ावा देती है। वास्तविक ब्याज दरें अन्यथा जितनी होती उससे कम हैं।

हाल ही में, भारतीय रिजर्व बैंक ने एसएलआर को 25: से क्रमश: घटाकर 21.5: करके सराहनीय कार्य किया है। प्रश्न यह है कि इस क्षेत्र में महत्वाकांक्षा को निरंतरता प्रदान की जा सकती है अथवा नहीं। तीन घटनाएं इस प्रश्न को विशेष रूप से मौन बनाती है।

हमेशा से ही यह तर्क दिया जाता रहा है कि एसएलआर में तभी कमी लाई जा सकती है। क्योंकि एसएलआर सुधार में पूंजी की भूमिका होती है न कि उसके प्रवाही की। यदि सरकार की राजकोषीय स्थिति में सुधार आए। यह बात केवल अंशत: ही सत्य है। भारत की राजकोषीय घाटा स्थिति को देखते हुए अभी भी सुदृढ़ीकरण की आवश्यकता है किंतु सार्वजनिक ऋण की स्थिति में निरंतर सुधाार हो रहा है तथा उधार लागत की तुलना में भारत में विकास और मुद्रास्फीति के कारण इसमें आगे भी निरंतर सुधार होता रहेगा। एक दशक के दौरान समग्र ऋण ग्रस्तता (केंद्र और राज्य सरकारें) 80 प्रतिशत से घट कर 60 प्रतिशत हो गई है तथा इस रूझान के बने रहने की आशा है क्योंकि भविष्य में अनुकूल ऋण घटक के जारी रहने की आशा है और विकास दर 8 प्रतिशत से अधिक बनी रहेगी।

इससे समय की तुलना में एसएलआर को चरणबद्ध रूप में कम करने के लिए पहला अवसर सृजित हुआ है। इस संबंध में आश्वस्त होने के लिए सरकार की ऋण प्राप्त करने की लागत अधिक होगी। किंतु इसके परिमाण के कम होने की संभावना है जिसके दो कारण है। पहला यह कि लागत केवल ऐसे ऋण पर ही बढ़ेगी जो आगामी 5 वर्षों में परिपक्व हो रहा है और जो कुल बकाया ऋण का लगभग 21.1 प्रतिशत है और दूसरा लंबे समय से बरकरार मुद्रास्फीति के लिए बृहतर परिवेश और उसमें प्रगति के कारण वास्तविक ब्याज दरों में कमी के लिए अनुकूल माहौल बनेगा।

दूसरा कारण बैंकों के स्वास्थ्य से संबंधित है। ब्याज दरों में कमी आने पर अधिकांश सरकारी प्रतिभूतियों को धारित करने वाले बैंकों के लिए पूंजी में वृद्धि की संभावना है। एसएलआर में कटौती से उन्हें सरकारी प्रतिभूतियों को ऑफ लोड करने तथा पूंजी लाभ प्राप्त करने का अवसर प्राप्त होगा जिससे उन्हें पुन: पूंजीकरण में सहायता प्राप्त होगी और उनके लिए सरकारी संसाधनों की आवश्यकता कम होगी और निजी संसाधनों को जुटाने में मदद मिलेगी (यह बैंकों को अपनी सरकारी प्रतिभूतियों को बाजार में चिह्नित करने तथा लेखांकन लाभों को प्राप्त करने की अनुमति प्रदान करने की तुलना में बैंकों के पुन: पूंजीकरण का एक बेहतर और अधिक स्पष्ट तरीका है)। किसी भी नैतिक दृष्टि से जोखिम वाली बात को टालने के लिए पुन:पूंजीकरण से लाभ पहले अनर्जक आस्तियों के लिए प्रावधान करने के लिए प्रयोग में लाया जाए तथा केवल अधिशेष राशि का ही पूंजी के रूप में परिकलन किया जाए।

तीसरा कारण, अवसंरचना वित्त पोषण के संबंध में हाल के अनुभव से संबंधित है। सरकारी निजी भागीदारी (पीपीपी) आधारित परियोजनाओं को या तो सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों द्वारा या फिर विदेशी मुद्रा-मूल्यवर्गित ऋण (ईसीबी) के माधयम से वित्तपोषित किया गया है। यहां पूर्ववर्ती अर्थात् सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों ने इस संबंध में काफी कम बात करके चालाकी सिद्ध की है तथा परवर्ती अर्थात ईसीबी के माध्यम से ऋण प्राप्त करने से कारपोरेट क्षेत्र और विशेषकर अवसंरचना क्षेत्र की लाभकारिता में कमी लाने में योगदान किया है: निवेशकों ने डॉलर में उधार लिया और उनका राजस्व मुख्य रूप से रुपये में था, इस कारण रुपये का अवमूल्यन होने पर उनकी लाभकारिता और तुलनपत्र पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा।

अत: अभी यह अन्य प्रकार के अवसंरचना वित्तपोषण विकसित करने के लिए उपयुक्त समय है जो विशेषकर एक बाँड बाजार के माध्यम से किया जा सकता है। किंतु एसएलआर ने सरकारी बाँड बाजारों के विकास को बाधित भी किया है जो कारपोरेट बाँड बाजारों के विकास को अवरुद्ध करता है। अत: एसएलआर में कमी लाना अवसंरचना वित्तपोषण हेतु बेहतर स्रोत प्राप्त करने के लिए महत्वपूर्ण है। सुधार का लक्ष्य एसएलआर और सीआरएआर[क] को अंतर्राष्ट्रीय मानदंडों पर आधारित एक वांछनीय स्तर पर निर्धारित एक नकदी अनुपात में संयोजित करना होना चाहिए।

[क] बैंक की पूंजी को ऋण जोखिम, बाजार जोखिम और प्रचालनात्मक जोखिम हेतु सरल जोखिम भारित आस्तियों से विभाजित करने पर सीआरएआर प्राप्त होता है।

सुनिश्चित रूप में, यह कहा जा सकता है कि पीएसएल से संबंधित सामाजिक और आर्थिक उद्देश्य इसे भारत में बैंकिंग का एक मुख्य संघटक बनाता है। किंतु सब्सिडी और प्रत्यक्ष अंतरण के मामलों के समान ही यह सुनिश्चित करने पर निश्चित ही अधिक ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है कि वांछित लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए प्रयुक्त साधन सर्वाधिक प्रभावी है। अत: साक्ष्य प्रेरित नीति की अधिक आवश्यकता है तथा नीचे दिए गए बॉक्स 5.2 में कृषि क्षेत्र हेतु ऋण के संदर्भ में इस तथ्य का उल्लेख किया गया है।

इस बॉक्स में हमने राम कुमार और चव्हान (2014) से परिणाम प्राप्त किए है तथा कृषि क्षेत्र को ऋण के संबंध में निष्कर्षों का उल्लेख करते हुए उनका संक्षेप में वर्णन किया गया है। निराकरण के उपाय काफी हद तक सुविचारित पद्धति नहीं है इसमें यह परिभाषित किए जाने की आवश्यकता है किन क्षेत्रों को प्राथमिकता दी जाए और किस प्रकार इन निधियों के संवितरण पर गहन नजर रखी जाए। यह खास तौर से जरूरी है 40 प्रतिशत हिस्से की आवश्यकता बैंक के संसाधनों से अवशोषित होती है।

बाक्स 5.2 : कृषि ऋण: बढ़ती संख्या में कमी लाना*

1. देश में आए बदलाव के बाद से कुल कृषि ऋण पर्याप्त रूप से बढ़ा है। वृद्धि की वार्षिक दर जो 1981-1991 में औसतन 6.8 प्रतिशत थी, वर्ष 2001-2011 में 17.8 प्रतिशत हो गई। सामान्य सन्दर्भ में, कृषि ऋण विगत 15 वर्षों में आठ गुणा से अधिक बढ़ा है इस सत्य के विपरित कि सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि का हिस्सा अक्सर स्थिर बना रहा, इस समय महत्वपूर्ण नगरीकरण हुआ।

अवधि	वार्षिक वृद्धि दर		
	कृषि के लिए ऋण	कुल बैंक ऋण	कृषि संबंधी स.घ.उ.
1981-1991	6.8	8.0	3.5
1991-2001	2.6	7.3	2.8
2001-2011	17.8	15.7	3.3

2. कृषि हेतु लिए गए वृहत ऋणों में तेजी से बढ़ोतरी हुई है जैसाकि नीचे दी गई सारणी में दर्शाया गया है जो संविदा को प्रमाणित करती है।

वर्ष	बैंचमार्क क्रेडिट सीमाओं के साथ प्रत्यक्ष अग्रिमों (प्रतिशत) का संवितरण (रुपए में)			
	< 2 लाख	> 2 लाख	< 10 लाख	> 10 लाख
1990	92.2	7.8	95.8	4.2
1995	89.1	10.9	93.6	6.4
2000	78.5	21.4	91.3	8.7
2003	72.6	27.4	87.5	12.5
2005	66.7	33.4	88.1	11.9
2011	48.0	52.0	76.2	23.8

3. कृषि ऋण बकाया हिस्सा जो शहरी और महानगरीय क्षेत्रों के अन्तर्गत आता है में पर्याप्त रूप से वृद्धि हुई है, जो कि पूरी तरह उलझन पैदा करने वाली है।
4. जनवरी से मार्च तक लिए गए कृषि ऋण के संवितरण को संकेंद्रित किया जा रहा है जो कि सामान्यत: किसानों द्वारा लिए गए उधार की सामान्य अवधि नहीं होती। इससे यह पता चलता है कि प्राथमिक क्षेत्र के ऋण के लक्ष्यों को पूरा करने के लिए बैंक उन महिनों में संभवत: अधिक ऋण क्रिया कलाप बढाए जब किसानों को इनकी अधिक आवश्यकता नहीं होती।
5. कुल कृषि ऋण में दीर्धावधिक ऋण के हिस्से में तीव्र कमी आई है। इसलिए कृषि ऋण के उस हिस्से में जो कृषि के क्षेत्र में पूंजी निर्माण के लिए उपयोग में लाया गया था, कमी आ गयी है। यह 1991-92 में 70 प्रतिशत से कम होकर वर्ष 2011-12 में लगभग 40 प्रतिशत रह गया है।
6. इस साक्ष्य का निहितार्थ है कि कृषि क्षेत्र को ऋण देना अत्यधिक हो सकता है और यहां अधिकतर बड़े किसानों को जाता है। यह कृषि पूंजी निर्माण के लिए उपयोग नहीं हो रहा है। शायद इसका बड़ा हिस्सा प्रमुख कृषि कार्यकलापों के लिए बिलकुल नहीं जाता है।

*बिंदु 1 से 5 में रामकुमार तथा चौहान (2014), के विश्लेषण ''2000 में भारत में कृषि हेतु लिए गए बैंक ऋण: पुनरूत्थान का विश्लेषण'' अग्रेरियन अध्ययन की समीक्षा का संक्षिप्त विवरण दिया गया है।

5.4 बैंकिंग तथा ऋण का तुलनात्मक विश्लेषण

5.4.1 क्या भारत में ऋणों की भरमार है और बैंक व्यवस्था का अतिरेक है?

भारत में बैंक द्वारा भारी मात्रा में दिए गए ऋणों के साथ, ऋण और स.घ.उ. के हिस्से में 2000 में 35.5 प्रतिशत से बढकर वर्ष 2013 में 51 प्रतिशत बढ़ोतरी के साथ पिछले दशक[4] में ऋण में बढ़ोतरी देखी गई है। क्या यह असामान्य है? हम चार तरीके से इस प्रश्न का उत्तर देते हैं।

सबसे पहले, हमने भारत तथा चुनिन्दा अन्य देशों (चित्र 5.3) (विश्व बैंक के अनुसार परिभाषित)[5] में ऋण स.घ.उ. अनुपात में क्रम विकास दर्शाया। अधिकांश देशों की तुलना में ऋण का स्तर न अपेक्षाकृत गिरा न ही यह इतनी तीव्रता से बढ़ा। दूसरे अगर हम परस्पर देशीय तुलना करे तो

[4] कृपया देखें ''भारत में कारपोरेट के पिछड़ेपन तथा बैंक के ऋण निष्पादन'' आईएमएफ स्टॉफ कार्यशील दस्तावेज तथा ''ऋण समूह'' ऋण अनुसंधान

[5] इन ग्राफों का प्रयोग वित्तीय कारपोरेशन द्वारा निजी क्षेत्रों को उपलब्ध कराए गए वित्तीय संसाधनों के रूप में परिभाषित निजी क्षेत्रों के लिए ऋण, गैर इक्विटी प्रतिभूतियों की खरीद तथा व्यापार ऋण और प्राप्ति योग्य अन्य खाते के माध्यम से विश्व बैंक के घरेलू ऋण को दर्शाने के लिए किया गया है। जो वापसी अदायगी का दावा स्थगित करते हैं।

चित्र 5.3: घरेलू ऋण और स.घ.उ. अनुपात (समय श्रंखला) भारत की स्थिति निम्न मध्य आय वर्ग वाले देशों से भी नीचे है

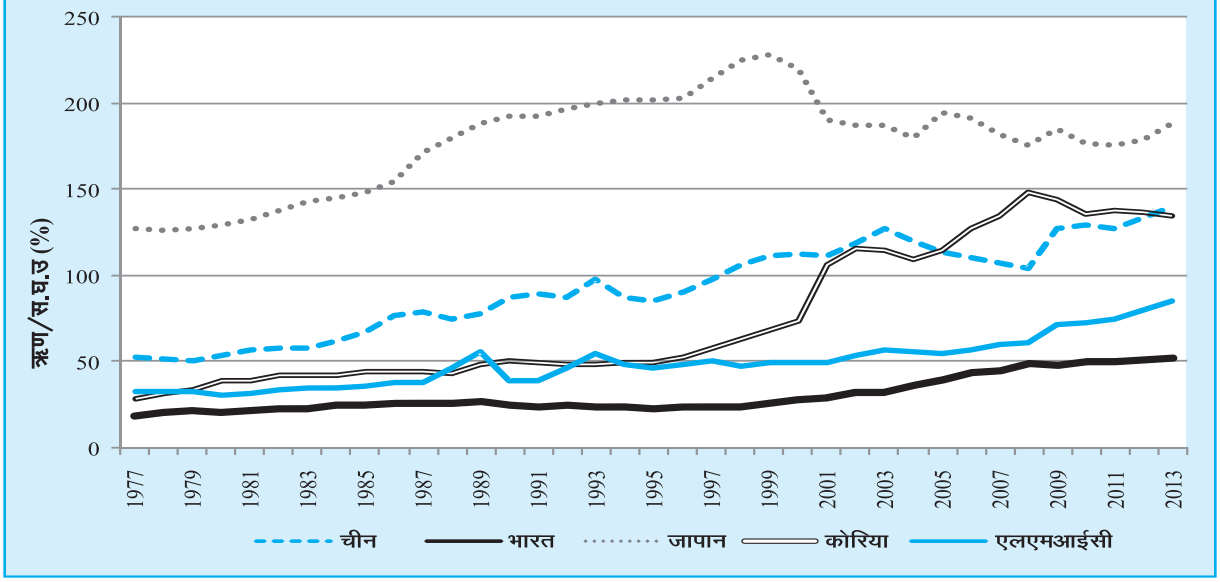

स्रोत : विश्व बैंक डाटा बैंक *टिप्पणी* : एलएमआईसी का आशय निम्न और मध्य आय वाले देशों से है।

परोक्सी के रूप में (चित्र 5.4) खरीद शक्ति (पीपीपी) के सन्दर्भ में प्रति व्यक्ति स.घ.उ. का प्रयोग करते हुए एक देश के विकास के स्तर के लिए उसी संकेतक का इस्तेमाल करना। जैसे ही देश और धनी होते हैं वे उर्ध्व दिशा में परिलक्षित करते हुए औसतन ऋण में वृद्धि की ओर अग्रसर होते हैं[6] लेकिन फिर से भारत इस ट्रेन्ड लाइन के निकट है इस बात का संकेत देते हुए कि विकास के इसके स्तर पर ऋण स्तर न्याय संगत है।

चित्र 5.4: वर्ष 2013 में प्रति व्यक्ति स.घउ. में घरेलू ऋण भारत ने अच्छा प्रदर्शन किया

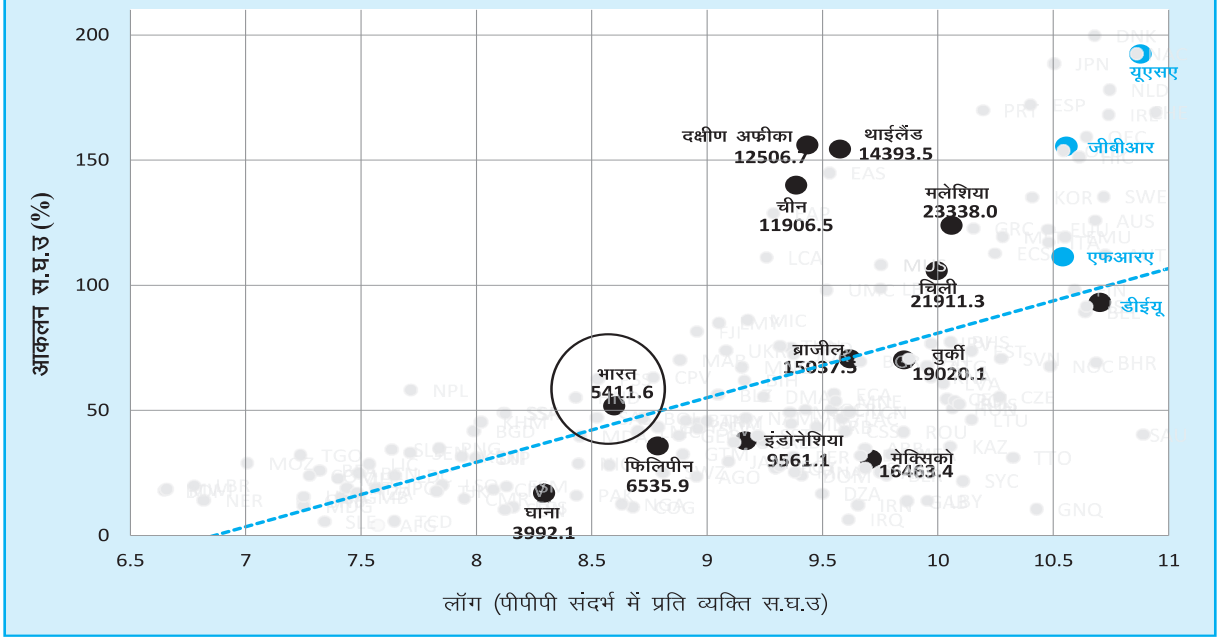

स्रोत : विश्व बैंक डाटा बैंक

[6] नोट किया जाए कि विश्व बैंक डाटा में 176 देशों के समग्र समूह के लिए ट्रेन्ड लाइन निर्धारित की गई। आगे हमारा कहना है कि क्या भारत में बैंकों की अधिकता है।

चित्र 5.5: वर्ष 2014 के कुल ऋण के भाग के रूप में बैंकिंग ऋण

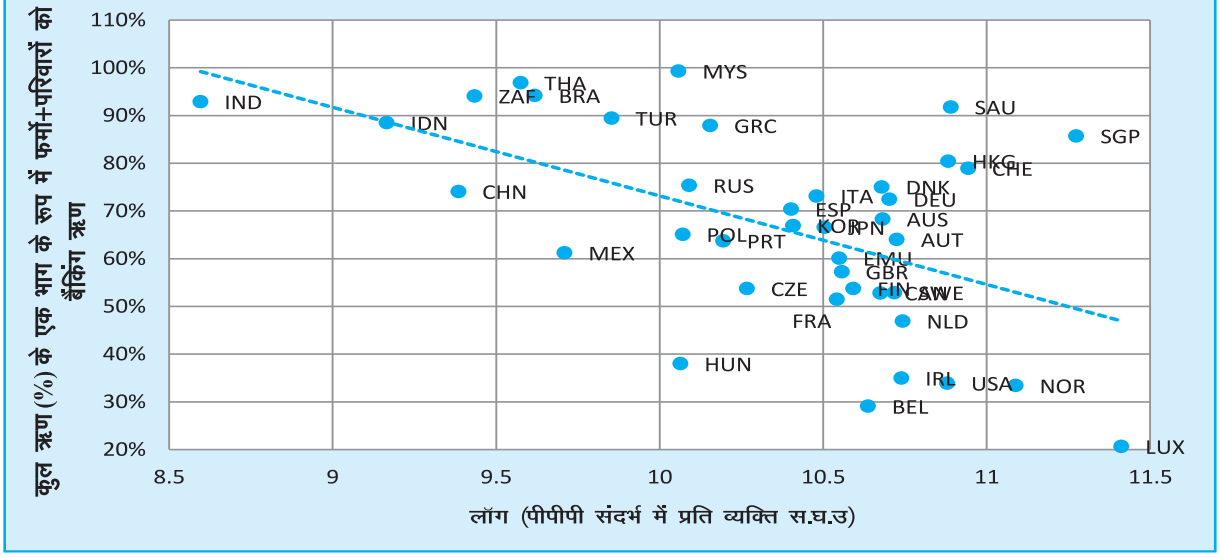

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक

चित्र 5.5 में हम अर्थव्यवस्था में कुल ऋण में शेयर निर्धारित करते हैं, जो कि एक देश के विकास स्तर के लिए बैंकों द्वारा दिया जाता है[7]। रूख की यह गिरती प्रवृत्ति सुझाती है कि निधियन के अन्य स्रोतों जैसे पूंजी बाजार से संबंधित विकास के सन्दर्भ में बैंकिंग प्रक्रिया कम कर देनी चाहिए। यहां भी, भारत की सुदृढ़ स्थिति है, यहां तक कि यह ट्रेन्ड लाईन से नीचे है। न तो भारत में बैंक की अधिकता है न ही विकास के चरण पर पूंजी बाजार इतने कम हैं। समय के साथ इसमें बदलाव लाना होगा और पालिसी शर्तें इस तरह सुसाध्य बनानी होगी लेकिन अब भारत इससे परे नहीं है।

अन्त में, यह पूछना लाजमी है कि क्या भारतीय बैंक तथा वित्तीय प्रणाली विकास के चरण में विशेष रूप से गैर जिम्मेवार तथा अविवेकी रहे हैं। इसके उत्तर में हम टेक आफ टाइम में क्रेडिट स.घ.उ. संबंधी आंकडों को आलेखित करते हैं (चित्र 5.6)। प्रत्येक देश के लिए आरम्भिक बिन्दु वहां से शुरू होता है जब इसकी विकास दर बढने लगती है। चार्ट

चित्र 5.6: टेक ऑफ के बाद सघउ में घरेलू ऋण-भारत ने अच्छा प्रदर्शन किया

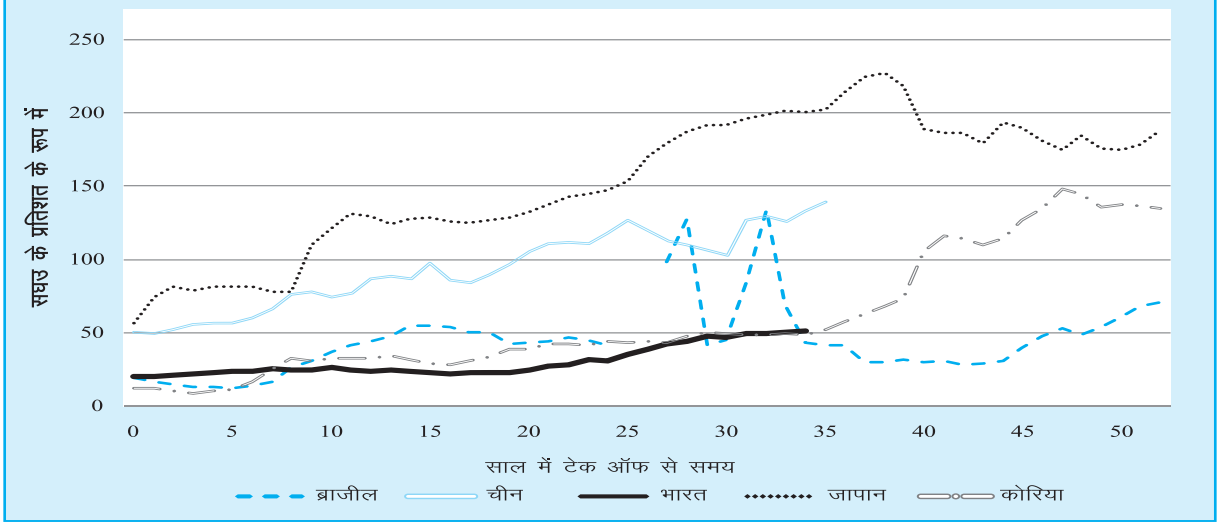

स्रोत : विश्व बैंक डेटाबैंक

टिप्पणियां : टेक ऑफ के वर्ष ब्राजील, जापान और कोरिया: 1961, चीन, 1978, भारत; 1979

[7] बैंक ऑफ इंटरनेशनल सेट्लमेंट द्वारा परिभाषित किए गए अनुसार, इसमें गैर-वित्तीय निगमों (निजी और सरकारी स्वामित्वाधीन), परिवारों और परिवारों को सेवित करने वाली गैर लाभकारी संस्थाओं को राष्ट्रीय लेखा प्रणाली 2008 में परिभाषित किए गए अनुसार दिया गया ऋण शामिल है।

चित्र 5.7क: कुल जमाराशि में अनुपात (अंश)

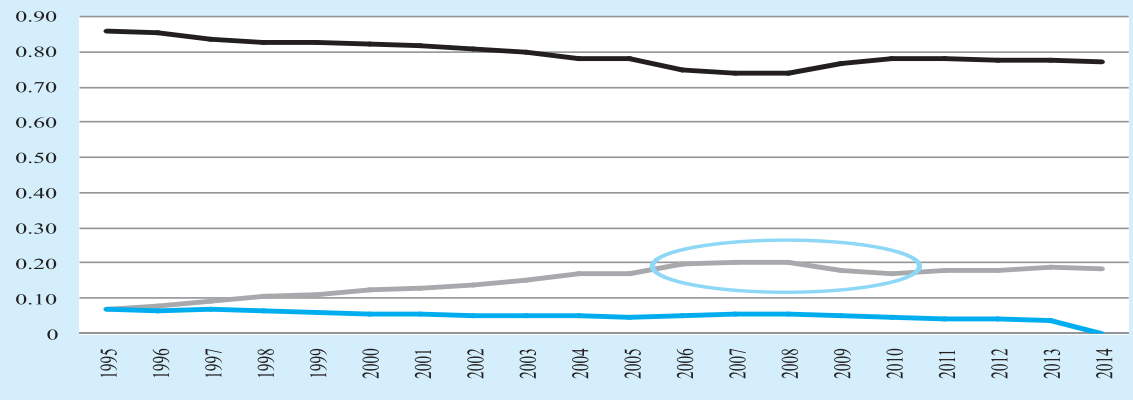

चित्र 5.7ख: कुल अग्रिम में अनुपात (अंश)

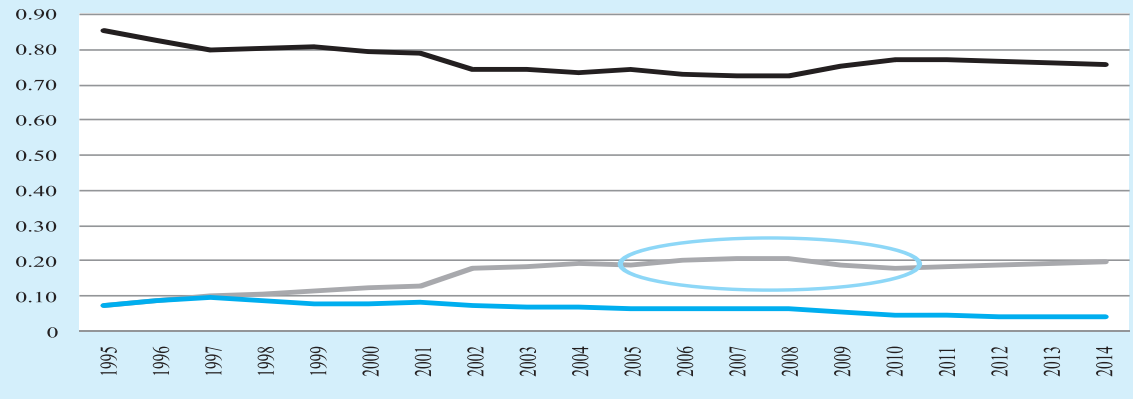

में दर्शाया गया है कि भारत का ऋण आंकड़े तुलनीय अवधि के दौरान देशों के अनुभव के मुकाबले इतने खराब नहीं थे। चीन तथा जापान जैसे अन्य देशों ने उछाल के इन वर्षों में ऋण में तीव्र वृद्धि दर्शाई। इस प्रकार वर्ष 2000 के दौरान व्यापक ऋण वृद्धि के अंतिम चरण में भी विश्व के अन्य देशों के मुकाबले भारत की वित्तीय प्रणाली इतनी अधिक समृद्ध नहीं थी। जैसा कि अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक द्वारा परिभाषित है इसमें शामिल है: गैर वित्तीय कारपोरेशनों (निजी स्वामित्व तथा सरकारी स्वामित्व वाली दोनों) को दिए गए ऋण, राष्ट्रीय खाता प्रणाली 2008 में यथा परिभाषित परिवार तथा गैर लाभकारी संस्थान सेवारत परिवार।

यह साक्ष्य वास्तविक रूप में इस प्रश्न पर प्रमाणित होता है कि संरचनागत पक्ष पर क्या समस्या है?

5.4.2 क्या पर्याप्त प्रतिस्पर्धा है?

भारत में बैंकिंग क्षेत्र की स्थिति के बारे में मुख्य चिन्ता आन्तरिक प्रतिस्पद्धा की पर्याप्त कमी रही है। 1990 से निजी बैंकों को धीरे-धीरे इस क्षेत्र के अन्तर्गत लाया गया है। यह उल्लेखनीय है कि भारत का दृष्टिकोण सरकारी क्षेत्र के बैंकों के निजीकरण का नहीं है फिर चाहे वे नए निजी बैंकों को प्रवेश की अनुमति देने पर आधारित क्यों न हो। इस कार्यनीति ने दूर संचार तथा नागर विमानन क्षेत्रों में भली भांति कार्य किया लेकिन क्या यह बैंकिंग क्षेत्र में भी कारगर होगी? परिणाम मिले-जुले हैं।

चित्र 5.7 क और ख दर्शाते है कि भारत में जमाराशि तथा उधार संकेतकों के सन्दर्भ, दोनों में, वर्ष 2007 तक निजी क्षेत्र के बैंकों की संख्या में लगातार बढ़ोतरी देखी गई। तत्पश्चात् यह प्रक्रिया पर्याप्त रूप से धीमी रही (वैशक लेहमन संकट के परिणामस्वरूप निजी क्षेत्र के बैंकों (पीएसवी) की दिशा में सुरक्षित स्थिति बनी) इसलिए हालिया बैंकिंग इतिहास का एक विरोधाभाष यह है कि समग्र वैंकिंग समूह में निजी क्षेत्र का हिस्सा ऐसे समय में बटा है जब देश में तीव्र विकास देखा गया और जब इसे निजी क्षेत्र द्वारा पूरा किया गया।

यह निजी क्षेत्र के बैंक द्वारा वित्तपोषण के बिना निजी क्षेत्र के विकास का अनोखा मामला है। निजी क्षेत्र के बैंक जो विकास के चरण को वित्तपपोषित करते हैं, को प्रवेश दिए

जाने की अनुमति देने के बावजूद निजी क्षेत्र की मौन उपस्थिति का एहसास हो रहा है।

प्रतिस्पर्धा का प्रश्न, निधियन के अन्य स्रोतों पर भी लागू होता है। चित्र 5.5 यह सुझाता है कि भारत का बैंकिंग का आकार, विकास के स्तर की तुलना में बहुत अधिक विस्तृत नहीं है जिससे यह सुझाव मिलता है कि पूंजी बाजारों से प्रतिस्पर्धा का स्तर, क्षेत्रपार प्रतिस्पर्धा की दिशा में है। वास्तव में, यदि आने वाले समय, अगले बीस वर्षों में भारत 8 प्रतिशत वार्षिक दर पर प्रगति करता है तो बैंकिंग से अलग, भारत के वित्तीय क्षेत्र की संरचना में तेजी से परिवर्तन वांछनीय है। इस परिवर्तन से पारदर्शिता और कॉरपोरेट जोखिम का अपेक्षाकृत अच्छा मूल्यांकन प्रोत्साहित होगा।

5.5 क्या सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक, कार्य निष्पादन में एक समान हैं?

सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में और सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों एवं निजी क्षेत्र के बैंकों के कार्य निष्पादन में कितना अंतर है? इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए चित्र 5.8 में सार्वजनिक और निजी क्षेत्र के बैंकों के संबंध में चार प्रमुख बैंकिंग संसूचकों-सीआरएआर, लेवरेज अनुपात, परिसंपतियों पर रिटर्न एवं गैर-कार्यनिष्पादन + पुनर्संरचित सम्पतियां[7] की समय श्रृंखला दर्शाई गई है।[8]

भारित औसत संख्याओं के अलग, चित्र में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के लिए 95 प्रतिशत विश्वास अंतराल भी दिखाया गया है (ऊपरी रेखा उच्च विश्वास स्तर को और निचली रेखा

चित्र 5.8क: बैंकिंग संसूचक: सीआरएआर

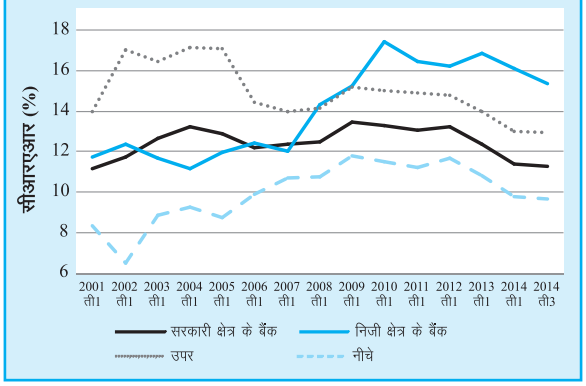

चित्र 5.8ख: बैंकिंग संसूचक: लेवरेज अनुपात

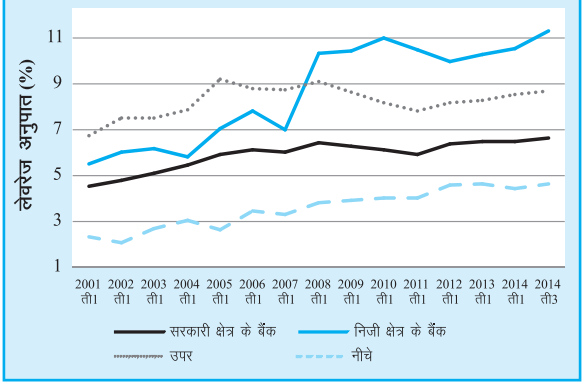

चित्र 5.8ग: बैंकिंग संसूचक: आस्तियों में अनुपात

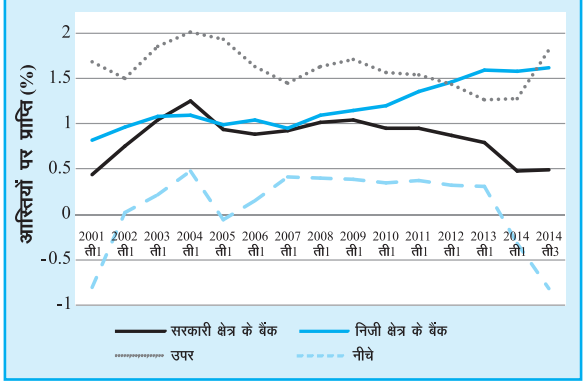

चित्र 5.8घ: बैंकिंग संसूचक: एनपीए+पुनर्गठित अग्रिम

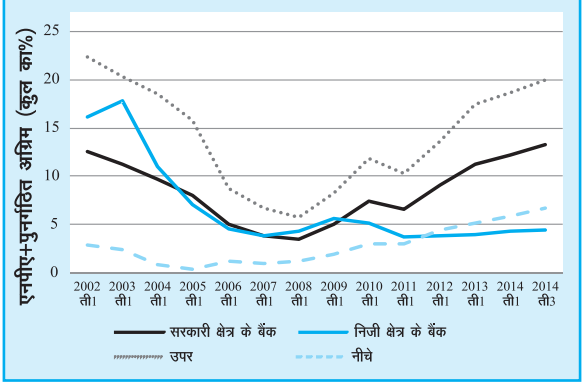

[8] जोखिम भारित परिसंपत्ति अनुपात की तुलना में पूंजी (सीआरएआर) की गणना साख जोखिम, बाजार जोखिम और प्रचालन जोखिम के लिए समग्र जोखिम परिसंपत्तियों से बैंक की पूंजी राशि को विभाजित करके की जाती है। भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा लेवरेज अनुपात की परिभाषा कुल पूंजी की तुलना में कुल परिसम्पत्तियों के अनुपात के रूप में की गई है। बैंक ऑफ इंटरनेशनल सेट्लमेंट्स उदाहरण के तौर पर दी गई अंतर्राष्ट्रीय परिभाषा विशेषत: विपरीत है। इस अध्याय के उद्देश्य से हम अंतर्राष्ट्रीय परिभाषा का इस्तेमाल करेंगे। परिसंपत्तियों पर रिटर्न एक लाभदायकता अनुपात है, जो कुल परिसंपत्तियों पर सृजित कुल लाभ (शुद्ध आय) को दर्शाता है। इसकी गणना औसत कुल परिसंपत्तियों से शुद्ध आय को विभाजित करके की जाती है, अनर्जक परिसंपत्तियां-लीज वाली परिसंपत्ति सहित कोई परिसंपत्ति अनर्जक परिसंपत्ति बन जाती है, जब यह बैंक के लिए आय सृजन करना बंद कर देती है। पुनर्संरचित आस्ति-पुनर्संरचित खाता वह है जहां बैंक उधारकर्ताओं को ऐसी रियायतें देता है, जिन्हें देने पर बैंक अन्यत्र विचार नहीं करता है।

निम्न विश्वास स्तर को सूचित करती है) ध्यान दें कि अनर्जक आस्ति को छोड़कर संख्या जितनी अधिक होगी, सूचक उतना ही बेहतर होगा। चित्र से पता चलता है कि सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के बीच ही परस्पर काफी भिन्नता है। संख्यात्मक रूप में, सर्वोत्तम बैंक का लेवरेज अनुपात, सबसे खराब बैंक की तुलना में लगभग 1.7 गुना से अधिक है और सबसे खराब बैंक की सकल एनपीए जमा पुनर्संरचित सम्पतियां, सबसे अच्छे बैंक की तुलना में 4 गुना अधिक हैं। यह भी ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में से सबसे अच्छा कार्य कर रहे बैंकों द्वारा प्राय: निजी क्षेत्र औसत से कम कार्य निष्पादन किया जा रहा है। यद्यपि इस तथ्य को, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों को सौंपे गए अपेक्षाकृत अधिक सामाजिक दायित्वों के संदर्भ में देखा जाना चाहिए।

बॉक्स 5.3 : लेवरेज अनुपात

पश्चिम में बड़ी मंदी (2008-2013) के परिणामों में से एक परिणाम बैंकिंग प्रणाली में जोखिम एवं सुरक्षित पूंजी के पर्याप्त उपायों की तलाश करना है। पूर्व में लगभग सभी स्ट्रेस टेस्ट, कुल परिसम्पत्तियों की तुलना में पूंजी के जोखिम भारित मापन के अनुपात पर आधारित थे। भारत में सीआरएआर-पूंजी और जोखिम (भारित) परिसंपत्ति अनुपात नामक अवतार नीति और लोकप्रिय प्रबन्धन में बैंक स्थिरता के लिए पूंजी पर्याप्तता का प्रभावशाली उपाय रहा है।

तथापि, इस उपाय के प्रति बढ़ता हुआ अंतर्राष्ट्रीय असंतोष है क्योंकि यह यूएस और यूरोप में वित्तीय संकट से पूर्व जोखिम प्रवृति को नियंत्रण में रखने में असमर्थ रहा। इसी कारण से लेवरेज अनुपात की ओर अधिक ध्यान दिया जा रहा है। भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा कुल परिसंपति और कुल पूंजी के अनुपात के रूप में परिभाषित, उदाहरण के तौर पर, बैंक ऑफ इंटरनेशनल सैंटीमेंट्स द्वारा निर्धारित अंतर्राष्ट्रीय परिभाषा, विशिष्ट रूप से, विपरीत है। हम अंतर्राष्ट्रीय परिभाषा का इस्तेमाल करेंगे।

प्रख्यात अर्थशास्त्रियों, पेगानो और अन्य (2014), द्वारा यूरोपीय बैंकों के संबंध में किए गए अध्ययन से प्राप्त रिपोर्टों में कहा गया है कि: "जबकि बड़े बैंकों का लेवरेज अनुपात वर्ष 2000 और 2007 के बीच कम हुआ, विनियामक अनुपात-जोखिम भारित परिसंपतियों के प्रति टियर I पूंजी अपेक्षाकृत स्थिर रही। मध्य टियर I पूंजी अनुपात वर्ष 1997 और 2007 के बीच प्रत्येक वर्ष लगभग 8% रहा। इस अवधि में मध्यम लेवरेज अनुपात में आधे तक कमी आई। ये दोनों मापन वर्ष 1990 तक आशा के अनुरूप अत्यधिक सहसम्बन्धी थे। परंतु यह सहसम्बन्ध 2000 के आरंभ में सबसे बड़े बैंकों के संदर्भ में टूट गया। वर्ष 2012 तक यह सहसम्बन्ध काफी नकारात्मक हो गया। उल्लेखनीय रूप से, किसी सहसम्बन्ध का नकारात्मक होने का आशय है कि ऐसे बैंकों, जो विनियामक के अनुसार अधिक पूंजीकृत थे, के पास अपेक्षाकृत कम इक्विटी-परिसम्पत्ति अनुपात थे।"

ऐसा क्यों हुआ? सामान्य अंकगणित से स्पष्ट होता है कि जोखिम भारित परिसंपतियों की तुलना में कुल परिसंपतियों का अनुपात, समय के साथ ही, विचलित हुआ। जोखिम भार अपना कार्य नहीं कर रहे थे।

नीचे दिए गए चित्र में यूरोप और भारत के संदर्भ में दो संसूचकों-सीआरएआर एवं लेवरेज अनुपात के सहसम्बन्ध की समय श्रृंखला दी गई है। यूरोप में यह सहसम्बन्ध पिछले दशक में निरन्तर नीचे की ओर गया है जो पिछले कुछ वर्षों में, चिंताजनक रूप से, नकारात्मक अंकों में रहा। भारत में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के मामले में, सीआरएआर और लेवरेज अनुपात के पिछले तीन वर्षों के औसत का सहसम्बन्ध 0.45 पर है जो अच्छा है किंतु काफी नहीं है। वास्तव में, जैसा कि चित्र से स्पष्ट होता है यह सहसम्बन्ध वर्ष 2010 में 0.1 से कम रहा।

चित्र: भारत (बायां) और यूरोप (दायां) के पीएसबी के संदर्भ में सीआरएआर-लेवरेज अनुपात का सहसंबंध

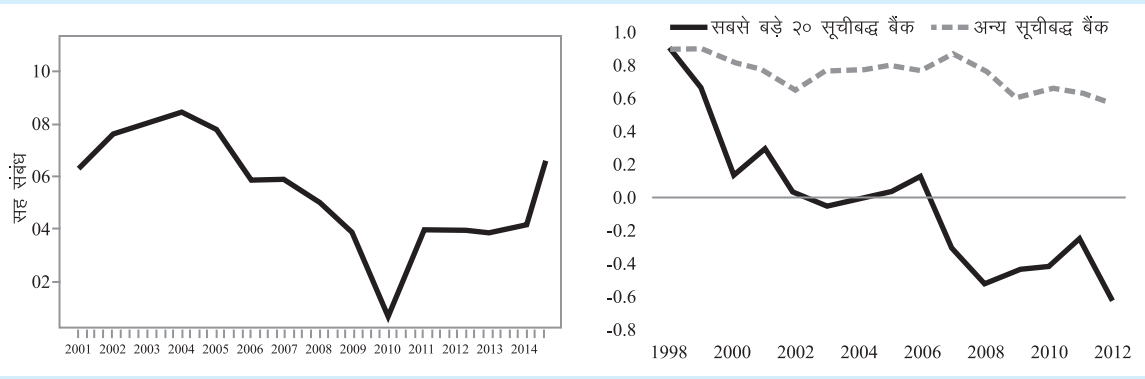

स्रोत : भारतीय रिजर्व बैंक, ब्लूमबर्ग तथा पेगानो और अन्य (2014)[क]

[9] ऊपरी और निचली रेखाएं सीआरएआर, लेबेरेज अनुपात, आस्तियों पर और एनपीए हेतु आरक्षित निधि पर लाभ के संदर्भ में क्रमश: दूसरे या तीसरे सर्वोत्तम और सबसे खराब बैंकों की निरूपित करती हैं।

चित्र: निजी क्षेत्र के बैंकों का लेवरेज अनुपात तथा सीआरएआर का आलेख (2012-14 से तीन वर्षों का औसत)

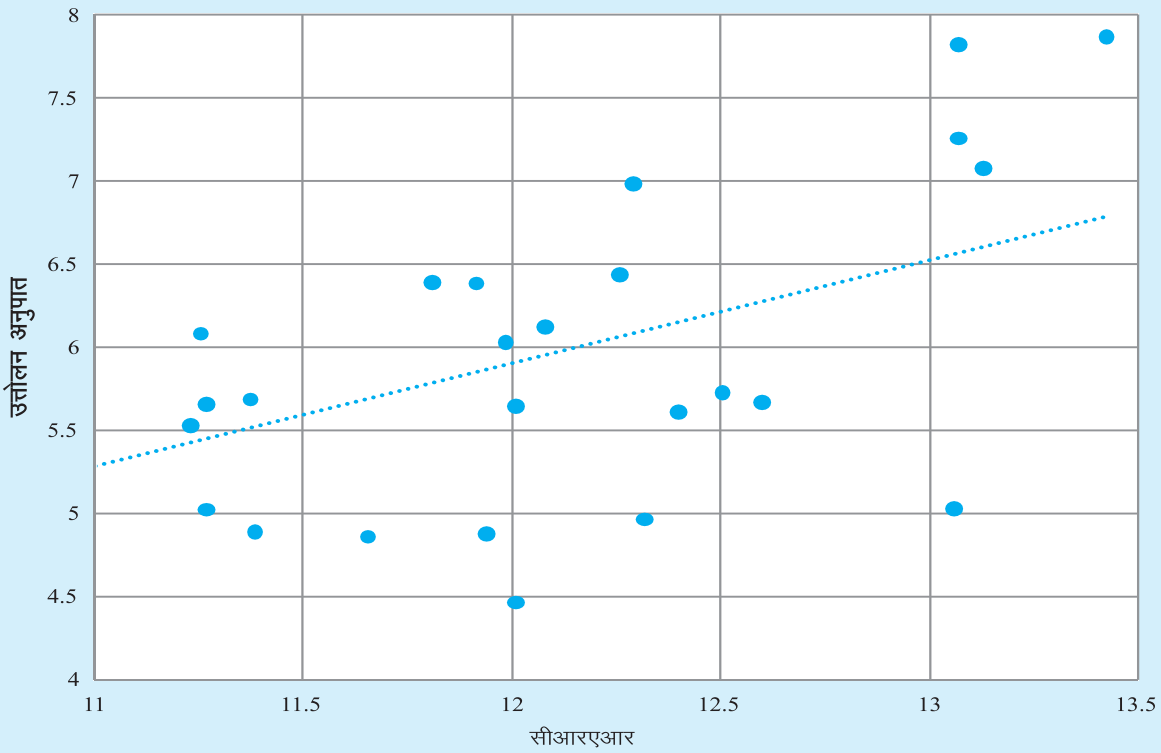

***स्रोत* : भारतीय रिजर्व बैंक**

नीचे दिए गए चित्र में, पिछले तीन वर्षों में भारत के निजी क्षेत्र के सभी बैंकों के संदर्भ में सीआरएआर और लेवरेज अनुपात प्रकीर्ण आलेख दिया गया है। जैसा कि देखा जा सकता है, प्रवत्ति रेखा सकारात्मक रूप से ढाल पर है जो कि एक अच्छा संकेत है। तथापि कुछ चिंताजनक संकेत भी हैं जिनकी जांच अवश्य की जानी चाहिए।

इस प्रकीर्ण चित्र में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों हेतु लेवरेज अनुपातों का औसत 7.8 से 4.5 के बीच होना दर्शाया गया है। अदमति और हेलविग ने एक नई पुस्तक "बैंकर्स न्यू क्लोथ्स" में तर्क दिया है कि बैंक 3% दिवालिया हो जाएगा यदि वह अपनी परिसंपत्तियां 3% से अधिक खो देता है। बैंक स्वयं किसी ऐसी फर्म का ऋण नहीं देते हैं जिसके पास केवल 3% की प्रभावी पूंजी होती है। वे 10 से अधिक, यहां तक कि 15% के अपेक्षाकृत ऊंचे लेवरेज अनुपात का प्रस्ताव करते हैं।

यह उल्लेखनीय है कि यदि किसी बैंक के पास सामान्य-निम्न लेवरेज अनुपात, और परिसंपत्तियों पर बहुत अच्छा रिटर्न एवं नगण्य एनपीए है तो इस स्थिति में लेवरेज अनुपात की तुलना में उसके खातों में पर्याप्त मात्रा में टॉक्सिक ऋण एक चिंता का विषय है।

इसके कम से कम दो कारण हैं कि भारत में लेवरेज अनुपात पर क्यों ध्यान दिया जाना चाहिए। पहला कारण, जैसा कि यूरोपीय और भारतीय अनुभवों से पता चलता है कि सीआरएआर, विशेषकर ऐसी विपरीत परिस्थितियों में जब जोखिम भार अपेक्षाकृत दीर्घकाल तक मान्य होते हैं, स्थिरता का एक बहुत कमजोर संसूचक हो सकता है। इससे अधिक महत्वपूर्ण, बैंकों के अंदर ही कमजोर शासन प्रणालियां और बाहर से उन्हें विनियमित करने में होने वाली कठिनाई के रहते, यह जानना मुश्किल है कि जोखिम भार किस प्रकार सौंपे जा रहे हैं, प्रतिबलित परिसंपतियों के आकार के कारण यह महत्वपूर्ण हो जाता है। दूसरे शब्दों में, आज कमजोर अनुदेशों और पर्याप्त प्रतिबलित परिसंपतियों के साथ, पारदर्शिता पर अपेक्षाकृत अधिक प्रीमियम है जो लेवरेज अनुपात उपलब्ध कराता है।

इसलिए, भारतीय विनियामकों और नीति निर्माताओं को वित्तीय स्थिरता और समर्थता मूल्यांकन में लेवरेज अनुपात की भूमिका को बढ़ाना चाहिए।

(क) एम पेगानो, वी. आचार्य, ए.ब्रूट, एम-ब्रुनरमीयर, सी बुच, एम हेलविग, एस लैंगफील्ड, ए सामिर, और एल वानडेन बर्ग, (2014) इज यूरोप ओवर बैक्ड? सलाहकार वैज्ञानिक समिति की रिपोर्ट, यूरोपियन सिस्टेमिक रिस्क बोर्ड, जून

(ख) अदमाती, अनत और मार्टिन हेल्विग, 2013। द बैंकर्स न्यू क्लोथ्स: व्हाट इज रांग विद बैंकिंग एंड व्हाट टू डू एबाउट इट। प्रिन्सेशन यूनिवर्सिटी प्रेस

चित्र 5.8 में दो अन्य प्रमुख बातें भी ध्यान देने योग्य हैं। पहला, लेवरेज अनुपात में भिन्नता, सीआरएआर की तुलना में बहुत अधिक है। और दूसरा, परिसंपत्तियों पर रिटर्न कम हुआ है तथा प्रतिबंधित परिसंपति ऋण बढ़कर चिंताजनक स्तर तक पहुंच गए हैं और इस संबंध में बैंकों में परस्पर काफी भिन्नता है। पहले में, बॉक्स 5.3 वित्तीय स्थिरता के मापन, जांच और प्रबंध न हेतु, सीआरएआर अनुपात की तुलना में उतने ही, परंतु उससे कम नहीं, लेवरेज अनुपात के इस्तेमाल के लिए, विशेषकर भारत हेतु सशक्त मामले को प्रस्तुत करता है।

5.6 नीतिगत निहितार्थ

संक्षेप में, हम नीति की प्रगति को नियंत्रणमुक्त करने, अन्तर करने, विविधीकरण, और अन्वेषण का प्रस्ताव करते हैं।

- **नियंत्रणमुक्त करना:** चूंकि बैंकिंग क्षेत्र, मुद्रास्फीति में कमी की सहायता से, देयता पक्ष के प्रति वित्तीय निरोध से बाहर निकलता है, यह परिसंपति पक्ष के निरोध को कम करने का एक पूर्ण अवसर है। पहला, जैसा कि बॉक्स 5.1 में वर्णन किया गया है, एसएलआर जरूरतों को धीरे-धीरे कम किया जा सकता है। इससे बैंकों को नकदी, सरकारी बाँड बाजार में गहनता, और कॉरपोरेट बैंक बाजार के विकास को प्रोत्साहन मिलेगा। एसएलआर को धीरे-धीरे कम करना और तत्पश्चात् गहन बांड बाजार के लिए प्रोत्साहन उपलब्ध कराना एक सही क्रम होगा। दूसरा, पीएसएल मानदण्डों का पुनर्मूल्यांकन किया जा सकता है। इसके दो विकल्प हैं: एक अप्रत्यक्ष सुधार, जिसमें पीएसएल के प्रभाव क्षेत्र में अधिक क्षेत्रों को लाना जब तक कि इस सीमा में प्रत्येक क्षेत्र एक प्राथमिकता वाला क्षेत्र न बन जाए; दूसरा मानदण्डों का पुन: परिभाषित करना, ताकि प्राथमिक क्षेत्र को धीरे-धीरे अधिक लक्ष्योन्मुख, अपेक्षाकृत छोटा और आवश्यकता जनित बनाया जा सके। एक आधुनिक अर्थव्यवस्था बनाने तथा विशेषकर पीएसएल के संदर्भ में अधिक साक्ष्य आधारित नीति निर्माण सहित, आय मांग सृजनात्मक के निम्नतम शतमंक के रहन-सहन के स्तर को उठाने की दोहरी जिम्मेदारी है।
- **पीएसबी के भीतर ही विभेद:** इस अध्याय के विश्लेषण से पता चलता है कि सार्वजनिक क्षेत्रों के बैंकों के कार्य-निष्पादन और आकार में काफी भिन्नता है। नीतिगत् निहितार्थ यह है कि शासन सुधारों, सार्वजनिक स्वामित्व, निकासी और पुन:पूंजीकरण के प्रति वन-साईज-फिट्स-ऑल एप्रोच के स्थान पर एक अधिक चयनात्मक दृष्टिकोण[8] अपनाया जाना चाहिए।
- **बैंकिंग प्रणाली के भीतर और बाहर विविधता:** अधिक संख्या में बैंकों और अधिक किस्म के बैंकों को प्रोत्साहित किया जाए। पूंजीबाजारों से स्वस्थ प्रतिस्पर्धा भी अनिवार्य है, जिसके लिए नीतिगत सहायता की जरूरत होगी जिसकी चर्चा पिछले वर्ष के आर्थिक सर्वेक्षण में विस्तार से की गई थी।
- **अन्वेषण:** भविष्य के लिए दिवालियापन पद्धतियों के संबंध में अच्छी पद्धतियां अनिवार्य हैं। ऋण वसूली न्यायाधिकरणों पर कार्य का बोझ अधिक है और उनके पास संसाधन कम हैं जिसके कारण धीमी गति से कार्य होता है और न्याय मिलने में देरी होती है। बैंकों की स्वयं की महत्वपूर्ण साझेदारी के भीतर एसेट रिस्ट्रक्चरिंग कंपनियों की स्वामित्व संरचना में वांछित से कम है। एसएआरएफईएसटी अधिनियम में सबसे छोटे उधारकर्त्ताओं और मध्यम क्षेत्र के उद्यमों के विरुद्ध अधिक कार्य करना प्रतीत होता है। आपदाग्रस्त परिसंपतियां, अर्थव्यवस्था के ऊपर डेमोक्लीज की तलवार की भांति लटकी रहती हैं और इसके लिए सृजनात्मक समाधान की जरूरत है। एक संभावना, कुछ बड़े और कठिन मामलों के समाधान के लिए राजनीतिक शक्ति से सम्पन्न और एक सुप्रतिष्ठित स्वतंत्र पुर्नसमझौता आयोग की नियुक्ति की जानी है। जब अगली कोई तेजी और मंदी आएगी तो भारत को प्रमोटरों, क्रेडिटरों, उपभोक्ताओं और करदाताओं के बीच इस भार को बांटने के लिए तैयार रहने की आवश्यकता है।

सरकारी निवेश को दुरुस्त करना: रेल के माध्यम से उच्चतर विकास

06
अध्याय

विकास को गति देने के लिए रेल की शुरुआत ऐतिहासिक रूप से सर्वाधिक शक्तिशाली सकल उत्प्रेरक रही है – ***डब्ल्यू-डब्ल्यू रोस्टोआ***[1]

6.1 परिचय

नई सरकार के कार्यभार संभालने के बाद से, किए गए आर्थिक सुधारों ने निवेशक के रुख का आंशिक रूप से पुनरुद्धार किया है। किन्तु बढ़ते प्रवाहों का वास्तविक निवेश, विशेषकर निजी क्षेत्र के निवेश में, टिकाऊ उछाल लाने के प्रयोग करना अभी शेष है। इसका कारण अनेक अंतर्संबंधित कारक हैं जो ''भारतीय विशेषताओं वाले तुलन-पत्र संकेत के कारण उत्पन्न होते हैं। यदि निजी निवेश की कमजोरी संबंधित सरकारी निवेश हेतु नकारात्मक या अप्रत्यक्ष तर्क प्रस्तुत करती है तो ऐसे कई सकारात्मक तर्क हैं जिनकी व्याख्या अध्याय 1 में की गई है। जैसा कि, मध्यवर्षीय आर्थिक विश्लेषण 2014-15 में महत्व दिया गया है कि लक्षित सरकारी निवेश को निजी निवेश के प्रतिस्थापन के लिए नहीं अपितु इसे संपूरित और अंतर्गमन करने के उद्देश्य से कम समय में वृद्धि करने की कुंजी के रूप में पुनर्जीवित करने के मामले पर विचार करना उचित है।

यह अध्याय यह प्रस्तुत करने हेतु सरल तथ्यों से आरंभ होता है कि वर्तमान परिस्थितियों में भारत में सरकारी निवेश में वृद्धि होने से निजी निवेश में बहिर्गमन नहीं आएगा और तत्पश्चात् यह ऐसे क्षेत्र हेतु जहां लक्षित सरकारी निवेश विशालतम प्रभाव-विस्तार का सृजन कर सकें, के लिए पृष्ठभूमि तैयार करता है। भारतीय रेल ऐसा सुक्षेत्र हो सकती है।

6.2 बढ़ते सरकारी निवेश का समग्र निष्कर्षों और निजी निवेशों पर प्रभाव

सरकारी और निजी कॉरपोरेट निवेश में गिरावट को हाल के वर्षों में विकास में आयी गिरावट के साथ जोड़ा गया है। केन्द्रीय सांख्यिकी कार्यालय (सीएसओ) की पुरानीश्रृंखला पर आधारित आंकड़े इंगित करते हैं कि उच्च वृद्धि के चरण (2004-05 से 2007-08) में निजी कॉरपोरेट निवेश में उछाल के साथ सरकारी निवेश में भी लगभग 1.5 प्रतिशत बिन्दुओं की वृद्धि हुई थी। सरकारी निवेश में 2007-08 से 2012-13 के बीच 1 प्रतिशत बिन्दु से अधिक की गिरावट के साथ निजी कॉरपोरेट निवेश में (2009-10 और 2010-11 के दौरान हुई वृद्धि को छोड़कर) 8 प्रतिशत बिन्दुओं से अधिक की सामान्य गिरावट आयी है (चित्र 6.1)।

अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (आईएमएफ) ने वर्ल्ड इकोनॉमिक आउटलुक (अक्तूबर, 2014)[2] में इस तथ्य का उल्लेख किया गया है कि यदि सरकारी अवसंरचना निवेश में हुई वृद्धि को अच्छी तरह कार्यान्वित किया जाए तो यह अर्थव्यवस्था को दो तरह से प्रभावित करती हे। निकटगामी प्रभाव के रूप में, यह सकल मांग को बढ़ाती है तथा अवसंरचना सेवाओं की सम्पूरक प्रकृति के कारण निजी निवेश में भी अंतर्गमन करती हे। दूरगामी प्रभाव के रूप में

[1] रोस्टो, डब्ल्यू डब्ल्यू ''दी प्रोसेस ऑफ इकॉनामिक ग्रोथ'', ऑक्सफोर्ड, क्लैनडन प्रेस, द्वितीय संस्करण, 1960 पीपी 302-3 मिशेल, बी.आर में उद्धृत, ''दी कमिंग ऑफ दी रेलवे एंड युनाइटेड किंगडम इकॉनॉमिक ग्रोथ'', 'दी जरनल ऑफ इकोनॉमिक हिस्टरी,'' 24(3), सितम्बर, 1964

[2] आईएमएफ ''इज़ इट टाईम फॉर ऐन इंफ्रास्ट्रक्चर पुश? दी मैक्रोइकोनॉमिक इफैक्ट्स ऑफ पब्लिक इन्वेस्टमेंट'', 'वर्ल्ड इकोनॉमिक आउटलुक अध्याय 3, अक्तूबर, 2014

चित्र 6.1: सघउ के अनुपात के रूप में क्षेत्र द्वारा सकल पूंजी निर्माण 190-91 से 2012-13

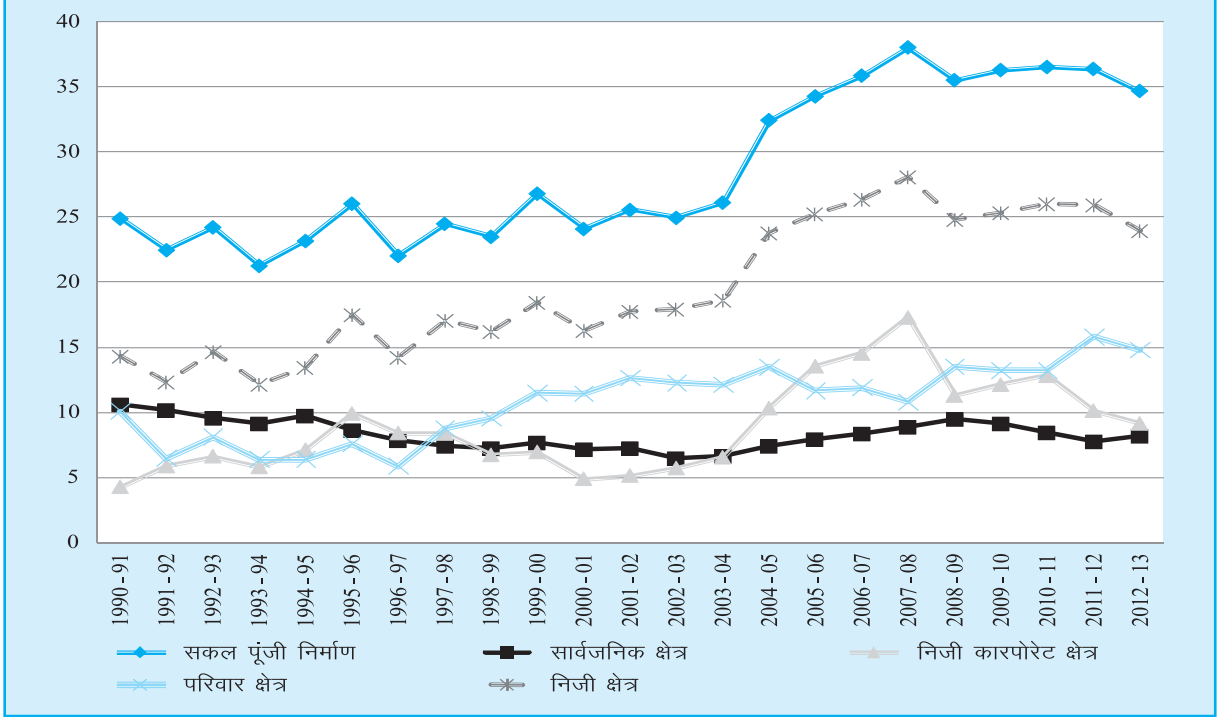

स्रोत : **केन्द्रीय सांख्यिकी कार्यालय।**

चूंकि निर्मित अवसंरचनात्मक अर्थव्यवस्था की उत्पादक क्षमता को पूरा करती है अत: आपूर्ति का दुष्प्रभाव भी सामने आता है। अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा प्रस्तुत अर्थमितीय कवायद इस तथ्य की पुष्टि करती है कि सरकारी निवेश में वृद्धि का परिणाम पर सकारात्मक प्रभाव हो सकता है। विकासशील अर्थव्यवस्थाओं हेतु मध्यावधि सरकारी निवेश गुणक 0.5 और 0.9 के बीच रहने का अनुमान है जो कि उन्नत अर्थव्यवस्थाओं हेतु अनुमानित गुणक से थोडा कम है। तथापि, परिमाण कार्यान्वयन क्षमता पर निर्भर करता है।

वास्तव में, भारत में सरकारी वृद्धि निवेश के सामने दो सबसे बड़ी चुनौतिया वित्तीय संसाधन और कार्यान्वयन क्षमता है। वित्तीय संसाधन की समस्या का समाधान अध्याय 5 में किया गया है। जहां तक कार्यान्वयन क्षमता का संबंध है, इस समस्या का समाधान अधिकतम सकारात्मक प्रभाव-विस्तार वाले क्षेत्रों और शीघ्रता एवं दक्षता से निवेश करने की सिद्ध क्षमता के अल्पांश वाले संस्थानों का पता लगाने में है। दो मुख्य क्षेत्र ग्रामीण सड़कें और रेल हैं। सड़कों के लिए प्रेरणा तत्कालीन प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी के अंतर्गत पिछली एनडीए सरकार की राष्ट्रीय राज्यमार्ग विकास परियोजना (एनएचडीपी) तथा प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना (पीएमजीएसवाई) द्वारा प्रदान की गई थी और प्रमाण इस बात की ओर संकेत करते हैं कि प्रतिफल, विशेषकर ग्रामीण रोज़गार के संबंध में उन गांवों में अधिक थे जो सड़क प्रणाली[3] से पहले से जुड़े नहीं थे।

यह सरकार अब उपेक्षित रेल क्षेत्र के लिए वह कर सकती है जो पिछली एनडीए सरकार ने ग्रामीण सड़कों के लिए किया था। इस प्रेरणा में भारत के सरकारी ऋण के सिद्धांत को बिना खतरे के बृहतर निजी निवेश के अंतर्गमन करने की शक्ति है।

मौजूदा अनुभवजन्य प्रमाण भारत में विकास पर सरकारी निवेश के प्रभाव के विषय में क्या कहता है? रोड्रिक और सुब्रमण्यम (2005)[4] ने 1980 के आस-पास के समय भारत के उत्पादकता उछाल का विश्लेषण करते हुए सरकारी अवसंरचना निवेशों (मांग उत्पन करने वाले प्रभावों की तुलना में) की उत्पादकता में तेजी लाने की भूमिका पर ज़ोर दिया है। वे रॉबर्ट बार्रो द्वारा तैयार की गई रूपरेखा जहां सरकारी

[3] एशर, सैम एंड पॉल नोवोसैड," दी एम्प्लॉयमेंट इफैक्ट्स ऑफ रोड कन्सट्रक्शन इन रूरल इंडिया, 2014, वर्किंग पेपर जिसे http://www.nuffield.ox.ac.uk/users/Asher/research.html. पर देखा जा सकता है।

[4] रॉड्रिक, डी एंड ए-सुब्रमण्यम "फ्रॉम "हिन्दू ग्रोथ" टू प्रडक्टिविटी सर्ज: दी मिस्ट्री ऑफ दी इंडियन ग्रोथ ट्रांजिशन", 2005, आईएमएफ स्टाफ पेपर्स 52(2)।

अवसंरचना सेवाएं निजी उत्पादन की निविष्टियां हैं, का प्रयोग करके समग्र वृद्धि पर प्रभावों का विश्लेषण करते हैं। उनके परिणाम दर्शाते हैं कि सरकारी अवसंरचना के खर्चे और वृद्धि के बीच उचित अंतर (लगभग पांच वर्ष) को अनुमत करने से सरकारी अवसंरचना समग्र वृद्धि के 1.5-2.9 प्रतिशत को स्पष्ट कर सकते हैं। वर्तमान संदर्भ में, 1980 की तुलना में आज की वृर्धित कार्यान्वयन क्षमता एवं वांछित लक्ष्य को देखते हुए वृद्धि में सरकारी निवेश का योगदान अधिक होगा। भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा किए गए अध्ययन में दीर्घावधि गुणक (स.घ.उ. पर पूंजी परिव्यय के) 2.4[5] होने को प्रस्तुत किया गया है। अध्ययन में इस बात की भी पुष्टि की गई है कि स.घ.उ. पर राजस्व व्यय का प्रभाव, हालांकि अधिक होता है, किन्तु यह प्रथम वर्ष के उपरान्त कम होता जाता है जो व्ययों के पुन: प्राथमिकताकरण से होने वाले अभिलाभों की ओर संकेत देते हैं।

6.3 रेल में सरकारी निवेश का मामला

6.3.1 रेल में ही कम निवेश तथा क्षमता योजन का अभाव क्यों?

सैद्धांतिक रूप से, परिवहन नेटवर्कों को बाजारों से जोड़ने के व्यापक रूप से ज्ञात प्रभावों को देखते हुए भारत में संसाधनों को परिवहन अवसंरचना में इस्तेमाल करने का मामला काफी मजबूत मामला है क्योंकि इससे विविध प्रकार की लागतों में कमी आएगी, सामूहिक अर्थव्यवस्थाओं को प्रोत्साहन मिलेगा तथा अर्थव्यवस्था विशेषकर संभारण तंत्र से जुड़े (लॉजिस्टिक-इन्टेन्सिव) विनिर्माण में प्रतिस्पर्धात्मकता में सुधार आएगा। फिर भी कुशल कार्यान्वयन हेतु क्षेत्रों के बीच संसाधनों के आबंटन कुशल जोखिम, पुरस्कार एवं क्षमता के आधार पर प्राथमिकता देकर करने की आवश्यकता है।

भारत में पहला रेल मार्ग 1850 और बाद में ब्रिटेन की निजी कंपनियों द्वारा बनाया गया था जिन्हें उपनिवेशी (अंगेज) सरकार से उनकी पूंजी निवेश[6] पर 5 प्रतिशत के प्रतिफल की गारंटी दी गई थी। रेल की स्थापना से बाजारों का एकीकरण संभव हो पाया और आय[7] में वृद्धि हुई। आज राष्ट्र की जीवनरेखा' 19,000 से अधिक रेलों का प्रचालन करती है जो प्रतिदिन 23 मिलियन यात्रियों ओर 3 मिलियन टन से ज्यादा माल की ढुलाई करती है तथा इससे 13 लाख से अधिक व्यक्तियों को रोजगार मिला हुआ है।

नागरिक उड्डयन जैसे क्षेत्रों के विपरीत, दो बड़े भूपरिवहन क्षेत्र सड़क और विशेषकर रेल सरकारी निवेशों पर निर्भर हैं। जबकि रेल में सभी सरकारी निवेश केन्द्र सरकार द्वारा किए जाते हैं, सड़कों में सरकारी निवेश केन्द्र सरकार के साथ-साथ राज्य सरकारों द्वारा भी किया जाता है।

रेल में विगत वर्षों में कितने संसाधनों का प्रवाह हुआ है? उत्तरोत्तर योजनाओं में परिवहन क्षेत्र की तुलना में रेल के लिए संसाधनों के आवंटन में गिरावट देखी गई है जैसाकि चित्र 6.2क और 6.2ख में दर्शाया गया है। यह रुझान हाल ही में बारहवीं योजना में बिल्कुल पलट गया था, परन्तु उपेक्षा की

चित्र 6.2क: परिवहन क्षेत्र तथा रेलवे में संसाधन आवंटन (प्रतिशत)

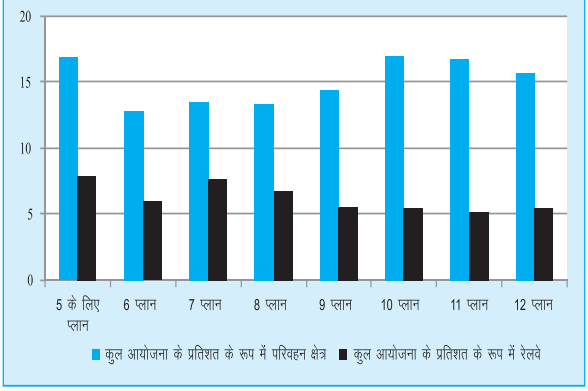

चित्र 6.2ख: कुल बढ़ते व्यय में रेलवे और सड़को का हिस्सा (प्रतिशत) 1990-91 से 2013-14 तक

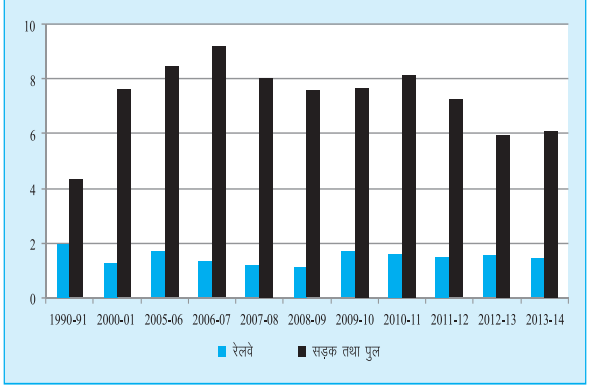

स्रोत : भारतीय लोक वित्त सांख्यिकी, वित्त मंत्रालय *; केन्द्र और राज्यों सहित

[5] भारतीय रिजर्व बैंक, "फिस्कल मल्टीप्लायर्स, बॉक्स II.16 वार्षिक रिपोर्ट 2011-12।

[6] बोगार्ट, डैन एंड लतिका चौधरी, "कुड रेलवेज़ हैव डन मोर टू एंड इकोनॉमिक डेवलपमेंट इन इंडिया?" मई, 2013 जिसे http://www.ideasforindia.in/article.aspx?article_id=142. पर देखा जा सकता है। भारतीय रेल पर विशेषज्ञ समूह "दी इंडियन रेलवेज़ रिपोर्ट - 2001: पॉलिसी इम्परेटिव्स फॉर रिइन्वेंशन एंड ग्रोथ। नई दिल्ली, एनसीएईआर 2001।

[7] बोगार्ट, डैन एंड लतिका चौधरी, "रेलवेज़, "रेलवेज़ इन कोलोनियल इंडिया: ऐन इकोनॉमिक अचीवमेंट? मई, 2012 जिसे http://papers.ssrn.com/sol3/papers.cfm?abstract_id=2073256. पर देखा जा सकता है।

परिपाटी इस तथ्य में झलकती है कि कुल योजना परिव्यय में रेल का हिस्सा वर्तमान में अन्य परिवहन क्षेत्रों के लगभग 11 प्रतिशत के मुकाबले केवल 5.5 प्रतिशत है और समग्र विकास व्यय में इसका हिस्सा विगत दशक में 2 प्रतिशत से कम रहा है।

यह आंकड़े चीन की तुलना में कम हैं। पूर्ण रूप से और स.घ.उ. के हिस्से के रूप में, रेल में चीन का निवेश भारत के निवेश से काफी उच्च है। स.घ.उ. के हिस्से के रूप में, चीन ने भारत के 2005-2012 तक की अवधि में औसत निवेश से लगभग तीन गुणा निवेश किया है (चित्र 6.3)। प्रति व्यक्ति आय के अनुसार, चीन ने इसी अवधि के दौरान औसतन ग्यारह गुना निवेश किया है, हालांकि चीन के आकार को देखते हुए, ये आंकड़े और भी महत्वपूर्ण हो जाते हैं।

भारतीय रेल के लिए ऐसे अल्प निवेश के क्या परिणाम रहे हैं? इसका पहला दुष्प्रभाव क्षमता विस्तार पड़ पड़ा है। चित्र 6.4 यह इंगित करता है कि 1990 में चीन का लगभग

चित्र 6.3: रेलवे में निवेश-भारत तथा चीन (स.घ.उ. का प्रतिशत) 2005- से 2012

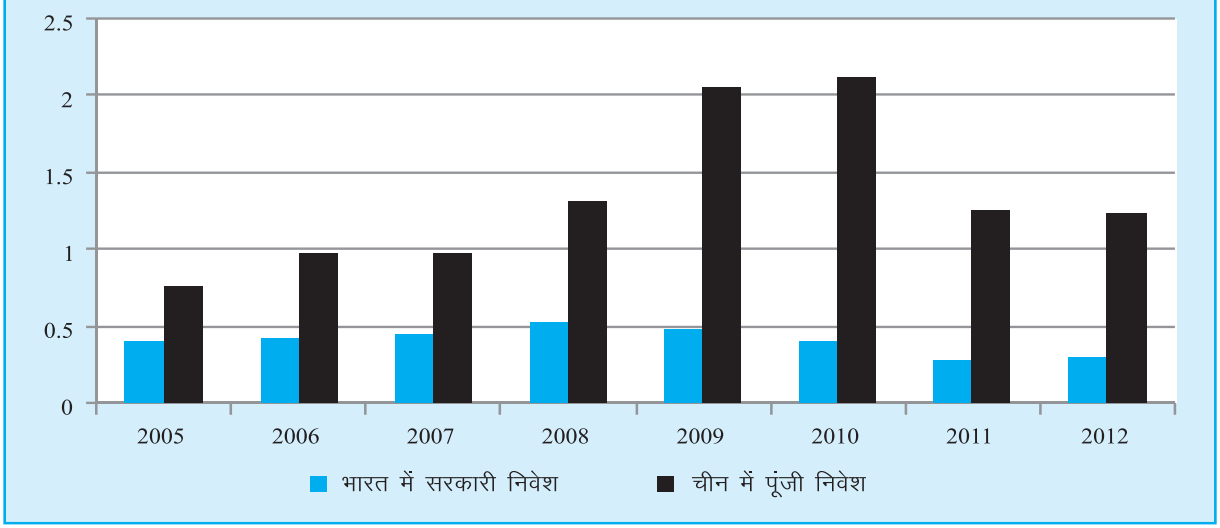

स्रोत : विश्व बैंक और वित्त मंत्रालय की संगणनाएं

चित्र 6.4: क्षमता से अतिरिक्त (रूट हजार कि.मी.) 1990- से 2010

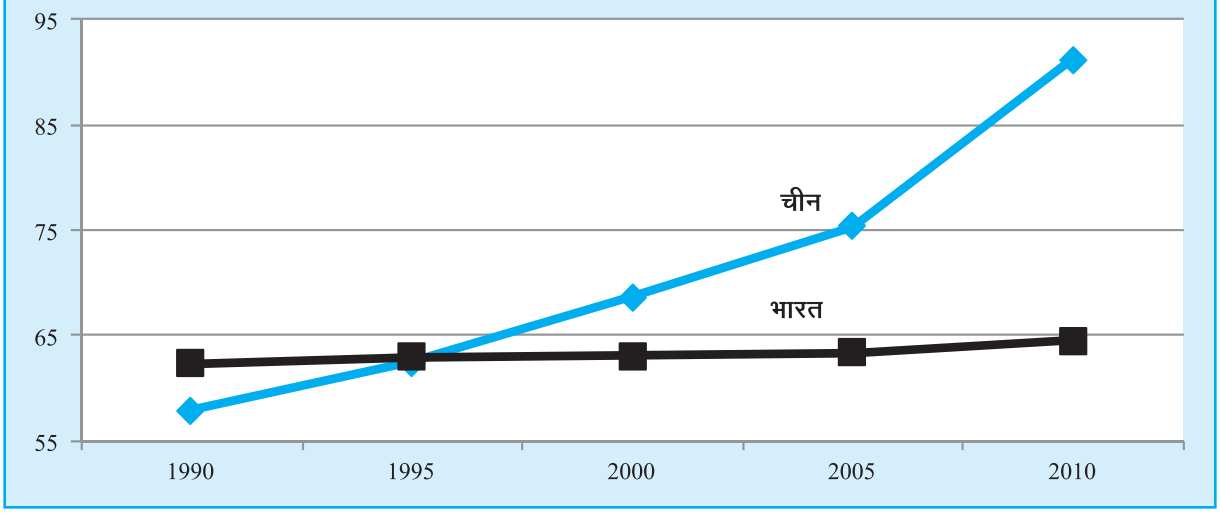

स्रोत : विश्व बैंक

[8] यह महत्वपूर्ण रूप से उल्लेखनीय है कि चीन के रेल में निवेश का महत्वपूर्ण भाग सरकार और प्रांतीय प्राधिकरणों के संयुक्त उद्यमों के माध्यम से आता है और, कुछ मालगाड़ियों के लिए, कोयला खानों जैसे बड़े प्रयोक्ता भी पक्षकार होते हैं। मालभाड़ा प्रशुल्क का एक हिस्सा रेल विनिर्माण निधि (आरसीएफ) के रूप में उद्धृत किया जाता है जिसका उपयोग केवल अवसंरचना पूंजी खर्च के लिए होता है। इससे बजट पर कम बोझ पड़ता है और क्षमता निर्माण का कार्य सुगम होता है। चूंकि चीन में रेल का निगमीकरण कर दिया गया है, अत: इसे वित्तपोषण संबंधी आवश्यकताएं पूरी करने के लिए ऋण जारी करने और बाजार से उधार लेने की भी अनुमति दी गई है।

57,900 रूट किलोमीटर का रेल नेटवर्क भारत के 62,211 रूट किलोमीटर के रेल नेटवर्क से 2010 तक काफी पीछे था, यह स्थिति चीन के पक्ष में बिल्कुल उलटी हो गई क्योंकि जहां चीन का नेटवर्क विस्तार 90,000 रूट किलोमीटर तक हो गया वहीं भारत का नेटवर्क अत्यंत थोड़ा सा बढ़कर 64000 रूट किलोमीटर ही हो सका। क्षमता संवर्धन की कमी के चलते, स.घ.उ. में रेलवे का हिस्सा हालिया वर्षों में घटकर लगभग 1% पर रुक गया है जबकि रेलवे से इतर परिवहन के साधनों का हिस्सा विगत तीन दशकों से सामान्यत: बढ़ता रहा है।

जैसाकि चित्र 6.5 में दर्शाया गया है, भारतीय रेल में ट्रैक विस्तार (1991 को आधार वर्ष मानकर 1991 से 2012 तक की अवधि में चालू ट्रैक किलोमीटर के सूचकांक द्वारा मापे गए अनुसार) घरेलू सड़क मार्ग क्षेत्र में क्षमता संवर्धन (राष्ट्रीय और राज्य राजमार्गों, शहरी और ग्रामीण सड़कों सहित सड़क मार्गों की किलोमीटर में कुल लंबाई के सूचकांक द्वारा मापे गए अनुसार) बुरी तरह से पिछड़ा हुआ है।

प्रभावी रूप से इसका परिणाम यह हुआ है कि रेल द्वारा सफर करने वाले यात्रियों और विशेषकर माल भाड़ा यातायात का महत्वपूर्ण हिस्सा सड़क मार्ग को अंतरित हो गया है। राइट्स लि॰ द्वारा कराए गए कुल परिवहन प्रणाली अध्ययन से यह अनुमान लगाया गया है कि टनभार अर्जन में रेलमार्ग का हिस्सा 1970 के अंत के 65% से गिरकर 2007-08 में 30% रह गया है। मैक्किन्से के ''बिल्डिंग इंडिया: ट्रांसफॉर्मिंग द नेशन्स लॉजिस्टिक इन्फ्रास्ट्रक्चर (2010)'' नामक अध्ययन में यह अनुमान लगया गया है कि माल भाड़ा यातायात में मॉडल हिस्सेदारी सड़क के लिए 57% की तुलना में रेल के लिए 36% है। राष्ट्रीय परिवहन विकास नीति समिति (एनटीडीपीसी-2014) की रिपोर्ट के अनुसार, इस हिस्सेदारी के वर्ष 2011-12 में और भी गिरकर 33% तक रह जाने का अनुमान है। 2011 की स्थिति के अनुसार कुछ अन्य देशों में माल भाड़ा यातायात में रेल की हिस्सेदारी चित्र 6.6 में दी गई है। देशवार आंकड़ों को सावधानी से समझने की आवश्यकता है। उदाहरण के लिए, समुद्र तटीय संपर्क मार्गों के व्यापक नेटवर्क और विस्तृत अंतर्देशीय जलमार्गों, जो काफी मात्रा में माल भाड़ा यातायात के बावजूद अमरीका की यह हिस्सेदारी 44% है (एमोस, 2011)

मैकिन्से रिपोर्ट (2010) के अनुसार भारत में मामलों की मौजूदा स्थिति की निरन्तरता का अर्थ है माल भाड़ा यातायात में रेल की हिस्सेदारी 2020 तक और भी कम होकर 25% रह जाएगी। एमोस (2011) की टिप्पणी के अनुसार ''अंतर्राष्ट्रीय

चित्र 6.5: भारतीय रेल; सड़क जिस पर कम यात्रा की गई (1991=100)

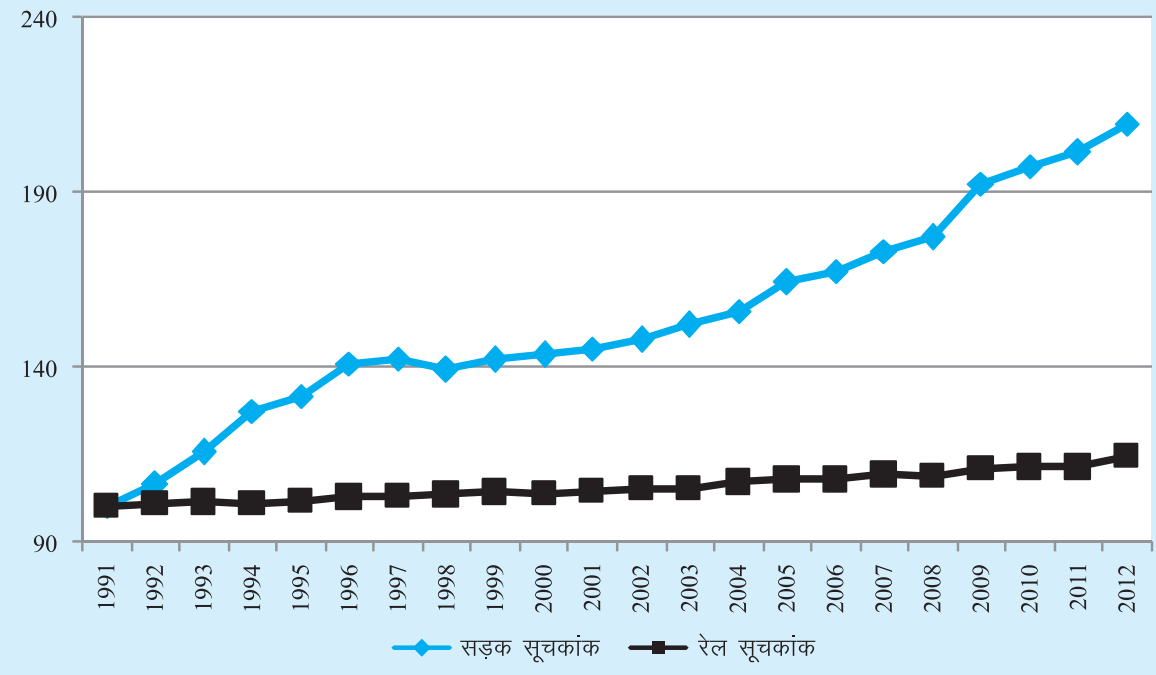

स्रोत : सीईआईसी डाटाबेस

चित्र 6.6: घरेलू भाड़े में रेल का नमूना हिस्सा (प्रतिशत)

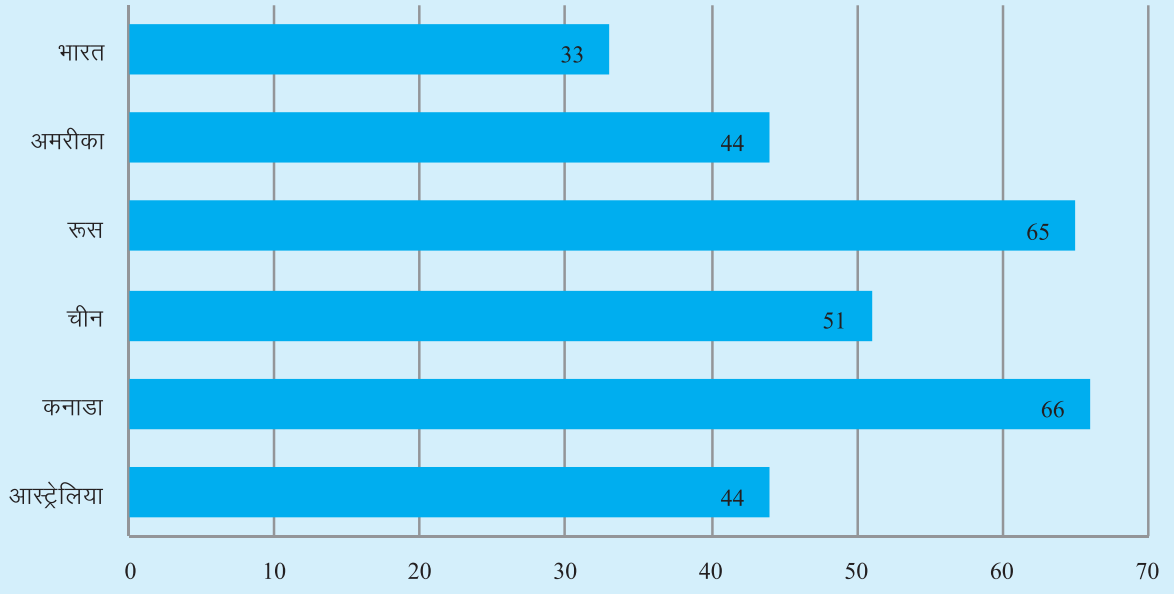

स्रोत : एमोस, पॉल ''फ्रेट रेलवेज़ गवर्नेंस, आर्गेनाइजेशन एंड मैनेजमेंट: एन इंटरनेशनल राउंड-अप'' जुलाई 2011। एनटीडीपीसी को कागजात प्रस्तुत किए गए *भारत के लिए आंकड़े एनटीडीपीसी की रिपोर्ट (2014) में रिपोर्ट किए गए 2011-12 के अनुमान के अनुसार हैं।

अनुभव सुस्पष्ट है। जिनती अधिक दक्षता से रेल मालभाड़े का प्रबंधन किया जाएगा, उनसे संबंधित बाजारों में उनकी उतनी ही बड़ी भूमिका होगी, साथ ही आर्थिक विकास में उनकी भागीदारी भी उतनी ही अधिक होगी''। एक दक्ष रेल मालभाड़ा नेटवर्क कम लागतों पर और ग्रीन हाऊस गैस के कम उत्सर्जनों, अपेक्षाकृत बेहतर ऊर्जा दक्षता और कम भीड़-भाड़ के साथ कच्चे माल के परिवहन में उद्योग की मदद कर सकता है। सड़क के मुकाबले रेल माल भाड़ा यातायात के लिए 75 से 90% कम ऊर्जा का और यात्री परिवहन के लिए 5 से 21% कम ऊर्जा का उपयोग करती है। और, माल भाड़े के लिए रेल परिवहन की इकाई लागत सड़क परिवहन के मुकाबले 2 रुपये प्रति एनटीकेएम और यात्री परिवहन के लिए 1.6 रुपए पति पीकेएम थी (आधार वर्ष 2000 में)[9]।

इसके परिणामस्वरूप जिस तरह पिछली एनडीए सरकार ने एनएचडीपी और प्रधान मंत्री ग्राम सड़क योजना की पहल के माध्यम से भारतीय सड़कमार्ग क्षेत्र का कायापलट किया था, उसी तरह फिलहाल रेलमार्ग के समर्पित माल भाड़ा यातायात गलियारों (डीएफसी) में निवेश के मजबूत त्वरित कार्यक्रम की आवश्यकता है जिन्हें संबद्ध औद्योगिक गलियारों के साथ-साथ स्वर्णिम चतुर्भुज के समानांतर बनाया जा सके। इस तरह की पहल से ''मेक इन इंडिया'' को वास्तविक रूप देने के साथ-साथ भारतीय विनिर्माण उद्योग की कायापलट हो जाएगी। माल भाड़ा यातायात को पृथक करने के बाद यात्री रेलगाड़ियों को थोड़े से निवेश से ही काफी तीव्र बनाया जा सकता है।

6.3.2 संकुलन (भीड़-भाड़)

दूसरा और अन्य संबंधित परिणाम संकुलन (भीड़-भाड़) और क्षमता का विस्तार करना है। रेल अवसंरचना पर बढ़ते भार और कम गति, क्षमता वृद्धि की कमी का एक तर्कसंगत परिणाम है। उदाहरणार्थ, माल गाड़ी की औसत गति 2000-01 और 2012-13 के बीच की अवधि के दौरान वस्तुत: लगभग 24-25 कि.मी. प्रति घंटे पर स्थिर रही है। इसके विपरीत, चीन में मालगाड़ियों की अधिकतम गति 2008-09 के आसपास 80 कि.मी. प्रति घंटा, और 1991 में 80-100 कि.मी. प्रति घंटा की अधिकतम गति को बढ़ाकर चरणबद्ध तरीके से 160 कि.मी. प्रति घंटा तक कर दिया गया और 2008[10] तक सर्वाधिक लोकप्रिय यात्री गलियारों पर इसे बढ़ाकर 200 कि.मी. प्रति घंटा तक कर दिया गया और फिलहाल यह गति 300 कि.मी. प्रति घंटे से ऊपर है।

[9] एनटीडीपीसी की रिपोर्ट (2014), सारणी 1.4, पृष्ठ 6

[10] विश्व बैंक ''ट्रैक्स फ्रॉम दी पास्ट, ट्रांसपोर्ट फॉर दी फ्यूचर: चाइनीज रेलवे इंडस्ट्री 1990-2008 एण्ड इट्स प्लान्स एंड पॉसिबिलिटीज़'', चीन देश का कार्यालय, बीजिंग, मई 2009

चित्र 6.7: कार्यदक्षता का बैंचमार्क: भारत के मुकाबले चीन और रूस

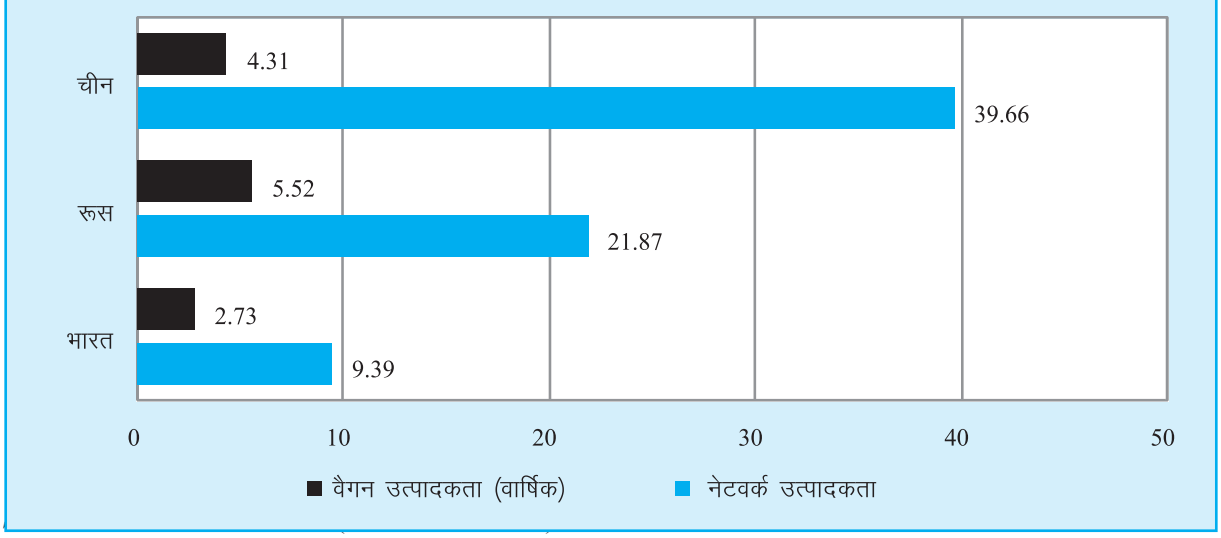

भारतीय रेल दो अन्य तुलनात्मक देशों – चीन और रूस की अपेक्षा कितने संकुलित हैं? यह देखते हुए कि चीन की रेल को भी संकुलन का सामना करता पड़ता है और इसके अत्यधिक क्षमता विस्तार का कार्य प्रारंभ कर दिया गया है, चीन नेटवर्क उत्पादकता (एनटीकेएम (मिलियन)/नेटवर्क लंबाई द्वारा मापन) रूस और भारत दोनों के मुकाबले कहीं अधिक है। तीनों में से वैगन उत्पादकता (एनटीकेएम (मिलियन/वैगन धारिता के रूप में मापन) भारत में निम्नतम है चित्र 6.7)

भारत में माल गाड़ियों और यात्रियों द्वारा एक ही ट्रैक नेटवर्क इस्तेमाल किया जाता है। कितनी भीड़-भाड़ है यह नीचे दिए मैप 6.1 से उसको आंका जा सकता है, जहां काली लकीरें रेल नेटवर्क को दर्शाती है और दूसरी ओर लाल लकीरें 100 प्रतिशत से अधिक क्षमता पर परिचालन करने वाली को दर्शाती है। चाहे रेलवे नेटवर्क बहुत ज्यादा या कम भीड़-भाड़ वाला हो, भीड़ फिर भी रहती है। अधिक घनत्व नेटवर्क (एचडीएन) मार्गों पर, सभी भागों का 65 प्रतिशत से ऊपर (247 मे से 161), 100 प्रतिशत या अधिक क्षमता वाली दौड़ रही है। यह प्रतिशत विशिष्ट प्रभागों के लिए उच्च है जैसे उत्तरी केंद्रीय रेलवे में भागों का 96 प्रतिशत और दक्षिण पूर्वी रेलवे में भागों का 75 प्रतिशत पूर्ण क्षमता से अधिक पर परिचालन कर रहे हैं। एनटीडीपीसी (2014) रिपोर्ट का तर्क है कि क्षमता उपयोग का 80 प्रतिशत इष्टतम है क्योंकि संबंधित क्षमता में अंतर होना आवश्यक है ताकि ट्रेनों के परिचालन में अप्रत्याशित व्यावधान से उबरा जा सके।

भारतीय रेलवे में क्षमता उपयोग यात्री रेलगाड़ियों के उपरोक्त स्थिति में नेटवर्क क्षमता के लगभग 65% उपयोग से भारी मालभाड़े पर इनके संचालन (जिससे रेलवे की भारी उत्पादों को खदान से विद्युत और इस्पात संयंत्रों तक ले जाने की क्षमता बाधित होती है) और उच्च गति पर यात्री रेलगाड़ियों के संचालन की बाधाएं पेश आती हैं क्योंकि आमतौर पर यात्री यातायात को प्राथमिकता दी जाती है। इन वर्षों के दौरान, आंकड़ों से इंगित होता है कि प्रतिदिन किसी डिब्बे द्वारा वहन माल और तय की गई दूरी और आमूल परिवर्तन लगभग स्थिर रहा है।

पिछले पैराग्राफों में ''रूट टू नोव्हेयर'' का सिंहावलोकन किया गया है जो स्वयं रेलवे में है: कम निवेश में क्षमता अभिवृद्धि नहीं हुई है और भीड़ बढ़ी है; कम क्षमता से आर्थिक विकास में मदद मिली है; व्यावसायिक उद्देश्यों की अनदेखी हुई है, सेवा के खराब प्रावधान हुए हैं और परिणामत: वित्तीय कमजोरी आई है (जिस पर हम बाद में चर्चा करेंगे)। अधिक सरकारी निवेश के एक बार कुशलतापूर्वक उपयोग करने से रेलवे को इन समस्याओं का समाधान करने में मदद मिलती है। लेकिन यदि इसमें निवेश को बढ़ावा भी दिया जाता है जो पूरी अर्थव्यवस्था पर क्या प्रभाव होगा?

[11] *स्रोत* : रेल मंत्रालय के आंकड़े

[12] एनटीपीडीसी की रिपोर्ट (2014) पृष्ठ 40

मानचित्र 6.10 : भारतीय रेलवे में क्षमता उपयोग

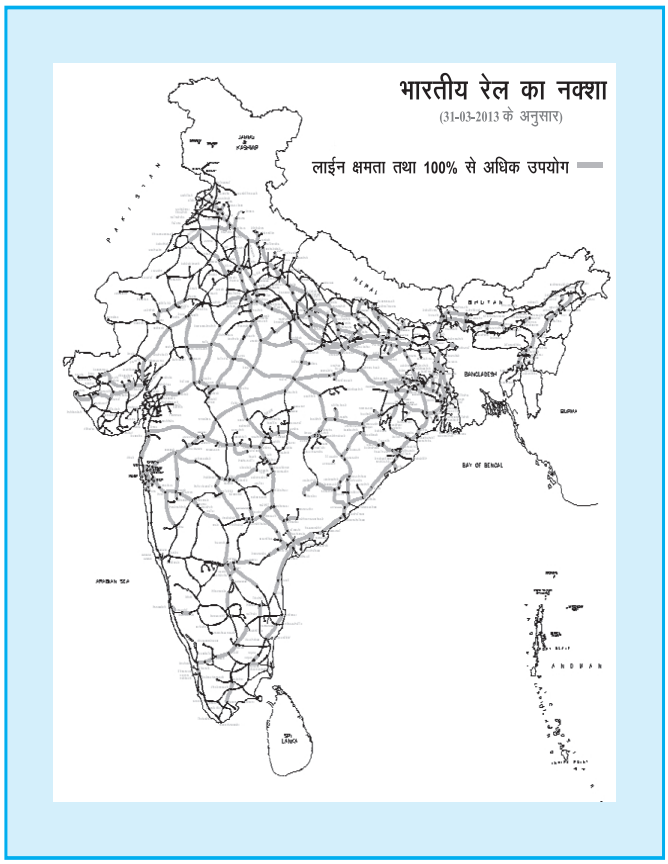

स्रोत : रेल मंत्रालय। *ग्रे लाइनें 100 प्रतिशत से अधिक क्षमता उपयोग को दर्शाती हैं।

6.3.3 जीवंत रेलवे द्वारा अर्थव्यवस्था को कितना बढ़ावा दिया जा सकता है।

i) रेलवे को अग्र और पश्च लिंकेज

विनिर्माण और सेवाओं के लिए परिवहन और खासतौर पर अवसंरचना महत्वपूर्ण होती है। अर्थव्यवस्था के लिए वित्तीय प्रोत्साहन से रेलवे को कितना बढावा मिलेगा? इसके अनुमान की एक विधि अलबर्ट हिर्श मैन के पश्च और अग्र लिंकेज विचार का आश्रय लेना है। पूर्व विधियों में अन्य क्षेत्रों पर प्रभाव को मापा जाता था जो रेलवे को अधिक बढाने के परिणामत: आगत प्रदान करते थे। इस विधि में अन्य क्षेत्रों पर बड़े प्रोत्साहनों के प्रभावों को मापा जाता है जिनका रेलवे द्वारा इनपुट के रूप में उपयोग किया जाता है। केंद्रीय सांख्यिकी संगठन द्वारा प्रकाशित इनपुट-आउटपुट तालिकाओं में क्षेत्रों के आउटपुट के मान संबंधी आंकड़े दिए गए हैं जिनका अन्य क्षेत्रों द्वारा अपने उत्पादन के साथ-साथ उपयोग प्रयोजनों के लिए आगतों के रूप में उपयोग किया जाता है। इन आंकड़ों में पश्च और अग्र लिंकेज की गणना की जा सकती है।[13]

[13] अग्र और पश्च लिंकेज हासिल करने के लिए प्रत्यक्ष के साथ-2 अप्रत्यक्ष लिंकेज हासिल करना महत्वपूर्ण है। इसके लिए विपरीत इनपुट आउटपुट मैट्रिक्स (लियोनटिक इन्वर्स) की गणना करना जरूरी है। विपरीत मैट्रिक्स किसी क्षेत्र के आउटपुट के 1 इकाई उत्पाद के लिए अपेक्षित इनपुट का मान (प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष, दोनों) दर्शाता है। रेलवे की सेवा में 1 रुपए के निवेश से न केवल अल्प उद्योगों में आउटपुट की मांग में बढ़ोतरी होती है जिनका रेलवे द्वारा इनपुट के रूप में उपयोग किया जाता है वरन ऐसे अन्य क्षेत्रों के लिए उपलब्ध इनपुटों में भी बढ़ोतरी होती है तो उत्पादन के लिए रेलवे सेवाओं का उपयोग करते हैं। रेलवे का पश्च लिंकेज मालूम करने के लिए, सभी इनपुट क्षेत्रों से प्रयुक्त आउटपुट के कुल मान का प्रयोग किया जाता है (मैट्रिक्स के कॉलमों का जोड़) और रेलवे का अग्र लिंकेज निकालने के लिए, अन्य सभी क्षेत्रों द्वारा इनपुट के रूप में रेलवे के आउटपुट के कुल मान का उपयोग किया जाता है। यह विधि इसमें दी गई है: गूथो, जे एण्ड ए, प्लांटिंग, ''यूजिंग इनपुट-आउटपुट एनालिस्सिट टू मैजर यूएस इकानॉमिक स्ट्रक्चर में चेंज ओवर ए 24 ईयर पीरियड'', 2000 जिसे http://www.bea.gov/papers/pdf/strucv7all.pdf. पर देखा जा सकता है।

रेलवे को विनिर्माण और सेवाओं में प्रबल पश्च लिंकेज (अन्य क्षेत्रों से मांग में कमी) पेश आती है। (सारणी 6.1)। 2007-08 के आंकड़ों के आधार पर (नवीनतम वर्ष जिसके लिए इनपुट-आउटपुट तालिकाएं उपलब्ध हैं) यह प्रतीत होता है कि रेलवे के आउटपुट में 1 रुपए की बढ़ोतरी से अर्थव्यवस्था के आउटपुट में 3.3 रुपए की बढ़ोतरी होगी। समय के साथ इस बड़े गुणक में बढ़ोतरी हुई है और विनिर्माण क्षेत्र पर इसका सर्वाधिक प्रभाव पड़ा है। अत: ''मेक इन इंडिया'' के लिए रेलवे में निवेश अच्छा होगा।

इसके अलावा ऐसे सेक्टर हैं, जहां रेलवे सेवाएं उत्पादन का जरिया है (अग्र लिंकेज)। रेलवे में 1 रुपए की बढ़ोतरी से अल्प क्षेत्रों के उत्पादन में लगभग 2.5 रुपए की बढ़ोत्तरी होती है। समय के साथ इस अग्र लिंकेज प्रभाव में कमी आई है लेकिन यह रेलवे क्षेत्र में क्षमता की सोमिता के लिए काफी अधिक अंतजति है। जिसकी वजह से अन्य प्रकार के परिवहन पर निर्भर रहना पड़ता है।

अग्र और पश्च प्रभाव मिलकर रेलवे में निवेश का काफी बडा गुणक (5 की तुलना में) दर्शाते हैं।

ii) रेलवे में सरकारी निदेश समग्र आउटपुट और निजी निवेश के प्रभाव इकोनामीट्रिक विश्लेषण

हम पश्च-अग्र अनुमानों को अन्य औपचारिक इकनोमिट्रिक के साथ जोड़ सकते हैं। जो चित्र 6.8 में दर्शाया गयया है। वैक्टर त्रुटि सुधार मॉडल (वीईसीएम) से प्रेरित प्रतिक्रियाएं इंगित करती हैं कि रेलवे में निवेश का विनिर्माण और समग्र आउटपुट के स्तरों पर सकारात्मक और स्थिर प्रभाव होगा। ये इनपुट-आउटपुट सारणियों से उत्पन्न परिवारों की युक्ति करते हैं।

इन आंकड़ों से पता चलता है कि रेलवे में सार्वजनिक निवेश को आये अप्रत्याशित झटके का विनिर्माण और समेकित निर्गत (आउट पुट) पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। चित्र 6.8 में सांख्यिकीय प्रदर्शनों की एक मानक स्तरीय व्याख्या करने के लिए (उदाहरणार्थ रेलवे में सार्वजनिक निवेश में ईकाई परिवर्तन के लिए विनिर्माण और सकल परिणाम (आउट पुट) में ईकाई परिवर्तन) हम (2008) रामे में प्रदर्शित प्रक्रिया को अपनाते हैं;

सारणी 6.1 रेलवे; बैकवर्ड एण्ड फार्वड लिंकेज सेक्टर

सेक्टर	1993-94	1998-99	2003-04	2007-08
	बैकवर्ड लिंकेज			
कृषि	0.01	0.01	0.01	0.02
उद्योग	0.63	0.76	0.93	2.04
सेवाए	1.28	1.32	1.24	1.23
कुल बैकवर्ड लिंकेज	**1.92**	**2.08**	**2.19**	**3.29**
	फार्वड लिंकेज			
कृषि	0.13	0.12	0.16	0.07
उद्योग	2.15	2.03	2.11	1.18
सेवाए	1.13	1.13	1.16	1.19
कुल फार्वड लिंकेज	**3.41**	**3.28**	**3.44**	**2.45**

***स्रोत* : सीएसओ इनपुट-आउटपुट सारणियों पर आधारित परिकलन**

[14] निदर्श तौर पर ऐसे विश्लेषणों के लिए वैप्टर आटो रिग्रेशन (वीएआर) मॉडल का अन्य क्षेत्रों पर एक झटके के परिवर्तनशील प्रभाव के मूल्यांकन के लिए प्रयोग किया जाता है। हम इसके लिए चर का उपयोग करते हैं, रेलवे और विनिर्माण में सरकारी निवेश और समग्र आउटपुट के आंकड़े स्तरों में अस्थिर हैं। तथापि, ये सह-एकीकृत हैं और हम अल्पकाल एवं दीर्घकाल, दोनों में इनके संबंध में रूचि रखते हैं।

[15] रामे, ए. वैलरी आडेनटीफाइंग गवर्मेंट स्पैन्डिंग शाक्स: इटस ऑल इन द टाइमिंग-2009, राष्ट्रीय आर्थिक अनुसंधान ब्यौरो http://www.nber.org/papers/w15464. रेलवे में लोक निवेश के एक मानक विचलन झटके (एसडी) को एकमानक गुणक में परिवर्तन करने हेतु, निर्माण और कुल उत्पाद का रेलवे लोक निवेश के औसत अनुपात को लोच गुणांक (वाईसीएम से प्राप्त) के साथ भाग करते हैं।

चित्र 6.8: उत्पादन संबंधी रेलवे निवेश का प्रभाव

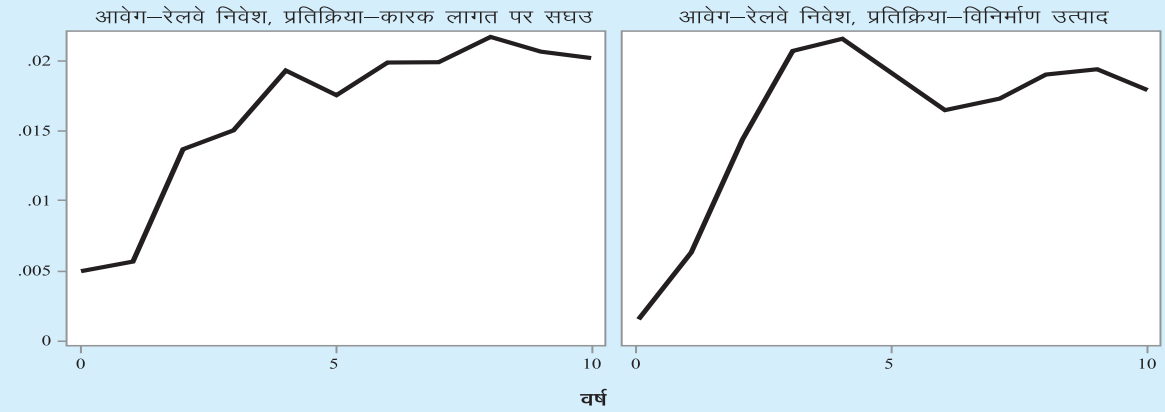

सारणी 6.2 : रेलवे सार्वजनिक निवेश : आउटपुट मल्टी प्लायर

वर्ष	चालेस्की आवेग प्रतिक्रिया (आई-एसडी)		रि-स्केल्ड मल्टीप्लायर्स	
	विनिर्माणन आउटपुट	औसत आउटपुट	विनिर्माणन आउटपुट	औसत आउटपुट
0	0.00	0.01	0.04	0.94
1	0.01	0.01	0.17	1.05
2	0.01	0.01	0.40	2.56
3	0.02	0.02	0.58	2.80
4	0.02	0.02	0.60	3.58
5	0.02	0.02	0.53	3.27
6	0.02	0.02	0.47	3.71
7	0.02	0.02	0.48	3.70
8	0.02	0.02	0.53	4.04
9	0.02	0.02	0.54	3.86
10	0.02	0.02	0.50	3.76

सारणी 6.2: रेलवे के बड़े सकारात्मक मल्टीप्लायर प्रभाव को दर्शाती है। उदाहरणार्थ, निवेश के तीन महीने बाद रेलवे निवेश में एक ईकाई की बढ़ोतरी होने से संचित मल्टीप्लायर में और सकल एवं विनिर्माण मल्टीप्लायर में क्रमश: 7.4 ईकाई और 1.2 ईकाई की बढ़ोत्तरी होती है। आर्थिक परिणामों और आई ओ विश्लेषण के पश्चात् यह सुरक्षित रूप से कहा जा सकता है। रेलवे मल्टीप्लायर का प्रभाव 5 या इससे अधिक है अर्थात् यदि रेलवे में 1 रुपए का निवेश होता है तो सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था में 5 रुपए की बढ़ोतरी होती है। ये संख्या लिंकेज एनलसिस के परिणामों से मेल रखती हैं।

6.3.4 कीमतों की वक्रता

अत: रेलवे को एक व्यवहार्य वाणिज्यिक संगठन बने रहना है जो कि राज्य की सहायता पर कम आश्रित है और यह न केवल अपना संसाधन स्वयं जुटाती है और विश्व स्तरीय यात्री सुविधायें प्रदान करती है बल्कि यह वाजिव किराये की दर पर माल परिवहन की भी सुविधा प्रदान करती है। भविष्य में राज्य का समर्थन सार्वभौमिक सेवादायित्व तक सीमित हो सकेगा जिसको कि रेलवे को पूरा करना होगा। पिछले कई सालों से यात्री किराया में कोई भी बढ़ोतरी नहीं की गई है जैसा कि उपभोक्ता मूल्य सूचकांक और यात्री दरों (चित्र 6.9 क) के बीच अंतराल से प्रकट होता है। इसके विपरीत मालभाड़ा दर सूचकांक थोक मूल्य सूचकांक के काफी नजदीक चल रहा है। (चित्र 6.9 ख)। माल भाड़ा सेवाओं के तहत् प्राप्त लाभ सब्सीडाइज्ड यात्री सेवाओं के प्रतिलाभ में है और भारतीय (पीपीपी समायोजित) माल भाड़ा दर विश्व में सबसे अधिक है। जैसाकि नीचे सारणी 6.3 में दर्शाया गया है।

चित्र 6.9क: उपभोक्ता मूल्य तथा यात्री दरों का सूचकांक (1993-94=100)

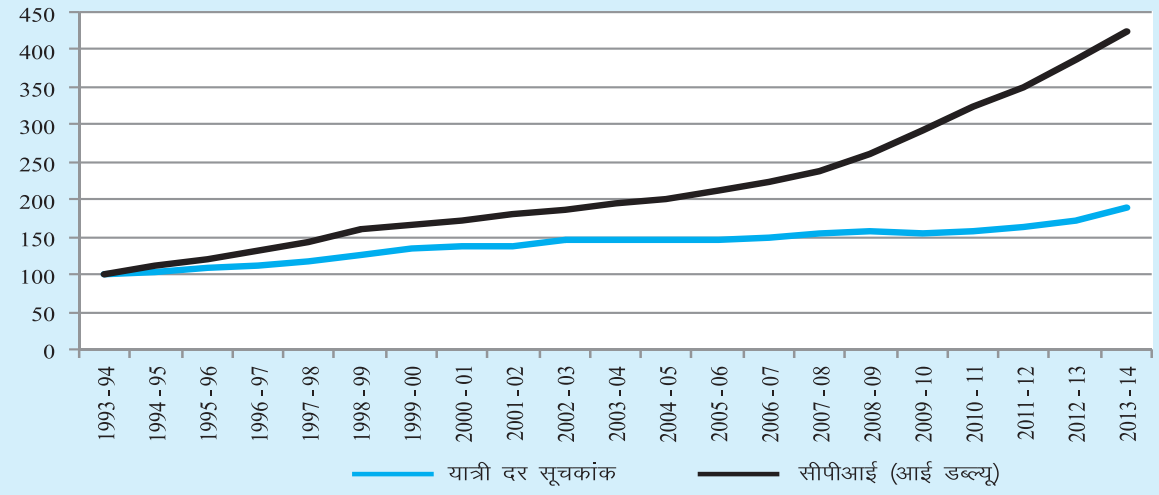

चित्र 6.9ख: थोक मूल्य तथा भाड़ा दरों का सूचकांक (1993-94=100)

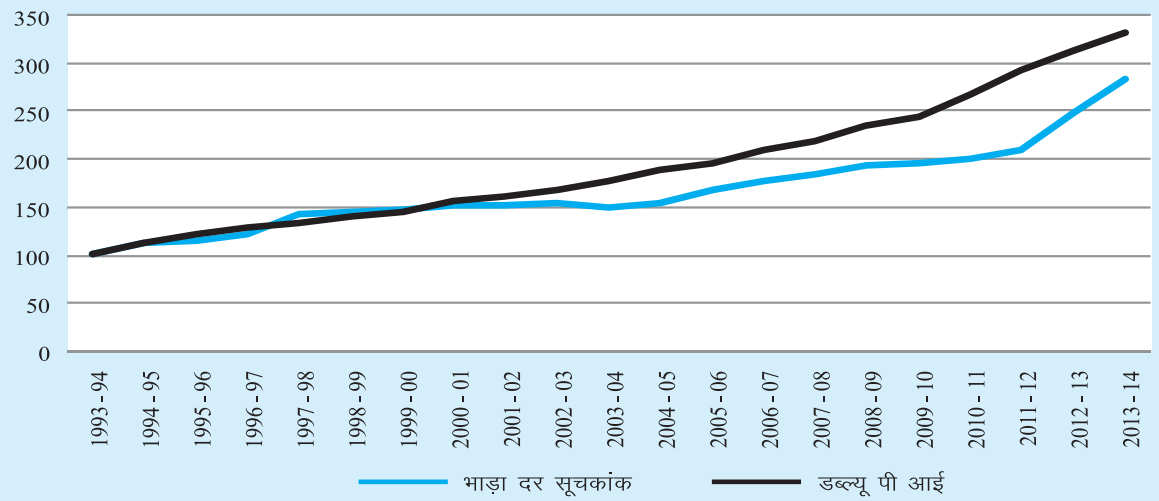

सारणी 6.3 : कुछ अर्थव्यवस्थाओं में यात्री तथा भाड़ा

देश	पैसंजर सेवा लाभ यूएस सेंट्स/यात्री-कि॰मी॰ पीपीपी के लिए समायोजित (भारत=1)	भाड़ा लाभ यूएस सेंट्स/ कुल टन-कि.मी. पीपीपी के लिए समायोजित (भारत=1)
भारत	1.0	1.00
चीन	2.7	0.58
शुरू	6.7	0.75

स्रोत : विश्व बैंक (2012) : रेलवे अन्तरराष्ट्रीय समीक्षा : भारत के मुद्दे (12वीं योजना दस्तावेज)

सारणी 6.3: भारतीय रेलवे की कीमतों में वक्रता को दर्शाती है। कीमतों को उपभोक्ताओं के लिए कम रखी जाए, इसके लिए माल भाड़े में बढ़ोतरी करने के लिए बाध्य होना पड़ता है। जो कि देशों के पारस्परिक मानदण्ड से अधिक है। पिछले कुछ वर्षों में मूल्य निर्धारण की राजनीतितक अर्थव्यवस्था और रेलवे के क्रियाकलाप का मतलब यह है कि नये निवेश लोकप्रिय परियोजनाओं में किये जाते हैं और यह उनकी कीमत पर होता है जिनसे संकेन्द्रण कम होता है और उत्पादकता बढ़ सकती है। पिछले भागों में चर्चा की गई समस्याओं के अलावा इस रूख से रेलवे की वाणिज्यिक क्रियाकलाप का ह्रास हुआ है जिसमें वित्तीय पूंजी निवेश के पर्याप्त संसाधन को जुटाने में रही असफलता भी शामिल है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि अक्षमता और दबावग्रस्त क्षमता के साथ-साथ क्रास सब्सीडाइजेशन और उच्च भाड़े के कारण भारतीय उद्योग की क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है।

सारणी 6.4 : भाड़ा ढुलाई; भारत और चीन में कोयले का मामला

		भारत	चीन	अनुपात (भारत/चीन)
1.	औसत दूरी (किमी.)	639*	653#	0.98
2.	लागत($)	0.021*	0.016^	1.31
3.	लागत (पीपीपी सन्दर्भ) ($ प्रति टन-किमी.)	0.064	0.029	2.21
4.	औसत माल गाड़ी द्वारा भार ढुलाई (टन)	1700*	3500#	0.49
5.	औसत मालगाड़ी स्पीड (किमी./घटा)	25	34^	0.74
		संकेतक		
6.	समय अकुशलता (घण्टा) (1/5)	25.6	19.2	**1.33**
7.	क्षमता (टन/घंटा)(4/6)	67	182	**0.37**
8.	लागत अकुशलता ($/टन)पीपीपी में (1x3)	40.89	19.23	**2.13**

टिप्पणी *: रेल मंत्रालय, भारत। #: सांख्यिकी वर्ष पुस्तक, चीन, 2013। ^:विश्व बैंक, औसत मालगाड़ी द्वारा 2011 में ढोऐ गए भार के आंकड़े।

प्रतिस्पर्धा पर प्रभाव को दर्शाने के लिए कोयले के लिए चीन की तुलना में भारतीय रेलवे के विशिष्ट सूचकों की तुलना करते हैं क्योंकि यह दोनों देशों में माल भाड़े का 40 प्रतिशत है। अन्य चीजों में प्रतिस्पर्धा कोयला ढुलाई की (जैसे इस्पात और बिजली संयंत्र), मात्रा और ऐसा करने में लगे समय पर निर्भर करता है। प्रत्येक देश के लिए एक टन कोयला ढुलाई की लागत कोयले द्वारा तय की गई औसत दूरी प्रति टन किलोमीटर की औसत लागत से गुणा करके निकाला जाता है। कोयले की ढुलाई में लगी औसत दूरी को औसत गति से भाग करके इसमें लगा समय निकाला जाता है। और मालभाडा रेल द्वारा ले जाने वाले भार को लिए गए समय से भाग करके क्षमता (प्रति घंटा ले जाने वाला टन) निकाली जाती है। जैसाकि उपयुक्त सारणी 6.4 में प्रतिवेदित अनुपात दर्शाता है, भारत की तुलना में चीन प्रति घंटा कोयले का तिगुना भार ढोता है। चीन की तुलना में भारत में कोयला दुगुनी दर से ढोया जाता है और ऐसा करने में 1.3 गुना ज्यादा समय लगता है। यद्यपि इन अनियमितताओं को सुधारने के लिए दरों के समायोजन हेतु सीमित गुंजाइश है।

विभिन्न प्रकार के यात्रियों और माल भाड़ा ट्रेफिक के लिए नई कीमतों की लोच के आकलन के आधार पर यात्री और माल भाड़ा दरों का कुछ साधारण अवलोकन किया गया है। जिसमें घटते बढ़ती कीमत की लोच के कारण विभिन्न

तालिका 6.5 : मांग की लोच कीमत

	प्रतिशत
कुल यात्री	**14.4**
उपनगरीय यात्री	23.2
उपनगरेतर यात्री	13.4
उच्च वर्ग के यात्री	9.8
मेल और एक्सप्रेस श्रेणी के यात्री	13.0
साधारण यात्री	14.5
कुल माल भाड़ा	**55.4**
सीमेंट	37.4
कोयला	47.9
उर्वरक	44.1
खनिज लोहा	17.9
पेट्रोलियम और पेट्रो उत्पाद	91.4
कच्चा लोहा अयस्क	33.3

स्रोत : वित्त मंत्रालय के अनुमान

यात्रियों और माल भाड़े के प्रकारों में मूल्य विभेदीकरण की सम्भावना है। (तालिका 6.5)

तालिका से यह स्पष्ट होता है कि माल भाड़ा ट्रैफिक यात्री ट्रैफिक से अधिक मूल्य संवेदनशील है। यात्री ट्रैफिक श्रेणी में उच्च श्रेणी के यात्री मूल्य के प्रति कम संवेदनशील है। और अन्य माल श्रेणी की तुलना में मूल्य बढ़ोत्तरी की दशा में बेहतर स्थिति में रखा जा सकता है। हमारी गणना के

[16] औसत टैफिक दरों (प्रासंगिक स्रोत) पर औसत यात्री कीमतों (एमओएसपीआई अवसंरचना आंकड़ा रिपोर्ट) पर यात्री किलोमीटर नियंत्रण के जरिए लोचशीलता को प्राप्त किया जा सकता है। उन्हें सांकेतिक रूप में माना जाना चाहिए क्योंकि विश्लेषण कुछ टिप्पणियों पर आधारित हैं और परिवहन प्रकार के चयन को प्रभावित करने वाले अन्य कारकों को नियंत्रित नहीं करते।

अनुसार: नागर विमान यातायात लोचशीलता से रेलवे कीमत में 5.7 प्रतिशत का अन्तर आता है, जो इस बात का द्योतक है कि रेलवे किराए में बढ़ोत्तरी होने पर भी उच्च श्रेणी के यात्री आसानी से हवाई यात्रा की ओर उन्मुख नहीं होते हैं। उसी प्रकार भाड़ा श्रेणियों में पेट्रोलियम उत्पादों को कीमत के मामले में बहुत संवेदनशील माना जाता है। दूसरी तरफ लौह अयस्क के मामले में भी आसानी से मूल्य परिवर्तन के बारे में प्रतिक्रिया नहीं आती है।

नीतिगत सिफारिशें मुख्य पहलू

- रेलवे में अधिक सार्वजनिक निवेश भारतीय उत्पादन की कुल वृद्धि और प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देगा।
- अंशत: ये बड़े लाभ रेलवे में कम निवेश से प्राप्त होते हैं। चीन ग्यारह गुणा निवेश करता है और कम निवेश का भीड़-भाड़, सीमित क्षमता, खराब सेवाओं तथा कमजोर वित्तीय हालत का पता चलता है।
- रेलवे को लम्बी अवधि के व्यापारिक रूप से वयवहार्य होना चाहिए। लम्बे समय में रेलवे के लिए सार्वजनिक सहायता इन तक सीमित होनी चाहिए। (i) निगमीकृत रेलवे द्वारा निवेश के लिए इक्विटी सहायता (ii) सार्वभौमिक सेवा दायित्व का वित्त पोषण। अंतरिम रूप से रेलवे की सरकारी सहायता की गुंजाइश है; आम बजट के द्वारा सहायता को मिलाकर।
- तथापि, लोक समर्थन को स्पष्ट रूप से महत्वपूर्ण सुधारों के साथ जोड़ा जाना चाहिए, रेलवे की संरचना; उनके द्वारा व्यापारिक कार्यों को अपनाया जाना, ट्रेफिक नीतियों का यौक्तिकीकरण और तकनीक।

भारत में क्या निर्माण करें? विनिर्मित उत्पाद या सेवाएं?[1]

07
अध्याय

''औद्योगिक क्रांति के बाद से कोई भी देश औद्योगिक शक्ति बने बिना प्रमुख अर्थव्यवस्था नहीं बन पाया है।''

ली कुआन यूई, वर्ष 2005 में नई दिल्ली में जवाहरलाल स्मारक व्याख्यान देते हुए

7.1 परिचय

सिंगापुर के इस विद्वान की बात को दोहराते हुए प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने भारतीय विनिर्माण क्षेत्र के पुनरुद्धार को नई सरकार का प्रमुख नीतिगत उद्देश्य बना दिया है, जिसमें इस क्षेत्र को दीर्घावधिक विकास के अग्रदत का दर्जा दिया गया है। मेक इन इंडिया अब न सिर्फ एक दिलचस्प नारा है बल्कि अब एक फ्लैगशिप योजना है। लेकिन सवाल यह उठता है ''भारत में बनाया क्या जाए?''

विकास के सम्बन्ध में आरंभिक विचारधारा लुईस (1954) के दो क्षेत्रीय मॉडल में उद्भूत हुई, हालांकि यह पूर्णतया विशिष्ट नहीं थी। इसमें क्षेत्रगत परिवर्तन के विचार पर बल दिया गया: कृषि/परंपरागत क्षेत्र से संसाधनों को हटाकर विनिर्माण/गैर परंपरागत क्षेत्र में लगाना। इस क्रम-अनुक्रम के बारे में किसी को संदेह नहीं था (उत्तरोक्त निश्चित रूप से पूर्वोक्त से श्रेष्ठ था) और इसलिए इस परिवर्तन की वांछनीयता के बारे में किसी को संदेह नहीं था।

हालांकि पिछले दो दशकों में विकास के बारे में प्रचलित विचारधाराओं में क्षेत्रगत परिवर्तन पर चर्चा अब हटकर अधिक स्पष्ट विकास परिप्रेक्ष्य की ओर मुड़ गई हैं, संरचनागत परिवर्तन का महत्व भी बहाल होना भी शुरू हो गया है-लेकिन इसमें विकास सम्बन्धी दृष्टिकोण को पूर्णत: त्यागा नहीं गया है। इन दो परिप्रेक्ष्यों के संयोग की व्याख्या रोड्रिक (2013 और 2014) में की गई है।

निम्नलिखित समीकरण पर विचार करें।

$$\hat{y} = \beta(\ln y^*(\theta) - \ln y) + (\pi_M - \pi_T)d\alpha_M + \alpha_M\pi_M\beta_M(\ln y_M^* - \ln y_M)$$

इस समीकरण के तीन भाग हैं। पहला, प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद का विकास ($\hat{y}$ द्वारा प्रदर्शित) परंपरागत सशर्त समाभिरूपता परिप्रेक्ष्य में देखा जा सकता है जिसमें अनेक मूलभूत तत्वों (नीतियां, मानव पूंजी, खुलापन, संस्थाएं आदि) पर निर्भर करते हुए फ्रंटियर ($y^*(\theta)$) तक पहुंचा जा सकेगा। लेकिन ये धीमी प्रक्रिया है क्योंकि परिभाषा के मुताबिक मूलभूत तत्वों में परिवर्तन बहुत धीमा होता है। इसके अलावा, यह सशर्त समाभिरूपता फ्रेमवर्क अपर्याप्त है क्योंकि इसमें विकास के चमत्कार अथवा उसमें तेजी की व्याख्या नहीं की जा सकती- चीन ऐसे अनेक मूलभूत तत्वों का विशिष्ट अपवाद है।

इसलिए इस फ्रेमवर्क के पूरक के तौर पर स्पष्ट संरचनागत परिवर्तक घटकों की जरूरत होती है। इन बातों को समीकरण के दूसरे और तीसरे भाग में शामिल किया गया है। दूसरे भाग में कम उत्पादकता अर्थात् परंपरागत (T) क्षेत्रों से उच्च उत्पादकता वाले आधुनिक क्षेत्रों (M) तक संरचनागत परिवर्तन की बात कही गयी है, जहां (π_i) का अर्थ है क्षेत्र (i) में उत्पादकता और (α_M) का अर्थ है आधुनिक क्षेत्र में रोजगार का हिस्सा। यह विशिष्ट द्वैत मॉडल है जिसका अर्थ है कि आर्थिक विकास, परिभाषा के मुताबिक संसाधनों को निम्न से हटाकर उच्च उत्पादकता क्षेत्रों में लगाने की

[1] जब यह अध्याय लिखागया था, तब से सीएसओ ने भारत में विनिर्माण और अन्य क्षेत्रों के नए अनुमान के आकार प्रकाशित कर दिए हैं। वे स.घ.उ. में विनिर्माण के हिस्सेदारी के स्तर में वृद्धि इंगित करते हैं, हांलांकि जिन तीन वर्षों के लिए नए अनुमान दिए गए हैं, इस हिस्से में अभी भी गिरावट है। यहां तक कि बढ़ा हुआ स्तर ''आधारिक'' कारणों से न होकर ''सांख्यिकीय अधिक है। इस लिए हम इस अध्याय के निष्कर्षों को मुख्यत: वैध होने की उम्मीद करते हैं लेकिन जब तक नए आंकड़ों से विश्लेषण नहीं किया जाता, ये निष्कर्ष निश्चित नहीं हो सकते।

प्रक्रिया है जिसके द्वारा समस्त अर्थव्यवस्था में उत्पादकता के स्तरों में बढ़ोतरी होती है।

समीकरण का तीसरा भाग नया है और इसमें उच्च उत्पादकता क्षेत्र में बिना शर्त समाभिरूपता की प्रक्रिया शामिल है। मूलत: एक बार संसाधनों के इस क्षेत्र में आ जाने के बाद वे बढ़ती उत्पादकता का बिना शर्त अथवा ऑटोमेटिक वृद्धि का अनुभव करते हैं। आधुनिक क्षेत्र की समाभिरूपता विकास दर द्वारा प्रदर्शित)। इससे सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था में उत्पादकता के स्तरों में और वृद्धि होती है।

दूसरे शब्दों में, संसाधनों को परंपरागत क्षेत्र से हटाकर नए क्षेत्रों में लगाने के दो भाग हैं: पहला, संघटनात्मक लाभ, जो अर्थव्यवस्था के भार को कम उत्पादकता से उच्च उत्पादकता क्षेत्रों में हटाकर, संपूर्ण अर्थव्यवस्था की उत्पादकता का बढ़ाने में प्राप्त होता है; दूसरा, अनुवर्ती गतिशील लाभ क्योंकि इन संसाधनों में तीव्र उत्पादकता विकास संभव हो पाता है। रोड्रिक (2013) का योगदान यह दिखाने में रहा है कि विनिर्माण क्षेत्र वाकई इस तीव्र विकास को प्रदर्शित करता है अथवा फ्रंटियर तक बिना शर्त समाभिरूपता संभव करता है; अर्थात अपेक्षाकृत गरीब देशों में विनिर्माण और कम उत्पादनकारी विनिर्माण गतिविधियां औसतन समय के साथ-साथ अधिक तीव्र विकास अनुभव करती हैं।

जैसे ही हम इस फ्रेमवर्क को अपनाते हैं, यह सवाल उठ खड़ा होता है: *क्या ये संघटनात्मक और गतिशील लाभ विनिर्माण क्षेत्र तक ही सीमित हैं?* दूसरे शब्दों में, हालांकि संरचनागत परिवर्तन के बारे में विचारधाराओं का पहला चरण क्षेत्रों के क्रम की निश्चितता से तय हुआ था, आज उस निश्चितता को लेकर कुछ कम आधार है क्योंकि अब यह तुलना कृषि और विनिर्माण क्षेत्र की नहीं है बल्कि विनिर्माण और सेवा क्षेत्र की है (अथवा कम से कम कुछ सेवा उप क्षेत्रों में)।

यह अध्याय नए संरचनागत परिवर्तन और विशेषकर विनिर्माण और सेवा क्षेत्र की तुलना के सवाल पर कुछ रोशनी डालने का विनम्र प्रयास है।

7.2 क्षेत्रगत वांछनीय विशेषताएं जो संरचनागत परिवर्तन के प्रेरक के रूप में काम कर सकती हैं

इस सवाल का समाधान करने के लिए भारत का एक विषय के तौर पर अध्ययन किया जाता है क्योंकि भारत में विनिर्माण क्षेत्र का अपेक्षाकृत खराब निष्पादन रहा है और सेवाओं का अपेक्षाकृत मजबूत निष्पादन रहा है-जो कुछ अर्थों में उप-सहारा अफ्रीकी देशों के कार्य निष्पादन को प्रतिबिंबित करता है (ग़नी और ओ कॉनेल, 2014)

ली कुआन यूई निश्चित रूप से किसी सच्चाई पर पहुंच रहे थे जब उन्होंने भारतीय विकास मॉडल को चुनौती दी। पारंपरिक रूप से अल्प विकास से बचने के तीन तरीके हैं: भू-विज्ञान, भूगोल, और ''जींस'' (निम्न कौशल के विनिर्माण का कोड)। हालिया वर्षों में पश्चिम एशियाई देशों, बोट्सवाना, और चिली ने आज और बीते समय में आस्ट्रेलिया एवं कनाडा ने अपने जीवन स्तरों को बढ़ाने के लिए भूमि द्वारा प्रदान किये गये प्राकृतिक संसाधनों का दोहन किया। कुछ द्वीपों (बारबाडोस, मॉरीशस और कैरेबियन में अन्य द्वीप) की सफलता के पीछे उनके द्वारा अपने भूगोल का दोहन करके इन द्वीपों में पर्यटन का विकास करके उच्च विकास दरें प्राप्त किया जाना है।

पूर्वी एशियाई देशों ने अपनी सफलता के आरंभिक दौर में आर्थिक विकास को प्रेरित करने के लिए कम कौशल वाले विनिर्माण, विशेषकर वस्त्र उद्योग और परिधान (चीन, थाइलैंड, इंडोनेशिया, मलेशिया आदि) का सहारा लिया। इसके बाद वे अधिक परिष्कृत विनिर्माण की ओर मुड़े लेकिन ''जींस'' ने आरंभिक समृद्धि के साधन का काम किया। कोई भी देश सतत् विकास के लिए आरंभिक चरण में अपेक्षाकृत कौशल प्रधान गतिविधियों को इस्तेमाल करके अल्पविकास से नहीं बच पाया है और यही प्रयास भारत का भी है।

दूसरे शब्दों में कहें तो भारत अपने ''प्राकृतिक'' तुलनात्मक लाभ की विपरीत दिशा में जाता प्रतीत हो रहा है, जो इसके प्रचुर अकुशल और कम कुशलता प्राप्त श्रम बल के कारण ''जींस'' किस्म के बचाव में निहित है। इसकी बजाय, भारत मे पारंपरिक नीतिगत विकल्पों और प्रौद्योगिकीय घटनाओं की मेहरबानी से ऐसे लाभ प्राप्त किए अथवा सृजित किए जो सूचना प्रौद्योगिकी और बिज़नेस प्रोसेस आउटसोर्सिंग जैसी अपेक्षाकृत कुशल गतिविधियों में निहित था (कोछड़ और अन्य, 2007)।

भारतीय अनुभव, जो अभी भी हासिल किए जाने की प्रक्रिया में है, यह प्रश्न उठाता है कि क्या संरचनागत परिवर्तनों के लिए विनिर्माण क्षेत्र का विकास का प्रेरक होना जरूरी है। लेकिन इससे पहले हम संरचनागत परिवर्तन की क्षमता के संदर्भ में वैकल्पिक क्षेत्रों के साथ विनिर्माण की तुलना करना शुरू कर दें, ऐसे क्षेत्रों की वांछनीय विशेषताओं पर चर्चा करना उपयोगी होगा।

दरअसल, रोड्रिक (2013) फ्रेमवर्क के आधार पर यह तर्क दिया जाता है कि ऐसी पांच विशेषताएं होती हैं जो किसी क्षेत्र को संरचनागत परिवर्तन के प्रेरक के रूप में कार्य करने देती हैं और इस तरह अर्थव्यवस्था को तीव्र, सतत् और समावेशी विकास की ओर ले जाती हैं:

1. *उत्पादकता का उच्च स्तर:* जैसा कि ऊपर बताया गया है, आर्थिक विकास का अर्थ है निम्न उत्पादकता से हट कर उच्च उत्पादकता वाली गतिविधियों से जुड़ना।

2. *बिना शर्त समाभिरूपता* (कम उत्पादकता वाले क्षेत्रों में तीव्रतर उत्पादकता वृद्धि): इस पर पहले भी चर्चा की जा चुकी है। आपको याद होगा कि समाभिरूपता यह सुनिश्चित करती है कि प्रासंगिक क्षेत्र ''एस्केलेटर'' के रूप में कार्य करे जिससे स्वत: ही क्षेत्रगत और इस तरह संपूर्ण अर्थव्यवस्था में उत्पादकता का स्तर ऊंचा हो। वस्तुत: दो प्रकार की बिना शर्त समाभिरूपता के बीच अंतर किया जा सकता है;

   क. घरेलू समाभिरूपता: भारत, चीन, ब्राजील और इंडोनेशिया जैसे बड़े देशों में हम आदर्शत: देश के *भीतर* ही समाभिरूपता देखना चाहेंगे। अर्थात् देश के अपेक्षाकृत निर्धन भागों में, उत्पादकता की वृद्धि समृद्ध भागों की तुलना में अधिक तीव्र होनी चाहिए। अन्यथा देश के भीतर ही गंभीर क्षेत्रीय असमानता पैदा हो सकती है।

   ख. अंतरराष्ट्रीय समाभिरूपता: जहां सभी देशों में मौजूद कम उत्पादनकारी आर्थिक यूनिटें (भले ही वे फर्में, क्षेत्र अथवा संपूर्ण अर्थव्यवस्थाएं हों) अंतरराष्ट्रीय सीमा (सर्वाधिक उत्पादनकारी देशों में स्थित) से जुड़ी यूनिटों से मुकाबला करें।

3. *विस्तार:* यह सुनिश्चित करने के लिए कि समाभिरूपता से प्राप्त गतिशील उत्पादकता लाभ संपूर्ण अर्थव्यवस्था में व्याप्त हो जाएं, यह जरूरी है कि समाभिरूपता का अनुभव कर रहे क्षेत्र संसाधनों को खपायें। समाभिरूपता के साथ हो रहे संकुचन अर्थव्यवस्था व्यापी लाभ सुनिश्चित नहीं कर पाएंगे क्योंकि संबंधित क्षेत्र की परिधि से बाहर देश के संसाधन अधिक उच्च, समाभिरूप उत्पादक विकास नहीं कर पाएंगे। यदि वाकई समावेशी विकास किया जाना है तो, औद्योगिक क्षेत्र के मामले में समाभिरूपता के साथ स्वाभाविक औद्योगीकरण होना चाहिए न कि समयपूर्व औद्योगीकरण का कम हो जाना।

4. *तुलनात्मक लाभ के अनुरूप होना:* ये सुनिश्चित करने के लिए कि विकास हो और इसे और तेजी से बढ़ते क्षेत्रों के लाभ समस्त श्रमशक्ति के साथ साझा किया जाए, बढ़ते क्षेत्र की कौशल संबंधी जरूरतों और देश के कौशल भंडार के बीच तालमेल होना चाहिए। उदाहरणत: भारत जैसे श्रमशक्ति प्रचुर देश में, समाभिरूप होता क्षेत्र अपेक्षाकृत कम कौशल वाली गतिविधि में होना चाहिए ताकि अधिकाधिक संसाधन समाभिरूपता का लाभ उठा सकें।[2]

5. *विक्रेयता:* परंपरागत तौर पर जिन देशों में विकास के दौर आते रहे हैं, उन्होंने विशेष रूप से विनिर्माण क्षेत्र में निर्यातों में तीव्र वृद्धि देखी है (जॉनसन, ऑस्ट्री और सुब्रह्मण्यम (2010))। इसके विपरीत, तीव्र विकास कदाचित् ही घरेलू बाज़ार पर आधारित रहा हो। इसका एक कारण यह हो सकता है कि व्यापार, प्रौद्योगिकी अंतरण और सीखने सिखाने के एक तंत्र के रूप में काम करता है जिससे संबंधित उद्योगों पर भी प्रभाव पड़ सकता है। (हॉस्मैन, हुआंग और रोड्रिक (2007)। शायद अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि विशेषकर व्यापार और निर्यात विकसित होते क्षेत्र के लिए अनियंत्रित मांग का स्रोत होते हैं। यह विशेषकर भारत जैसे बड़े देश के लिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह संभावना है कि इसके विस्तार से भारतीय निर्यातों को खपाने और/अथवा व्यापार की शर्तों को बदलने में कारोबारी देशों की सीमित राजनीति और आर्थिक क्षमता के विरुद्ध जाया जा सकता है।

विनिर्माण और सेवा (उप क्षेत्रों द्वारा विभाजित सेवाओं सहित) के इन दो क्षेत्रों को अब भारत में पांच आयामों के संदर्भ में मूल्यांकित किया जाता है।[3]

---

[2] यह चिंता का सबब हो सकता है कि किसी देश की विशिष्टीकरण पद्धति (कुशल अथवा कम कुशल कार्यकलाप में) आगे चलकर देश के कौशल भंडार पर असर डाल सकती है। विशेषकर, ब्लैंचर्ड और ऑलनी (2013) दर्शाते हैं कि कम कौशल के उत्पादों का बढ़ता निर्यात मानव पूंजी की उपलब्धियों के अपेक्षाकृत कम औसत स्तरों की ओर ले जाता है। ऐसा स्टोलपर-सैमुअलसन प्रभाव की वजह से होता है। फिर भी इस अध्याय में हम यह दृष्टिकोण अपना रहे हैं कि उपर्युक्त क्रियाविधि विकास प्रक्रिया में दूसरे स्तर का प्रभाव रखेगी। वस्तुत:, पूर्वी एशिया का अनुभव यह बताता है कि देशों के लिए संभव है कि वे कम कौशल वाले लेकिन गतिशील कार्यकलापों की विशिष्टता हासिल करके शुरूआत करें और बाद में जब विकास प्रक्रिया अपने बूते पर शुरू हो जाए तो अधिक कौशल प्रधान उत्पादन प्रक्रिया की ओर बढ़ें।

[3] कृपया ध्यान दें: इस अध्याय में इस्तेमाल डाटा स्रोतों से संबंधित सूचना के लिए वर्किंग पेपर-अमिरापु और सुब्रह्मण्यन (2015) को देखें।

7.3 विनिर्माण क्षेत्र का स्कोर कार्ड

7.3.1 उत्पादकता स्तर

सारणी 7.1 में दो समयावधियों अर्थात 1984 और 2010 में विनिर्माण क्षेत्र सहित विभिन्न भारतीय क्षेत्रों में उत्पादकता के स्तर (प्रति कामगार मूल्यवर्धन के रूप में मापित) की तुलना की गई है। इसकी कई विशेषताएं सामने आई हैं। पहले तो यह कि भारत में विनिर्माण के बारे में कुछ भी कहना भ्रामक हो सकता है क्योंकि *अपंजीकृत* विनिर्माण–जो बहुत कम उत्पादकता स्तर वाली गतिविधि है–और *पंजीकृत* विनिर्माण जो उच्च उत्पादकता (7.2 गुणा अधिक) वाला क्षेत्र है, के बीच स्पष्ट अंतर है। संरचनागत परिवर्तन की दृष्टि से, सामान्य विनिर्माण न हो कर *पंजीकृत* विनिर्माण ही है जिसमें संरचनागत परिवर्तन लाने की क्षमता है।

दूसरे, पंजीकृत विनिर्माण क्षेत्र में उत्पादकता का स्तर न सिर्फ अपंजीकृत विनिर्माण क्षेत्र के मुकाबले अधिक है बल्कि यह अर्थव्यवस्था के अधिकतर अन्य क्षेत्रों के मुकाबले भी अधिक है और यह पूर्ण अर्थों में बाज़ार मुद्रा दरों पर 7800 अमरीकी डॉलर के स्तर पर भी अधिक है और पीपीपी विनिमय दरों के लगभग तीन गुना है। यदि समस्त भारतीय अर्थव्यवस्था को पंजीकृत विनिर्माण क्षेत्र में लगा दिया जाए तो भारत कोरिया जितना समृद्ध हो जाएगा।

तीसरे, पंजीकृत निर्माण और शेष अर्थव्यवस्था के बीच ये अंतर 1984 में भी मौजूद थे (भले ही इस हद तक नहीं थे)–इस अवधि में अधिक उत्पादकता वृद्धि (प्रतिवर्ष लगभग 5 प्रतिशत) ने इन अंतरों को सिर्फ बढ़ाया ही है।

इस तरह उत्पादकता के उच्च स्तर संबंधी पहले मापदंड पर पंजीकृत विनिर्माण क्षेत्र अच्छे नंबर लेकर उत्तीर्ण हुआ है।

7.3.2 घरेलू समाभिरूपता

चित्र 7.1 में दर्शाया गया है कि पंजीकृत विनिर्माण की विशेषता बिना शर्त घरेलू समाभिरूपता होती है। यहां प्रेक्षण की इकाई राज्य-स्तर का उद्योग है लेकिन लगभग यही परिणाम अधिक समग्र स्तरों पर (भारत के प्रमुख राज्यों में) और कम समग्र स्तरों पर (फैक्टरियों में) देखने पर भी हासिल होते हैं।[5] मोटे तौर पर, लगभग (–) 2.5 प्रतिशत की आरंभिक उत्पादकता के लॉग पर परावर्तन गुणांक यह बताता है कि कोई भी राज्य किसी ऐसे राज्य से दो गुना समृद्ध होता है उसकी उत्पादकता की औसत विकास दर 2.5 प्रतिशत धीमी होती है– इस तथ्य को देखते हुए कि

सारणी 7.1: भारतीय अर्थव्यवस्था में समय-समय पर क्षेत्रवार श्रम उत्पादकता

	स्तर (स्थिर 2005 रू.)		वृद्धि दर (प्रतिशत)	
	1984	2010	1984-2010	2000-2010
सेवाएं	61,978	213,014	4.9	6.3
विनिर्माण	48,817	125,349	3.7	4.2
पंजीकृत विनिर्माण (एमओएसपीआई)	117,984	360,442	4.4	5.4
अपंजीकृत विनिर्माण	28,548	50,312	2.2	1.2
सेवा उपक्षेत्र				
व्यापार, होटल और रेस्तरां	56,284	144,108	3.7	7.3
परिवहन, भंडारण और संचार	68,823	172,058	3.6	4.5
वित्तीय सेवाएं और बीमा	198,584	706,297	5.0	-1.6
स्थावर संपदा और कारोबारी सेवाएं आदि	1,012,017	875,073	-0.6	3.2
लोक प्रशासन और रक्षा	41,154	231,109	6.9	7.0
निर्माण	62,773	95,866	1.6	2.1

स्रोत : **अमिरापु और सुब्रह्मण्यन (2015)**

[5] हमारे परिणाम भी विभिन्न (कमतर) समय अवधियों और उत्पादकता के भिन्न-भिन्न मापकों के प्रति अनुक्रियाशील हैं। ये और कई अन्य परिणाम अमिरापु और सुब्रह्मण्यम (2015) में सूचित किए गए हैं। ये उल्लेखनीय है कि अपंजीकृत विनिर्माण भारत के विभिन्न राज्यों में बिना शर्त समाभिरूपता प्रदर्शित नहीं करते।

चित्र 7.1[4]: पंजीकृत विनिर्माण में घरेलू समाभिरूपता-राज्य-3 अंकीय उद्योग नियत प्रभाव, 1981-2008 वाला उद्योग स्तर

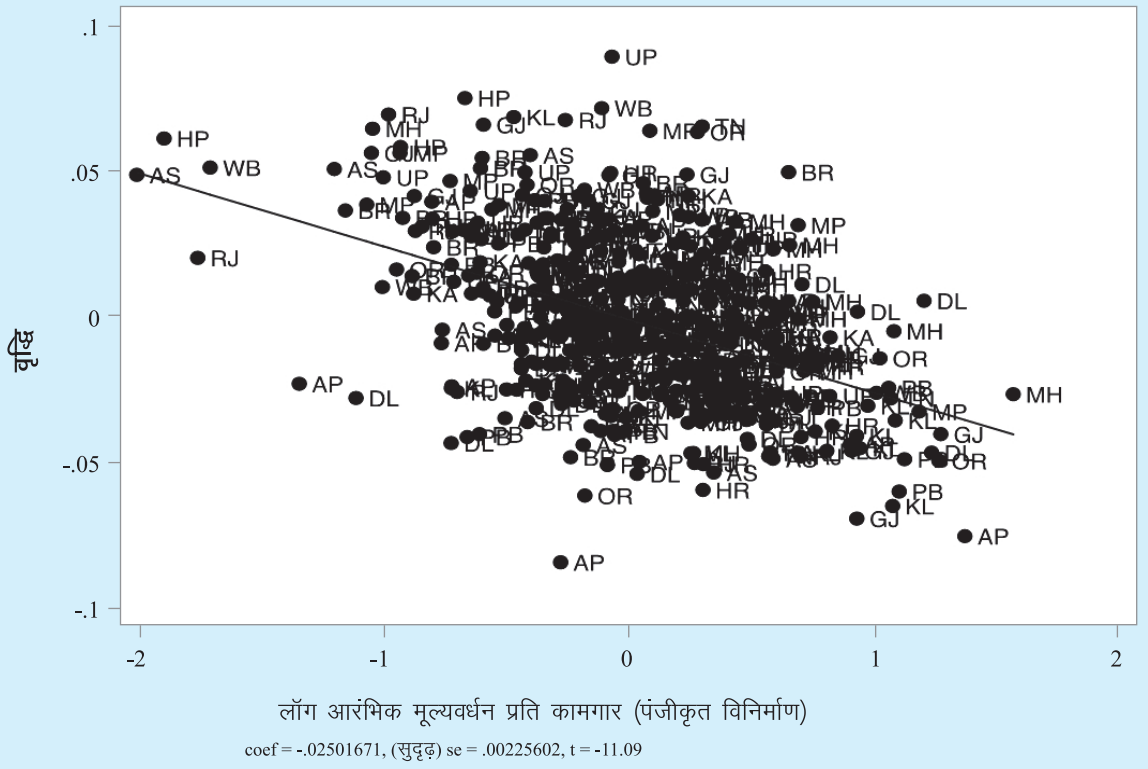

स्रोत : **अमिरापु और सुब्रह्मण्यन (2015)**

1984–2010 की अवधि के बीच उत्पादकता की औसत दर लगभग 4.4 प्रतिशत थी, यह आंकड़ा काफी अधिक है।

7.3.3 अंतरराष्ट्रीय समाभिरूपता

पंजीकृत विनिर्माण के संबंध में ऐसा प्रतीत होता है कि भारत में राज्य और फर्में भारतीय फ्रंटियर तक मिलकर पहुंच रही हैं लेकिन इसका तब तक कोई महत्व नहीं होगा जब तक वे अंतरराष्ट्रीय विनिर्माण फ्रंटियर तक न पहुंचे। क्या ऐसा हो रहा है?

रोड्रिक (2013) दर्शाते हैं कि विनिर्माण क्षेत्र में देशों और क्षेत्रों का बिना शर्त समाभिरूपता हो रही है, लेकिन भारत दो अर्थों में इस संबंध में नकारात्मक अपवाद है; पहले, भारत में औसत विनिर्माण क्षेत्रों में जो श्रम उत्पादकता वृद्धि दिखाई देती है वह विश्व के औसत विनिर्माण क्षेत्र की वृद्धि से 14 प्रतिशत कम है। दूसरे, भारतीय उद्योग औसत (.005 प्रतिशत) से कहीं कम धीमी दर पर समाभिरूप होते हैं या कहें तो न के बराबर। इसके विपरीत, चीन एक सकारात्मक अपवाद है जो औसत से कहीं अधिक श्रम उत्पादकता वृद्धि दर्ज कर रहा है और वैश्विक फ्रंटियर से अधिक तेजी से मिल रहा है।[6]

[4] यह ध्यान दें कि यह आंकड़ा ''आंशिक अवशिष्ट प्लॉट'' है: यह आरेख में दो परिवर्तनीय कारकों के बीच संबंध प्रदर्शित करता है जबकि उपयुक्त होने पर अन्य परिवर्तनीय कारकों को नियंत्रित करता है (इस मामले में तीन अंकीय उद्योग नियत संपत्ति)।

[6] अधिक औपचारिक दृष्टि से, जब भारतीय डमी और चीनी डमी को अलग से जोड़ा जाता है और समाभिरूपता गुणांक के साथ अंत:क्रिया की जाती है तो भारतीय डमी का गुणांक -.14 है (टी-1.97 की सांख्यिकी) और समाभिरूपता के साथ अंत:क्रिया की गई भारतीय डमी का गुणांक .017 है (टी-2.05 की सांख्यिकी)। चीन के तद्नुरूप गुणांक हैं 0.166 (टी-2.65 की सांख्यिकी) और -.011 (टी-1.4 की सांख्यिकी)। हम ये परिणाम देने के लिए डानी रोड्रिक के आभारी हैं।

भारत में पंजीकृत विनिर्माण क्षेत्र इस तरह बहुत अच्छा प्रदर्शन नहीं करता रहा है।

7.3.4 विस्तार अथवा समय-पूर्व औद्योगीकरण का कम होना

यह एक अस्वाभाविक तथ्य है कि विकास की प्रक्रिया में औद्योगीकरण का दौर और उसके बाद औद्योगीकरण कम होने का दौर होता है: कोई भी देश पहले संसाधनों की बढ़ती हिस्सेदारी को अनुभव करता है- विशेषकर श्रमशक्ति जो औद्योगिक क्षेत्र को समर्पित होती है, उसके बाद सेवा क्षेत्र अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है जिससे औद्योगिक क्षेत्र में रोजगार का हिस्सा अपने चरम से कम हो जाता है। लेकिन हालिया वर्षों में औद्योगीकरण में कमी कुछ जल्दी ही होती दिखायी दे रही है, अर्थात गरीब देश औद्योगीकरण के अपने वर्तमान चरम स्तर पर होते हुए, औद्योगीकरण और आय के कम स्तरों पर ही पहुंच रहे हैं (रोड्रिक 2014; अमिरापु और सुब्रह्मण्यन 2015)।

अब भारत की क्या बात करें? औद्योगीकरण कम होने की प्रक्रिया विशेष रूप से भारत में तीन कारणों से खास है। हमारे सामने बढ़ती आबादी का विकराल रूप है जो हर महीने तंत्र में लाखों युवाओं को रोजगार के अवसर ढूंढने के लिये झोंक रहा है। चीन में बढ़ती श्रम लागत, कम कौशल वाले देशों जैसे भारत के लिए निवेश के प्रतिस्थापन गंतव्य के रूप में अवसर पैदा करती है। और सत्ता में आने वाली नई सरकार विनिर्माण सफलता के रूप में गुजरात की छवि भारत में दोहराने की संभावना तलाश रही है।

लेकिन गंभीर तथ्य यह भी है कि भारत में औद्योगीकरण कम हो रहा है। वस्तुत: भारत में औद्योगीकरण कम होने की प्रक्रिया को ऐसा कहना भारतीय अनुभव को गरिमा प्रदान करने के समान है, जिसे यदि सही कहें तो यह समयपूर्व औद्योगीकरण का कम होना है क्योंकि भारत पहले ही पर्याप्त औद्योगीकृत नहीं हुआ था।

इस मुद्दे पर बात करने से पहले चित्र 7.2 को देखते हैं जिसमें विनिर्माण प्रेरित विकास करने वाले दक्षिण कोरिया में समय-समय पर कुल रोजगार में विनिर्माण के क्षेत्र का हिस्सा दिखाया गया है। वर्ष 2005 पीपीपी डॉलर में दक्षिण कोरिया का स.घ.उ. भी कई वर्षों की श्रृंखला के साथ दिखाया गया है। इस चित्र में विशिष्ट आकार दिखाया गया है: विनिर्माण में रोजगार का हिस्सा लगभग 5 प्रतिशत के बहुत कम स्तर पर शुरू होता है और समय बीतने पर लगभग 30 प्रतिशत तक पहुंचने पर स.घ.उ. के काफी ऊंचे स्तर पर पहुंचने के बाद गिरना शुरू हो जाता है।

इसके विपरीत, चित्र 7.3 में भारतीय अनुभव दर्शाया गया है। इस चित्र में समय-समय पर भारत के कुल उत्पादन और रोजगार में पंजीकृत विनिर्माण का हिस्सा दर्शाया गया है। (उसी अक्ष पर जिस पर कोरिया का आरेख आधारित है)। सामान्य रुझान स्थिर हैं जिसके साथ पिछले कुछ वर्षों में, जिनके संबंध में आंकड़े उपलब्ध हैं, गिरावट का रुख देखा जा रहा है। दूसरे शब्दों में, स्पष्टरूप से उल्टा यू आकार, जो क्रॉस-सैक्शन और कोरिया की विशेषता है, भारत के मामले में विशेष रूप से गायब है।

चित्र 7.2: 1960-2010 के समय से कुल रोजगार में विनिर्माण का हिस्सा: दक्षिण कोरिया (2005 में पीपीपी प्रति व्यक्ति स.घ.उ. चुनिंदा वर्षों के लिए दर्शाता है।)

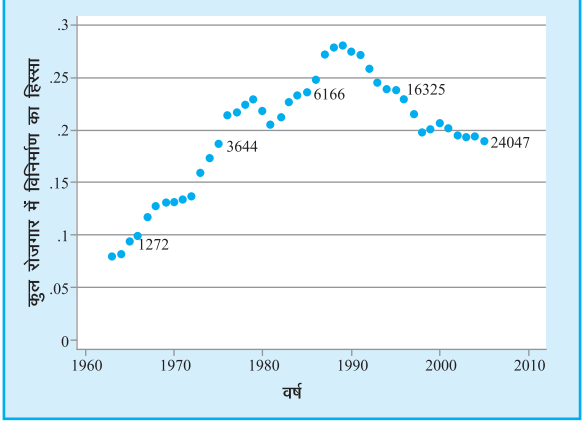

स्रोत : अमिरापु और सुब्रह्मण्यन (2015)

चित्र 7.3: 1980-2010 के समय से कुल उतपादन और रोजगार में पंजीकृत विनिर्माण का हिस्सा अखिल भारत

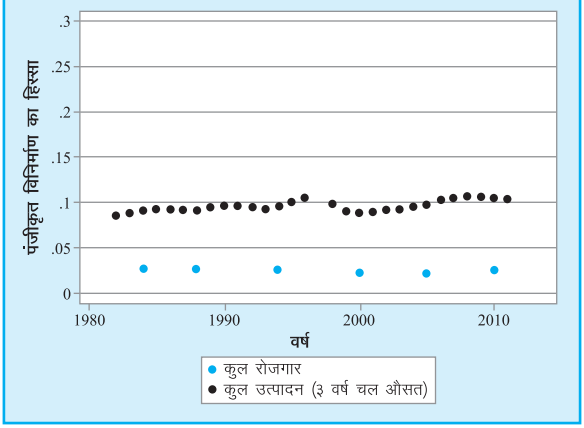

स्रोत : अमिरापु और सुब्रह्मण्यन (2015)

लेकिन भारतीय राज्यों में प्रतिरूप विकास क्या हुआ है? सारण 7.2क और 7.2ख में वह वर्ष जिसमें पंजीकृत निर्माण की हिस्सेदारी अपने चरम पर पहुंची (पहले मूल्यवर्द्धन और बाद में रोजगार संदर्भ में), पंजीकृत विनिर्माण की चरम हिस्सेदारी (मूल्यवर्द्धन और रोजगार संदर्भ में) और चरम स्तर पर पंजीकृत निर्माण से जुड़े प्रतिव्यक्ति स.घ.उ. को दिखाया गया है।

इन सारणियों से कुछ बातें सामने आती हैं। गुजरात एकमात्र ऐसा राज्य है जिसमें स.घ.उ. के हिस्से के रूप में पंजीकृत विनिर्माण 20 प्रतिशत से अधिक हो गया और वह पूर्वी एशिया में प्रमुख विनिर्माण सफलता वाले देशों द्वारा हासिल स्तरों के कुछ-कुछ करीब पहुंच गया। यहां तक कि महाराष्ट्र और तमिलनाडु में भी शीर्ष पर विनिर्माण का स्तर राज्य के स.घ.उ. का केवल लगभग 18-19 प्रतिशत ही था। रोजगार के संदर्भ में शीर्ष हिस्सेदारी और भी मामूली है: किसी भी बड़े भारतीय राज्य में पिछले तीस वर्षों में पंजीकृत विनिर्माण से 6.2 प्रतिशत से अधिक रोजगार प्राप्त नहीं किया गया है और कई प्रमुख राज्य इससे आधे से भी कम पर ही रह गये। यहां तक कि गुजरात में भी पंजीकृत विनिर्माण में रोजगार कुल रोजगार का लगभग केवल 5 प्रतिशत ही रहा है, जबकि 1984 और 2010 के बीच पंजीकृत विनिर्माण के रोजगार की वार्षिक वृद्धि 1.8 प्रतिशत रही है (इस अवधि में कुल रोजगार की वृद्धि दर 2.4 प्रतिशत से कहीं कम)।

दूसरे, लगभग सभी राज्यों में (हिमाचल प्रदेश और गुजरात को छोड़कर), मूल्यवर्द्धन के हिस्से के रूप में पंजीकृत विनिर्माण में अब गिरावट हो रही है और अधिकतर राज्यों में ऐसा बहुत

सारणी 7.2क : भारतीय राज्यों में समय पूर्व औद्योगीकरण का कम होना (मूल्यवर्धन के अनुसार)

राज्य	वह वर्ष जिसमें पंजीकृत विनिर्माण में मूल्यवर्धन शीर्ष पर पहुंचा	शीर्ष मूल्यवर्धन में पंजीकृत विनिर्माण का हिस्सा (प्रतिशत)	शीर्ष प्रतिव्यक्ति एनएसडीपी (2005 भारतीय रुपए)	शीर्ष प्रतिव्यक्ति जीएसडीपी (2005 अमरीकी डॉलर पीपीपी)
गुजरात	2011	22.7	52,291	5,357
महाराष्ट्र	1986	18.9	15,864	1,400
तमिलनाडु	1990	18.1	15,454	1,417
हरियाणा	2003	17.3	32,869	3,309
हिमाचल प्रदेश	2011	16.4	46,207	4,733
कर्नाटक	2008	14.7	34,752	3,523
बिहार	1999	13.6	9,215	905
मध्य प्रदेश	2008	12.5	18,707	1,897
पश्चिम बंगाल	1982	12.3	9,348	909
ओडिशा	2009	12.0	22,779	2,353
समग्र भारत	2008	10.7	30,483	3,091
पंजाब	1995	10.5	25,995	2,506
केरल	1989	10.3	14,418	1,322
आंध्र प्रदेश	1996	10.0	16,904	1,641
उत्तर प्रदेश	1996	10.0	11,679	1,134
असम	1987	10.0	12,904	1,164
दिल्ली	1994	8.5	39,138	3,742
राजस्थान	2001	8.3	15,816	1,522

स्रोत : अमिरापु और सुब्रह्मण्यन (2015)

सारणी 7.2ख : भारतीय राज्यों में समय पूर्व औद्योगीकरण का कम होना (रोजगार के अनुसार)

राज्य	वह वर्ष जिसमें पंजीकृत विनिर्माण में मूल्यवर्धन शीर्ष पर पहुंचा	शीर्ष मूल्यवर्धन में पंजीकृत विनिर्माण का हिस्सा (प्रतिशत)	शीर्ष प्रतिव्यक्ति एनएसडीपी (2005 भारतीय रुपए)	शीर्ष प्रतिव्यक्ति जीएसडीपी (2005 अमरीकी डॉलर पीपीपी)
तमिलनाडु	2010	6.2	44,033	4,633
दिल्ली	1988	6.1	31,531	2,989
हरियाणा	2010	6.1	54,861	5,773
पंजाब	2010	5.4	44,611	4,694
गुजरात	1984	5.4	15,167	1,343
महाराष्ट्र	1984	4.8	15,212	1,347
पश्चिम बंगाल	1984	4.7	10,371	919
हिमाचल प्रदेश	2010	3.8	42,998	4,524
केरल	1994	3.3	18,926	1,809
कर्नाटक	2010	3.3	36,214	3,811
आंध्र प्रदेश	2010	2.8	36,228	3,812
समग्र भारत	1984	2.7	11,800	1,045
असम	1984	2.5	13,238	1,172
उत्तर प्रदेश	1988	1.6	9,372	888
बिहार	1988	1.5	4,768	452
राजस्थान	2010	1.4	23,908	2,516
मध्य प्रदेश	1994	1.4	13,191	1,261
ओडिशा	2010	1.4	22,677	2,386

स्रोत : **अमिरापु और सुब्रह्मण्यन (2015)**

समय से हो रहा है। अनेक राज्यों के उत्पादन में विनिर्माण की शीर्ष हिस्सेदारी 1990 के दशक में रही (आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु) और यहां तक कि 1980 के दशक में भी रही (महाराष्ट्र)। दिलचस्प बात यह है कि रोजगार में शीर्ष हिस्सेदारी कुछ अलग रास्ता ही अपना रही है जिसमें अधिकतर राज्यों में कम स्पष्ट गिरावट देखी गयी है। फिर भी, अधिकतर राज्यों में समय बीतने पर रोजगार की हिस्सेदारी में सामान्य वृद्धि नहीं देखी गई है (एकमात्र अपवाद है हिमाचल प्रदेश, तमिलनाडु, हरियाणा और संभवत: कर्नाटक)। अनेक राज्य, जहां वर्ष 2010 में शीर्ष वर्ष देखा गया है (जैसे कि आंध्र प्रदेश, राजस्थान और ओडिशा) में ऐसी रोजगार हिस्सेदारी देखी जा रही है जो अधिकांशत: सपाट है, अर्थात् न तो सापेक्ष वृद्धि और न ही गिरावट देखी गयी है।

तीसरे, और संभवत: सबसे गंभीर सच्चाई है कि विनिर्माण अपेक्षाकृत गरीब राज्यों में भी कम हो रहा है: ऐसे राज्य जो प्रभावी रूप से कभी औद्योगीकृत नहीं हुए (पश्चिम बंगाल और बिहार), वहां भी औद्योगीकरण कम होने की प्रक्रिया शुरू हो गई है।

कुछ तुलनाएं वाकई ज्ञानवर्धक हैं। भारत के सबसे बड़े राज्य उत्तर प्रदेश की ही बात करें। यह राज्य लगभग 1200 डॉलर के प्रतिव्यक्ति राज्य घरेलू उत्पाद (2005 क्रयशक्ति क्षमता डॉलर में मापित) के स्तर पर 1996 में स.घ.उ. के 10 प्रतिशत पर उत्पादन में विनिर्माण की हिस्सेदारी पर पहुंच गया था। इंडोनेशिया जैसे देश ने 5800 डॉलर के प्रतिव्यक्ति स. घ.उ. के स्तर पर 29 प्रतिशत का शीर्ष विनिर्माण हिस्सा हासिल किया था। ब्राजील ने 7100 डॉलर के प्रतिव्यक्ति स. घ.उ. के स्तर पर 31 प्रतिशत का शीर्ष विनिर्माण हिस्सा हासिल किया था। इसलिए उत्तर प्रदेश के औद्योगीकरण में उत्तर प्रदेश का अधिकतम हिस्सा ब्राजील और इंडोनेशिया के मुकाबले लगभग एक तिहाई था; और यह गिरावट इन देशों के आय स्तरों के 15-20 प्रतिशत स्तर पर शुरू हुई।

इस तरह, हमने यह दिखाया है कि कुछ ही राज्यों को छोड़कर सभी राज्यों में भारतीय विनिर्माण क्षेत्र में निश्चित रूप से विकास नहीं हो रहा है और संभवत: यह संकुचित भी हो रहा है। अपेक्षा 2 ख और 3 को विनिर्माण क्षेत्र द्वारा पूरा न किया जाने का एक संभावित परिणाम चीन के विपरीत यह होगा कि समग्र प्रतिव्यक्ति स.घ.उ. में भारत के राज्यों के बीच समाभिरूपता का कोई प्रमाण नहीं है। चीनी प्रांतों के संदर्भ में ऐसा हुआ है कि प्रतिव्यक्ति स.घ.उ. का आरंभिक स्तर जितना कम रहा है, उसके बाद का विकास उतना ही तीव्र हुआ है, जिससे गरीब प्रांत समृद्ध प्रांतों के बराबरी पर आ जाते हैं। भारत में ऐसी कोई समाभिरूपता नहीं हुई है क्योंकि गरीब राज्यों द्वारा औसतन समृद्ध राज्यों के मुकाबले तीव्र गति से विकास करने की संभावना नहीं है (अमिरापु और सुब्रह्मण्यम 2014)। इसलिए भारत में क्षेत्रीय असमानताएं बनी हुई हैं।

यदि विनिर्माण क्षेत्र में उत्पादकता ने घरेलू समाभिरूपता दिखाते हुए संसाधनों को आकृष्ट किया होता तो यह क्षेत्र गरीब राज्यों में भी विकसित होता जिससे इन राज्यों में आय के समग्र स्तरों में बढ़ोतरी हुई होती तथा भारत में आय वितरण में व्याप्त अंतर को कम करने में मदद मिलती। इसकी बजाय प्रतीत यह होता है कि विनिर्माण क्षेत्र प्रगति का अग्रदूत बनने में असफल रहा है।

इस बात के कई स्पष्टीकरण दिये जा सकते हैं कि क्यों विनिर्माण क्षेत्र भारत में विकास का प्रेरक नहीं बन पाया है। इन तथ्यों को चार मुख्य श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है: श्रम बाजार में व्याप्त विकृतियां; पूंजी बाजार में व्याप्त विकृतियां; भूमि बाजार में व्याप्त विकृतियां; और भारत की प्राकृतिक तुलनात्मक लाभ तथा कौशल प्रधान कार्यकलापों से हटकर अनुपयुक्त विशेषज्ञता। अमिरापु और सुब्रह्मण्यम (2015) अंतिम स्पष्टीकरण के समर्थन में कुछ प्रमाण प्रस्तुत करते हैं।

7.3.5 तुलनात्मक लाभ के साथ अनुरूपण

जैसा कि पहले तर्क दिया गया है किसी क्षेत्र द्वारा परिवर्तन की संभावनाएं पैदा करने के लिए इसमें न सिर्फ उत्पादकता के उच्च स्तर होने चाहिए बल्कि इसमें शेष अर्थव्यवस्था से लेकर संसाधन खपाने की भी शक्ति होनी चाहिए। लेकिन ऐसा करने के लिए क्षेत्र द्वारा निविष्टियों का उपयोग देश के

सारणी 7.3 : भारतीय अर्थव्यवस्था में उप क्षेत्रों के अनुसार औसत कौशल का स्तर (एनएसएसओ 2004-5)

क्षेत्र और उपक्षेत्र	कम से कम प्राथमिक शिक्षा प्राप्त कर्मचारियों का हिस्सेदारी	कम से कम माध्यमिक शिक्षा प्राप्त कर्मचारियों का हिस्सेदारी
कृषि, वानिकी और मात्स्यिकी	0.445	0.139
खनन	0.501	0.221
समग्र विनिर्माण	0.628	0.248
पंजीकृत विनिर्माण (10 कामगारों से कारखाने में कामगार)	0.768	0.432
समग्र सेवाएं	0.778	0.478
परिवहन और संचार	0.715	0.330
थोक और खुदरा व्यापार	0.721	0.346
वित्तीय सेवाएं और बीमा	0.976	0.836
स्थावर संपदा और कारोबारी सेवाएं	0.935	0.775
लोक प्रशासन और रक्षा	0.897	0.665
शिक्षा	0.963	0.888
स्वास्थ्य और समाज सेवा	0.924	0.767
बिजली, गैस और जल	0.856	0.558
निर्माण	0.518	0.144

स्रोत : अमिरापु और सुब्रह्मण्यन (2015)

तुलनात्मक लाभ के अनुरूप होना चाहिए। इससे उत्पादन के प्रचुर कारक (आम तौर पर अकुशल श्रमबल) को उत्पादकता वृद्धि और समाभिरूपता से लाभ तो होगा ही, और ऐसा करने में विकास न सिर्फ शीघ्र और सतत् होगा बल्कि समावेशी भी होगा। दूसरे शब्दों में, गतिशील क्षेत्र कम से कम आरंभ में अपेक्षाकृत अकुशल श्रम प्रधान होना चाहिए। क्या यह भारतीय विनिर्माण के क्षेत्र के बारे में सच है? कोछड़ और अन्य (2006) ने पाया है कि भारतीय विनिर्माण क्षेत्र असामान्य तौर पर, कुशल श्रम प्रधान है। तुलनात्मक लाभ के साथ गतिशीलता को अनुरूप बनाने का आकलन करने का एक और साधारण पैमाना है–अन्य क्षेत्रों के संबंध में विनिर्माण क्षेत्र की सापेक्ष कौशल सघनता। सारणी 7.3 में कुछ आकड़े दिये गये हैं। 2004/5 के एनएसएसओ के रोजगार और बेरोजगारी सर्वेक्षण से भारतीय अर्थव्यवस्था के प्रमुख क्षेत्रों (और उपक्षेत्रों) के संबंध में कम से कम प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा वाले कर्मचारियों की हिस्सेदारी आकलित की गई है।

यह पाया गया है कि पंजीकृत निर्माण एक ऐसा क्षेत्र है जो अपेक्षाकृत कुशल श्रम प्रधान है। जैसा कि सारणी 7.3 में दिखाया गया है कम से कम माध्यमिक शिक्षा प्राप्त कामगारों का हिस्सा कृषि, खनन और अपंजीकृत निर्माण की तुलना में पंजीकृत के विनिर्माण में काफी अधिक है और सेवा के अनेक उपक्षेत्रों में भी अधिक है। इस बात पर आश्चर्य नहीं होना चाहिए। इस क्षेत्र में उच्च श्रम उत्पादकता (सारणी 7.1) कम से कम आंशिक रूप से कार्यबल के बेहतर कौशल का परिणाम है। तथापि इससे यह पता चलता है कि पंजीकृत विनिर्माण अपेक्षा संख्या 4 को पूरा नहीं करता। इस क्षेत्र की कौशल गहनता भारत के तुलनात्मक लाभ की तर्ज पर नहीं है।

7.4 सेवा क्षेत्र का स्कोर कार्ड

यह स्कोर कार्ड विश्लेषण भारत के सेवा क्षेत्र के लिए भी दोहराया जा सकता है। लेकिन ऐसा करने से पहले यह स्वीकारना महत्वपूर्ण होगा कि समग्र रूप में सेवाएं विश्लेषण की उपयोगी श्रेणी नहीं होती क्योंकि इसमें आर्थिक गतिविधियों के अलग-अलग और विभिन्न किस्म के रूप शामिल होते हैं जिनमें सरकारी सेवाएं और निर्माण जो गैर विक्रेय होती हैं, से लेकर वित्त और करोबारी सेवाएं जो मुख्यत: विक्रेय होती हैं तथा कुछ ऐसी गतिविधियां जो श्रम प्रधान होती हैं तथा दूर संचार जैसी अन्य सेवाएं भी शामिल होती हैं जो अत्यधिक पूंजी और कुशल श्रम प्रधान होती हैं। सेवा क्षेत्र के किसी भी सार्थक विश्लेषण में विभिन्न सेवा उपक्षेत्रों के बीच अंतर अवश्य किया जाना चाहिए- हालांकि पृथक्करण की सीमा निश्चित रूप से आंकड़ों की उपलब्धता से निर्धारित की जाएगी।

हम सारणी 7.4 में दिखाये गये छ: विभिन्न उप क्षेत्रों का अध्ययन कर रहे हैं और पंजीकृत विनिर्माण के लिए ऊपर किये गये विश्लेषण को दोहराएंगे।

सारणी 7.4: आर्थिक उप-क्षेत्रों की रोजगार हिस्सेदारी में वृद्धि, 1984-2010

	उत्पादकता का आरंभिक स्तर 1984	रोजगारी की हिस्सेदारी		वार्षिक वृद्धि (प्रतिशत)
	1984	1984	2010	1984-2010
पूंजीकृत विनिर्माण	117,984	0.027	0.026	-0.2
समग्र सेवाएं	61,978	0.201	0.219	0.3
व्यापार, होटल और रेस्तरां	56,284	0.074	0.093	0.9
परिवहन, भण्डारण और संचार	68,823	0.028	0.038	1.2
वित्तीय सेवाएं और बीमा	198,584	0.006	0.007	0.7
स्थावर संपदा और कारोबारी सेवाएं आदि	1,012,017	0.002	0.011	7.1
लोक प्रशासन और रक्षा	41,154	0.030	0.018	-1.9
निर्माण	62,773	0.031	0.080	3.7

स्रोत: अमिरापु और सुब्रह्मण्यन (2015)

7.4.1 उत्पादकता स्तर

सारणी 7.4 में इन सेवा उप-क्षेत्रों तथा विनिर्माण (पंजीकृत और अपंजीकृत दोनों) के उत्पादकता के स्तर के संबंध में तुलनात्मक आंकड़े दिये गये हैं। पहला बात जो दिखायी देती है, वह सेवाओं में विस्मयकारी विविधता का होना है जिससे पृथक्करण किये जाने का आधार मजबूत बनता है। उदाहरणत: 1984 में, स्थावर संपदा और कारोबारी सेवा क्षेत्र में उत्पादकता का स्तर लोक प्रशासन (मूलत: सरकारी) से 25 गुना अधिक था और खुदरा व्यापार की तुलना में लगभग 20 गुना अधिक था। 6 सेवा उप-क्षेत्रों में से वित्तीय सेवाओं और कारोबारी सेवा के दो क्षेत्रों में उत्पादकता के स्तर पंजीकृत विनिर्माण से अधिक रहे हैं।

7.4.2 घरेलू समाभिरूपता

इस बात की जांच की जा रही है कि क्या पिछले तीन दशकों में भारत में सेवा उप-क्षेत्रों में बिना शर्त समाभिरूपता व्याप्त थी। उल्लेखनीय है कि लगभग सभी सेवा उप-क्षेत्रों में और अन्य समय अवधियों (यहां सूचित नहीं किया गया है) में बिना शर्त समाभिरूपता पायी गयी है। वस्तुत: अधिकतर सेवा उप-क्षेत्रों में घरेलू समाभिरूपता की रफ्तार पंजीकृत विनिर्माण (लगभग 2 प्रतिशत) के समान ही रही है और कुछ मामलों में काफी अधिक भी रही है। उदाहरणत:, स्थावर संपदा और कारोबारी सेवाएं, पंजीकृत विनिर्माण की समाभिरूपता के मुकाबले दो गुनी दर पर समाभिरूप हुई हैं।

7.4.3 अंतरराष्ट्रीय समाभिरूपता

यूनिडो के आंकड़ों को इस्तेमाल करके रोड्रिक (2013) यह प्रमाणित करते हैं कि संगठित विनिर्माण क्षेत्र के उद्योगों ने श्रम संबंधी उत्पादकता में लगातार वैश्विक समाभिरूपता प्रदर्शित की, हालांकि भारतीय विनिर्माण उद्योग औसत के मुकाबले बहुत धीमी रफतार से वैश्विक फ्रंटियर पर पहुंच पाये, वह भी मुश्किल से। अब सेवा उप-क्षेत्रों का क्या हुआ?

विश्व बैंक के वैश्विक विकास संकेतकों से प्राप्त क्षेत्रगत उत्पादकता के आंकड़ों को इस्तेमाल करते हुए, ग़नी और ओ कॉनेल यह तर्क देते हैं कि समग्र तौर पर सेवाओं ने विनिर्माण के समान ही और कहीं-कहीं अधिक समाभिरूपता दिखायी है- कम से कम हालिया समय में तो दिखायी ही है (लगभग 1990 से 2005)। यह एक दिलचस्प निष्कर्ष है, लेकिन विशेषरूप से इस विश्लेषण के लिए सेवाओं का पृथक्करण किया जाना चाहिए क्योंकि क्षेत्रगत विशेषताओं जैसे कि विक्रेयता में बड़े अंतर होने के कारण उप-क्षेत्रों के अनुसार समाभिरूपता की पद्धति भिन्न हो सकती है।

सारणी 7.5: विभिन्न देशों में सेवा उप-क्षेत्रों में बिना शर्त समाभिरूपता (1990-2005), परावर्तन में आरम्भिक उत्पादकता के लॉग के प्रति उत्पादकता वृद्धि शामिल है

	(1)	(2)	(3)	(4)	(6)
आरंभिक उत्पादकता का लॉग	**व्यापार, होटल और रेस्तरां**	**परिवहन भण्डारण और और संचार**	**वित्त, बीमा और स्थावर संपदा**	**सामुदायिक, सामाजिक और वैयक्तिक सेवाएं**	**निर्माण**
व्यापार, होटल और रेस्तरां	-0.007 (0.005)				
परिवहन भण्डारण और संचार		-0.00 (0.008)			
वित्त, बीमा और स्थावर संपदा			-0.031*** ((0.007)		
सामुदायिक, सामाजिक और वैयक्तिक सेवाएं				-0.030*** ((0.008)	
निर्माण					-0.026*** (0.008)
स्थिर	0.061 (0.053)	0.105 (0.083)	0.325*** ((0.076)	0.315** (0.094)	0.269*** (0.085)
प्रेक्षण	27	27	27	9	27

कोष्ठकों में मानक चूक दी गई है।

* $p < 0.10$, ** $p < 0.05$, *** $p < 0.01$. ***स्रोत:*** **अमिरापु और सुब्रह्मण्यन (2015)।**

सारणी 7.5 में ग्रोनिनगन ग्रोथ एंड डेवलपमेंट सेंटर (जीजीडीसी) से प्राप्त आंकड़ों को इस्तेमाल करते हुए 1990 से 2005 की अवधि के दौरान सेवा उप-क्षेत्रों द्वारा अंतरराष्ट्रीय समाभिरूपता के परिणामों की सूचना दी गई है। हालांकि आंकड़ों की उपलब्धता के कारण इस विश्लेषण में देशों की संख्या बहुत सीमित है[7], फिर भी यह परिणाम बहुत दिलचस्प हैं। हम यह पाते हैं कि कुछ सेवा उप-क्षेत्रों (वित्त, बीमा और स्थावर संपदा; सामुदायिक, सामाजिक वैयक्तिक सेवाएं; और निर्माण) में जबर्दस्त अंतरराष्ट्रीय समाभिरूपता देखी गई है जबकि अन्य उप-क्षेत्रों (व्यापार, होटल और रेस्तरां; परिवहन, भंडारण और संचार में ऐसा नहीं देखा गया)। आश्चर्य तो इस बात का है कि समाभिरूपता दिखाने वाले कतिपय क्षेत्रों में ऊपरी तौर पर, निर्माण जैसे कुछ गैर-कारोबारी क्षेत्र भी शामिल हैं।

इसलिए अब तक के निष्कर्ष यही बताते हैं कि सब नहीं-लेकिन अनेक सेवा उप-क्षेत्र उच्च उत्पादकता वृद्धि, घरेलू समाभिरूपता और अंतरराष्ट्रीय समाभिरूपता की अपेक्षाएं पूरी करते हैं।

7.4.4 सेवाओं का विस्तार?

यह प्रमाण प्रस्तुत किया जा चुका है कि भारत में विनिर्माण से प्राप्त रोजगार और उत्पादन में उसकी हिस्सेदारी में पिछले तीस वर्षों में न के बराबर परिवर्तन हुआ है। नीचे दी गई सारणियों में भारत में सेवाओं के लिए अनुरूप साक्ष्य-समग्र रूप में और विशेष उप-क्षेत्रों के संबंध में प्रमाण दिए गए हैं।

पंजीकृत निर्माण के विपरीत-समग्र सेवाओं से प्राप्त उत्पादन की हिस्सेदारी में पिछले तीस वर्षों में जबर्दस्त वृद्धि हुई है जो स.घ.उ. के लगभग 35 प्रतिशत से बढ़कर 50 प्रतिशत से अधिक हो गई है। इसके विपरीत, रोजगार में समग्र सेवाओं की हिस्सेदारी में बढ़ोतरी कहीं अधिक साधारण रही है (सारणी 7.6 देखें)। लेकिन पंजीकृत निर्माण की तुलना में स्पष्ट अंतर दिखायी देता है। समग्र सेवाओं में रोजगार वृद्धि पंजीकृत विनिर्माण की तुलना में कहीं अधिक तेजी से बढ़ी और अनेक सेवा उप-क्षेत्रों जैसे परिवहन, स्थावर संपदा और निर्माण में रोजगार वृद्धि में भारी तेजी देखी गई। दूसरे शब्दों में सेवाएं समृद्धि का एक अधिक महत्वपूर्ण स्रोत बनती जा रही हैं और हालांकि इस क्षेत्र में तीव्र रोजगार वृद्धि पैदा नहीं की है, इस क्षेत्र और अनेक सेवा उप-क्षेत्रों ने विनिर्माण की तुलना में अधिक तीव्र रोजगार वृद्धि सृजित की है।

7.4.5 तुलनात्मक लाभ के साथ अनुरूपण?

हमने ऊपर यह तर्क दिया था कि भारत जैसे कम कुशल श्रम प्रधान देश में किसी भी क्षेत्र को इस मुख्य संसाधन को इस्तेमाल करना चाहिए ताकि विकास और संरचनागत परिवर्तन की बड़ी संभावनाएं बन सकें। हमने यह भी देखा कि पंजीकृत विनिर्माण काफी अधिक कुशल श्रम प्रधान क्षेत्र है जिसमें औसत शैक्षिक उपलब्धि काफी अधिक है।

इसी सारणी में यह भी दिखाया गया है कि समग्र तौर पर सेवाएं किसी भी अर्थ में कम कौशल प्रधान नहीं हैं: औसतन, सेवा क्षेत्र में 78 प्रतिशत कामगार कम से कम प्राथमिक शिक्षा प्राप्त हैं (पंजीकृत विनिर्माण में 77 प्रतिशत) और कम से कम 48 प्रतिशत कामगार माध्यमिक शिक्षा प्राप्त हैं (पंजीकृत विनिर्माण में 43 प्रतिशत)। इसके अलावा अनेक सेवा उप-क्षेत्रों जिनमें (1) बैंकिंग और बीमा, (2) स्थावर संपदा और कारोबारी सेवाएं, (3) लोक प्रशासन (4) शिक्षा

सारणी 7.6: भारत: सेवाएं बनाम विनिर्माण स्कोर कार्ड

	विशेषता	पंजीकृत विनिर्माण	व्यापार, होटल और रेस्तरां	परिवहन भण्डारण और संचार	वित्तीय सेवाएं और बीमा	स्थावर संपदा और कारोबारी सेवाएं आदि	निर्माण
1.	उच्च उत्पादकता	हां	नहीं	कुछ विशेष नहीं	हां	हां	नहीं
2क.	बिना शर्त घरेलू समाभिरूपता	हां	हां	हां	हां	हां	हां
2ख.	बिना शर्त अंतरराष्ट्रीय समाभिरूपता	हां, लेकिन भारत के लिए नहीं	नहीं	नहीं	हां	हां	हां
3.	समाभिरूप क्षेत्रों द्वारा संसाधनों को खपाते हैं	नहीं	थोड़ा बहुत	थोड़ा बहुत	नहीं	थोड़ा बहुत	हां
4.	कौशल संबंधी रूपरेखा और आधारभूत क्षमता का मेल	कुछ विशेष नहीं	थोड़ा बहुत	थोड़ा बहुत	नहीं	नहीं	हां
5.	विक्रेय और/अथवा दोहराने योग्य	हां	नहीं	थोड़ा बहुत	हां	थोड़ा बहुत	नहीं

स्रोत : अमिरापु और सुब्रह्मण्यन (2015)।

और (5) स्वास्थ्य और सामाजिक सेवाएं शामिल हैं, में पंजीकृत विनिर्माण की तुलना में काफी अधिक शैक्षिक उपलब्धियां हैं (90 प्रतिशत से अधिक कामगार कम से कम प्राथमिक शिक्षा प्राप्त)। इसका अर्थ यह है कि अधिकतर सेवा उप-क्षेत्रों (अधिकांशत: उच्च उत्पादकता, उच्च वृद्धि वाले उप क्षेत्र) में भारत के सबसे प्रचुर संसाधन अर्थात् अकुशल श्रम बल को इस्तेमाल करने की क्षमता बहुत सीमित है। इसी से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि सेवाओं से प्राप्त उत्पादन की हिस्सेदारी में इतनी जबर्दस्त वृद्धि होने के बावजूद, सेवाओं से प्राप्त रोजगार की हिस्सेदारी में इतनी साधारण वृद्धि क्यों हुई है।

7.5 स्कोर कार्ड का सारांश और निष्कर्ष

सारणी 7.6 में स्कोर कार्ड का सारांश दिया गया है जिसमें पंजीकृत निर्माण और चुनिंदा उप-क्षेत्रों की तुलना दी गई है। आगे बढ़ने से पहले कुछ महत्वपूर्ण बातें स्पष्ट कर दी जाएं। पहले, हम सेवा क्षेत्रों की तुलना केवल *पंजीकृत* (औपचारिक) विनिर्माण क्षेत्र से ही करेंगे क्योंकि कृषि के अलावा-अपंजीकृत विनिर्माण क्षेत्र भारतीय अर्थव्यवस्था के सबसे कम उत्पादकता वाले क्षेत्रों में से एक है-और इसलिए परिवर्तन की बहुत कम संभावना पेश करता है। इसीलिए, जब भारत में विनिर्माण क्षेत्र की परिवर्तन करने की क्षमता की बात होती है तो खास ध्यान पंजीकृत विनिर्माण पर ही दिया जाना चाहिए।

दूसरे, इस अध्याय का एक और योगदान विनिर्माण और सेवाओं की तुलना के आधार पर परंपरागत अंतर से परे जाकर परिवर्तनकारी क्षेत्रो के बारे में एक नई सोच पेश करना है। हमने आसानी से दिखायी देने वाली बुनियादी विशेषताओं के आधार पर क्षेत्रों की तुलना की है। निश्चित रूप से विनिर्माण और सेवाओं के बीच कुछ कम अंतर ही होंगे जो इस विश्लेषण से छूट गये हैं।

उदाहरणत: हमारे वर्तमान विश्लेषण में उस सीमा पर विचार नहीं किया गया है जिस सीमा तक कतिपय क्षेत्र (जैसे कि पंजीकृत विनिर्माण) अर्थव्यवस्था के अन्य क्षेत्रों से कुछ सीखने की संभावना रखते हैं जो कि महत्वपूर्ण हो सकता है। कुछ अन्य आयाम जो लुप्त हैं, उनमें राजनीतिक आयाम शामिल हैं: डॉनी रोड्रिक यह बताते हैं कि विनिर्माण क्षेत्र एक ऐसा मंच मुहैया करा कर युवा राष्ट्रों के राजनीतिक विकास में अप्रत्यक्ष भूमिका निभा सकता है जिस पर नागरिक ''विनिर्माण कर्ता के स्थल पर'' श्रम और पूंजी के बीच संघर्ष के जरिए लोकतांत्रिक संदर्भ में समझौता करने का अभ्यास करते हैं (रोड्रिक, 2013ख)। हालांकि हमारे विश्लेषण में इन चैनलों को छोड़ दिया गया है, फिर भी हमारा विश्वास है कि वे पहले बतायी गई पांच वांछनीय विशेषताओं की तुलना में दोयम दर्जे की हैं।

यदि तुलना करें तो यह पता चलता है कि कतिपय अन्य सेवा उप-क्षेत्रों के मुकाबले पंजीकृत विनिर्माण क्षेत्र के बारे में कोई बात विशिष्ट या श्रेष्ठ नहीं दिखाई देती। विनिर्माण क्षेत्र की तरह, अनेक सेवा उप-क्षेत्रों में भी उच्च उत्पादकता और घरेलू एवं अंतरराष्ट्रीय समाभिरूपता दोनों ही देखी गई हैं। तथापि, उन में यह कमी भी है कि ये क्षेत्र संसाधन संबंधी अपनी जरूरतों के लिए अत्यधिक कौशल प्रधान हैं जो भारतीय श्रम बल की कौशल क्षमता से मेल नहीं खाता। इसलिए समावेशी अथवा साझे विकास के संबंध में उनकी संभावना सीमित रहेगी-और वस्तुत: पहले देखी गई विस्तार की कमी के चलते ऐसा हो भी रहा है (यह बात स्कोर कार्ड में दर्ज की गई है।

नीचे दी गई सारणी में सबसे अलग दिखने वाला एक क्षेत्र है निर्माण: इसमें दोनों प्रकार की समाभिरूपता देखी गई है, इसमें शिक्षा के उच्च स्तरों की जरूरत नहीं है और पिछले तीन दशकों में इसने संसाधनों के उपयोग में उल्लेखनीय वृद्धि की है। तथापि, यह क्षेत्र विक्रेय नहीं है और हर हाल में कम उत्पादकता वाला है, इसलिए इस क्षेत्र में श्रम संसाधनों का अंतरण करने से समग्र कल्याण में कोई विशेष सुधार नहीं होता है।

इसलिए, कुछ हद तक भारत के लिए उपलब्ध विकल्प विनिर्माण और सेवाओं की तुलना करना नहीं है बल्कि तुलनात्मक लाभ प्राप्त क्षेत्र (अकुशल श्रम प्रधान) के साथ-साथ तुलनात्मक लाभ प्राप्त (कुशल श्रम प्रधान) क्षेत्र के विकास में निहित है। यह एक सकारात्मक और नीतिगत प्रश्न है।

हालांकि भारत के विकास की श्रम प्रधान पद्धति निश्चित रूप से महंगी पड़ी है, फिर भी इसके सकारात्मक लाभ हैं। माइरन वीनर, और अन्य, ने आजादी के बाद शिक्षा संबंधी जरूरतें पूरी करने में भारत सरकार के खराब निष्पादन की ओर इशारा किया है जो विशेषकर महिलाओं की साक्षरता दर में बहुत धीमे सुधार के रूप में प्रतिबिंबित हुआ है। जहां सरकार की ओर से शैक्षिक सेवाओं की आपूर्ति अपर्याप्त रही है, वहीं यह प्रश्न उठता है कि शिक्षा के लिए अधिक मांग क्यों नहीं उठी और इस तरह इस मांग को पूरा करने के लिए सरकार पर अधिक दबाव क्यों नहीं डाला गया।

इस प्रश्न का एक जवाब यह है कि साक्षरता और बुनियादी शिक्षा पर निजी क्षेत्र द्वारा किये गये निवेश पर प्रतिलाभ अवश्य कम रहे होंगे। अब यह प्रमाण मिला है कि आर्थिक विकास को प्रेरित करने वाले अवसरों में वृद्धि होने से इन प्रतिलाभों में भी बढ़ोतरी होती है जिसके परिणामस्वरूप सरकारी और निजी दोनों तरह की शैक्षिक सेवाओं की मांग बढ़ती है और इस तरह शैक्षिक परिणाम भी सुधरते हैं (मुंशी एंड रोजन्ज़वाइग, 2003)। इससे शिक्षा सेवाओं की आपूर्ति पर दबाव पड़ा है। अच्छे स्कूल बनाने में सरकार की असफलता सब जानते हैं, लेकिन विकास ने इस तस्वीर में नाटकीय परिवर्तन किया है। इसकी मुख्य वजह यह है कि विकास के कारण शिक्षा से प्राप्त होने वाले प्रतिलाभ बढ़ गए हैं और इसलिए शिक्षा की मांग भी बढ़ गई है।

अर्थशास्त्री कार्तिक मुरलीधरन और माइकल क्रैमर के कार्य से यह साक्ष्य मिलता है कि ग्रामीण भारत में प्राइवेट स्कूलों की बाढ़ आ गई है (अनेक स्कूल, ''इंग्लिश मीडियम'' वाला होने का प्रचार करते हैं)। इसकी वजह सरकारी स्कूलों में अध्यापकों का गैर हाज़िर होना है। हमें कुछ शहरों में कौशल सृजन के लिए कंपनियों द्वारा प्रशिक्षण केंद्र निर्मित करने की बात भी सुनाई देती है (जैसे कि मैसूर में इनफोसिस इंस्टीट्यूट) क्योंकि उच्च शिक्षा की संस्थाएं बिल्कुल अपर्याप्त हैं। मानव पूंजी में यह बाहरी वृद्धि तुलनात्मक लाभ प्राप्त कुशल श्रम-बल प्रधान विकास मॉडल को प्रति संतुलित करने का एक लाभ हो सकता है।

नीतिगत प्रश्न इस प्रकार है। *जहां तक सरकार द्वारा विकास की पद्धति को रूप-आकार देने पर नियंत्रण रखने का संबंध है, क्या उसे अकुशल विनिर्माण क्षेत्र का पुनरुद्धार करने का प्रयास करना चाहिए अथवा क्या इसे स्वीकार कर लेना चाहिए कि विकास की कुशल श्रम प्रधान पद्धति को संपोषित करने के लिए जमीन तैयार करना कठिन है?* पहली बात को हासिल करना इतिहास के विरुद्ध जाने के बराबर होगा क्योंकि औद्योगीकरण कम होने की प्रक्रिया को उलटने के उदाहरण बहुत ज्यादा नहीं हैं। भारत में बहुत परिवर्तन किए जाने होंगे-अकुशल श्रम प्रधान विनिर्माण क्षेत्र को सहारा देने वाली अवसंरचना और संभारिकी/कनेक्टिविटी निर्मित करने से लेकर अनेकानेक कानूनों और विनियमों में सुधार करना-अथवा उनके प्रवर्त्तन के संदर्भ में भ्रष्टाचार का समाधान करना-जिनसे औपचारिक क्षेत्र में अकुशल श्रम को नियुक्त करने और किफायत बरतने में कठिनाई होती है।

दूसरी ओर, कुशल श्रम प्रधान पद्धति को बनाये रखने के लिए शिक्षा (और कौशल विकास) पर अधिक ध्यान दिए जाने की जरूरत होगी ताकि समय के साथ-साथ बदलती विकास पद्धति दूसरी कमियों से ग्रस्त न हो जाये। इस श्रम प्रधान मॉडल को यह कीमत चुकानी होगी कि एक या दो पीढ़ियां जो इस समय अकुशल हैं, आगे बढ़ने के अवसरों से वंचित हो कर पीछे ही रह जाएंगी। लेकिन कौशल विकास पर जोर देने से कम से कम यह सुनिश्चित हो जाएगा कि भावी पीढ़ियां गंवा दिये गये अवसरों से लाभ उठा सकें।

कुछ हद तक, भारत के सामने इस समय यह चुनने का विकल्प है कि वह इसे असीमित श्रम बल वाली लुईसियन अर्थव्यवस्था कैसे बनाये। भारत यह सुनिश्चित करने के लिए या तो ऐसी स्थितियां सृजित कर सकता है जिससे इसकी अकुशल श्रम बल की असीमित आपूर्ति का उपयोग कर लिया जाए अथवा यह सुनिश्चित कर सकता है कि कुशल श्रम बल की लोचहीन मौजूदा आपूर्ति को अधिक लचीला बनाया जाए। ये दोनों ही बड़ी चुनौतियां हैं।

हालांकि यह विश्लेषण यह इंगित करता है कि जहां अत्यधिक महत्व प्राप्त कर चुका ''मेक इन इंडिया'' महत्वपूर्ण लक्ष्य है, वहीं प्रधानमंत्री का ''स्किलिंग इंडिया'' भी कम महत्वपूर्ण नहीं है और शायद इस पर उतना ही ध्यान दिया जाना चाहिए। यदि ''मेक इन इंडिया'' सफल हो जाता है तो यह अकुशल श्रम बल के संदर्भ में भारत को लुईसियन अर्थव्यवस्था बना देगा। लेकिन, ''स्किलिंग इंडिया'' में भारत को अधिक कुशल श्रम बल के संदर्भ में लुईसियन अर्थव्यवस्था बनाने की क्षमता है। भारत के आर्थिक विकास का भावी पथ इन दोनों पर निर्भर करेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची:

Amirapu, Amrit and Michael Gechter (2014). "Indian Labor Regulations and the Cost of Corruption: Evidence from the Firm Size Distribution," *Working Paper*.

Amirapu, Amrit and Arvind Subramanian (2015). "Manufacturing or Services? An Indian Illustration of a Development Dilemma," *Working Paper*.

Besley, Timothy and Robin Burgess (2004). "Can Labor Regulation Hinder Economic Performance? Evidence from India," *The Quarterly Journal of Economics*, 119 (1), 91-134.

Bollard, Albert, Peter Klenow and Gunjam Sharma, (2013). "India's Mysterious Manufacturing Miracle," *Review of Economic Dynamics*, 16(1), 59-85.

Blanchard, Emily and Will Olney (2013). "The Composition of Exports and Human Capital Acquisition," *Working Paper*.

Duranton, Gilles, Ejaz Ghani, Arti Goswami and William Kerr (2014). "The Misallocation of Land and Other Factors of Production in India," *Working Paper*.

Ghani, Ejaz, William Kerr, and Alex Segura (2014). "Informal Tradables and the Employment Growth of Indian Manufacturing," *World Bank Working Paper*.

Ghani, Ejaz and Stephen O'Connell (2014). "Can Services Be A Growth Escalator in Low Income Countries?," *Working Paper*.

Hausmann, Hwang, and Rodrik (2007). "What you export matters," *Journal of Economic Growth* 12:125.

Herrendorf, Berthold, Richard Rogerson and Ákos Valentinyi (2014). "Growth and Structural Transformation," in *Handbook of Economic Growth*, Vol. 2B, ed. by P. Aghion and S. Durlauf. Amsterdam: Elsevier, 855–941.

Johnson, Ostry and Subramanian (2010). "Prospects for Sustained Growth in Africa: Benchmarking the Constraints," *IMF Staff Papers*. 57 (1), 119-71.

Krugman, Paul (1994). 'The Fall and Rise of Development Economics', pp. 39-58. In *Rethinking the Development Experience. Essays Provoked by the Work of Albert O. Hirschman*, ed. by L. Rodwin and D. Schon. Washington, D.C.: The Brookings Institution.

Levinsohn, James and Amil Petrin (2003). "Estimating Production Functions Using Inputs to Control for Unobservables," *Review of Economic Studies.* 70 (2), 317–342.

McMillan, M. and D. Rodrik (2011). "Globalization, Structural Change, and Productivity Growth", *NBER Working Paper* 17143, National Bureau of Economic Research.

Munshi, Kaivan., and Mark Rosenzweig (2003). "Traditional Institutions Meet the Modern World: Caste, Gender and Schooling Choice in a Globalizing Economy," *American Economic Review*, 96 (4), 1225-1252.

Muralidharan, Karthik, and Michael Kremer (2009). "Public and Private Schools in Rural India," in *School Choice International: Exploring Public-Private Partnerships*, ed. by R. Chakrakbarti and P. Peterson. Cambridge, MA: MIT Press.

Rodrik, Dani (2013). "Unconditional Convergence in Manufacturing," *The Quarterly Journal of Economics*, 128 (1), 165-204.

Rodrik, Dani (2014). "The Perils of Premature Deindustrialization," Retrieved from http://www.project-syndicate.org/commentary/dani-rodrikdeveloping-economies--missing-

कृषि संबंधी वस्तुओं के लिए राष्ट्रीय बाजार–कतिपय मुद्दे व उनका समाधान

08
अध्याय

8.1 परिचय

वर्तमान समय में, कृषि संबंधी उत्पादों के बाजार को राज्य सरकारों द्वारा कृषि उत्पाद विपणन समिति (एपीएमसी) अधिनियम द्वारा विनियमित किया जाता है। भौगोलिक आधार पर, 2477 प्रधान विनियमित बाजार (एपीएमसी) हैं और भारत में संबद्ध एपीएमसी द्वारा विनियमित 4843 उप–बाजार हैं। भारत में एक नहीं; 29 नहीं, अपितु हजारों कृषि बाजार हैं। यह अधिनियम क्षेत्र में उत्पादित कृषि उत्पादों यथा खाद्यान्न, दालों, तिलहन, फलों और सब्जियों तथा चिकन, बकरी, भेड़, चीनी, मछली आदि को अधिसूचित करता है और प्रावधान करता है कि इन उत्पादों में पहली बिक्री अधिनियम के अंतर्गत गठित एपीएमसी के संरक्षण में ही होगी। एपीएमसी के इर्दगिर्द उपलब्ध कराई गई सुविधाओं और सहूलियतों में नीलामी हॉल, मापन सेतु, गोदाम, खुदरा व्यापारियों के लिए दुकानें, कैंटीन, सड़कें, प्रकाश व्यवस्था, पेयजल, पुलिस थाना, डाकघर, नलकूप, भाण्डागार, किसान सुविधा केन्द्र, तालाब, जलशोधन संयत्र, मृदा जांच प्रयोगशाला, और शौचालय आदि हैं। मण्डियों में होने वाले तमाम व्यापारों जिन पर विविध कर, शुल्क और प्रभारों की वसूली की जाती है, को अधिनियम में अधिसूचित किया गया है।

8.2 एपीएमसी अनेकानेक शुल्क, काफी मात्रा में और अपारदर्शी तरीके से प्रभारित करती हैं, इस प्रकार वे राजनीतिक शक्ति का एक स्रोत बनी हुई हैं।

सारणी 8.1–8.3 में एपीएमसी के कार्य–व्यापार से जुड़े भुगतानों/प्रभारों की बहुलता और प्रमात्रा दिखाई गई है। वे खरीददारों से बाजार शुल्क वसूलते हैं, वे खरीददारों और किसानों के बीच दलाली करने वाले कमीशन एजेंटों से भी लाईसेंसिंग फीस वसूल करते हैं। वे इसके दायरे में आने वाले करीब करीब सभी लोगों (भांडागार–एजेंटों, लोडिंग एजेंटों आदि) से भी कमोबेश कोई न कोई लाइसेंसिंग फीस वसूल करते हैं। इसके अलावा, कमीशन एजेंट, किसानों और खरीददारों के बीच होने वाले प्रत्येक लेन–देन में भी कमीशन शुल्क वसूल करते हैं।

राज्यों द्वारा लगाई गई वसूलियों तथा दीगर बाजार प्रभार काफी व्यापक हैं। सांविधिक लेवीज़/मंडी कर, वैट आदि बाजार विकृति का अहम कारण हैं। ट्रेडिंग के पहले स्तर पर ही इस प्रकार के करों की बहुलता आपूर्ति की श्रृंखला में वस्तु की कीमत बढ़ाने का काम करती है।

जैसा कि सारणी 8.1 में दिखाया गया है, आन्ध्र प्रदेश में चावल के संबंध में इन प्रभारों और प्रशुल्कों की कीमत 14.5 प्रतिशत तक पहुंच जाती है (जबकि इसमें राज्य–वैट अभी जुड़ा नहीं है)। यह दर ओडिशा और पंजाब के लिए 10 प्रतिशत है। गेहूं की स्थिति में भी ये प्रभार काफी ज्यादा हैं (सारणी 8.2)।

मॉडल एपीएमसी अधिनियम (अधोलिखित) में भी एपीएमसी को, सेवाएं उपलब्ध कराने के एवज मे बाजार शुल्क के रूप में लिए जाने वाले कर की बजाए, राज्य का अंग कहा गया है। यही वह अहम प्रावधान है जो कृषि उत्पादों के एक राष्ट्रीय साझा बाजार बन जाने में प्रमुख अड़चन पैदा करता रहा है। इन प्रावधानों के हटाने से प्रतिस्पर्धा बनाए रखने में मदद मिलेगी और कृषि उत्पादों का एक समान राष्ट्रीय बाजार निर्मित किया जा सकेगा।

इसके अलावा, चूंकि बाजार शुल्क महज एक कर की तरह उगाहा जाता है और एपीएमसी द्वारा अर्जित राजस्व राज्य कोष में नहीं जाता है, अंत: इस प्रकार जमा की गई निधि के खर्च के लिए राज्य विधानमण्डल का अनुमोदन लेना भी जरूरी नहीं है। इस तरह एपीएमसी के सभी काम–काज संवीक्षा और जांच से पूरी तरह अछूते बने रहते हैं।

लाइसेसिंग कमीशन एजेंटों द्वारा प्रभारित कमीशन की दरें बेहद ज्यादा होती हैं जो प्रत्यक्ष करों, जो निवल आय पर वसूली जाती हैं, से उलट प्रस्तुत सामान के बेचे गए माल

सारणी 8.1 : के॰एम॰एस॰ 2013-14 में धान/चावल के प्रापण पर करों/लेवी/ब्याज प्रभारों/अन्य अनुषंगी प्रभारों का प्रतिशत और कर के बाद उनका मूल्य

	कर/लेवी ब्याज प्रभार/ अनुषंगी प्रभार आदि	एमएसपी पर कर के बाद मूल्य (1310 रु क्विंटल)
1. आन्ध्र प्रदेश*	19.5	1565.45
2. बिहार	6.5	1395.15
3. छत्तीसगढ़**	9.7	1437.07
4. गुजरात	3.5	1355.85
5. हरियाणा	11.5	1460.65
6. झारखंड	3.5	1355.85
7. कर्नाटक	4	1362.4
8. मध्य प्रदेश	4.7	1371.57
9. महाराष्ट्र	3.55	1356.51
10. ओडिशा***	15.5	1513.05
11. पंजाब	14.5	1499.95
12. राजस्थान	3.6	1357.16
13. उत्तर प्रदेश	9	1427.9
14. उत्तराखंड	9	1427.9
15. पश्चिम बंगाल	3	1349.3

* बाजार शुल्क = 1%, वैट = 5%, ड्राइएज - 1%, आरडी उपकर - 5%, समिति को कमीशन - 2.5%, प्रशासनिक प्रभार - 2.5%, कस्टडी और अनुरक्षण प्रभार + ब्याज प्रभार = 2.5%

** मंडी शुल्क = 2.5%, वाणिज्यिक कर - 5%, समिति को कमीशन - 2.5%, निराश्रित शुल्क - 0.2%

*** बाजार शुल्क - 2%, वैट - 5%, ड्राइएज - 1%, समिति को कमीशन - 2.5%, प्रशासनिक प्रभार - 2.5%, कस्टडी और अनुरक्षण प्रभार + ब्याज प्रभार = 2.5%

स्रोत : एफसीआई, डीएफपीडी और राज्य

की समग्र कीमत पर वसूली जाती है। विविध बाजारों के लाइसेंसी ऑपरेटरों द्वारा प्रभारित लाइसेंस शुल्क बहुत कम होता है, किन्तु प्रदत्त लाइसेंसों की कम संख्या होने से प्रीमियम का चलन हो रहा है जो नकद के रूप में अदा की जाती है।

माना जाता है कि (राज्य स्तर पर) बाजार कमेटी और बाजार बोर्ड, जो बाजार कमेटी की देख-रेख करता है, में राजनीतिक रूप से रसूखदार लोग ही काबिज होते हैं। उनकी लाइसेंसी कमीशन एजेंटों से सांठ-गांठ होती है जो अपने अधिसूचित

सारणी 8.2 : किसानों द्वारा बेचे गए गेहूं पर लगाई गई राज्यवार वसूलियां और कर

	कर/लेवी (एमएसपी के प्रतिशत के रूप में एमएसपी	कर के बाद मूल्य (1350 रु क्विंटल)
1. आन्ध्र प्रदेश	5	1418
2. असम	0	1350
3. बिहार	6	1431
4. छत्तीसगढ़	2.2	1380
5. गुजरात	0.81	1361
6. हरियाणा	11.5	1505
7. झारखंड	3.5	1397
8. कर्नाटक	0	1350
9. मध्य प्रदेश	9.2	1474
10. महाराष्ट्र	0	1350
11. ओडिशा	5	1418
12. पंजाब	14.5	1546
13. राजस्थान	3.6	1399
14. तमिलनाडु	0	1350
15. उत्तर प्रदेश	8.5	1465
16. उत्तराखंड	7.5	1451
17. पश्चिम बंगाल	2.88	1389

*17.01.2014 को यथा विद्यमान:

स्रोत : भारतीय खाद्य निगम (एफसीआई)

इलाके में अपने उत्पादक संघ खड़ा करने में उनकी सहायता करते हैं। इन तत्वों से पूरी तरह मुक्त कराने के लिए एपीएमसी को नए सिरे से गठित किए जाने की जरूरत है।

8.3 आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 बनाम ए॰पी॰एम॰सी अधिनियम

आवश्यक वस्तु अधिनियम (ई॰सी॰एक्ट॰) का दायरा एपीएमसी अधिनियम से कहीं ज्यादा व्यापक है। यह कीमत निधारित करने, भंडारण, तथा भण्डारण की अवधि के साथ-साथ केन्द्र तथा राज्यों को उत्पादन नियंत्रण, आपूर्ति तथा कतिपय वस्तुओं के वितरण और प्रशुल्क लगाने के अधिकार प्रदान करता है। दूसरी तरफ, एपीएमसी अधिनियम केवल कृषि उत्पाद की पहली बिक्री को ही नियंत्रित करता है। खाद्य वस्तुएं, जो अधिकाशंत: एपीएमसी एक्ट द्वारा कवर होती हैं,

सारणी 8.3: राजस्व उगाही के संदर्भ में देश की पांच बड़ी एपीएमसी का विवरण

एपीएमसी का नाम	आय (करोड़ रु. में) 2013–14	बाजार शुल्क की दर	कमीशन प्रभार की दर
1. एपीएमसी वाशी (मुम्बई)	126.00	उत्पाद के मूल्य का 0.8%	नष्ट होने वाली मद (i) प्याज - 6.5% (ii) सब्जी - 8% (iii) फल - 10% नष्ट न होने वाली वस्तु: उत्पादित मूल्य के 2.75% तक
2. एपीएमसी आजादपुर (दिल्ली)	90.09	1% प्रतिशत का बाजार शुल्क (फल तथा सब्जी बाजार)	उत्पाद के मूल्य का 6%
3. गल्ला मंडी एपीएमसी इन्दौर (इंदौर)	59.70	2% बाजार शुल्क (संतरा, कपास तथा केला जिनपर उत्पाद का 1% शुल्क है, को छोड़कर) शेष उत्पादों के लिए तथा 0.2 का निराश्रित शुल्क	कमीशन एजेंट नहीं है
4. एपीएमसी गुलटेकरी (पुणे)	47.00	उत्पादों के मूल्य का 1%	नष्ट होने वाले सामानों के लिए प्रस्तुत उत्पादों का 6.0% प्रतिशत नष्ट न होने वाले सामानों के लिए 3.0%
5. एपीएमसी यशवन्त नगर (बैंगलोर)	44.00	बाजार शुल्क 1.0% + 0.5% चक्रीय कोष हेतु, सूखे अंगूरों (किशमिश) की स्थिति में केवल 0.1% प्रतिशत है	फल तथा सब्जियां- उत्पाद के मूल्य का 5% अन्य के लिए उत्पाद के मूल्य का 20%

की तुलना में ईसी एक्ट द्वारा कवर की जाने वाली वस्तुएं सामान्यतया औषधि, उर्वरक और कपड़ा तथा कोयला आदि हैं।

8.4 मॉडल ए॰पी॰एम॰सी॰ अधिनियम

चूंकि इन सभी राज्य अधिनियमों कृषि वस्तुओं के लिए अलग–अलग बाजार (2477) तैयार कर दिया है और ये ए॰पी॰एम॰सी॰ द्वारा लाइसेंस प्राप्त कार्यकारी एजेंसियों या एजेंटों के मार्फत देश में कहीं भी अपना कृषि उत्पाद बेचने के किसान के अधिकार का हनन करते हैं, इसलिए कृषि मंत्रालय ने एक मॉडल ए॰पी॰एम॰सी॰ अधिनियम 2003 तैयार किया है और सभी राज्य सरकारों से अनुरोध कर रहा है कि वे अपने–अपने संबद्ध अधिनियमों को मॉडल एपीएमसी अधिनियम 2003 के अनुरूप संशोधित और अद्यतन करें। मॉडल ए॰पी॰एम॰सी॰ अधिनियम, 2003 में (क) कृषि उत्पादों की सीधी बिक्री के लिए कृषि प्रायोजकों के साथ बात करना; ख) अधिकांशत: जल्दी सड़ने वाली विशिष्ट कृषि वस्तुओं के लिए ''विशेष बाजार'' मुहैया कराने; ग) किसी भी क्षेत्र में कृषि उत्पादों के लिए नए बाजार स्थापित करने के लिए निजी व्यक्तियों, किसानों तथा उपभोक्ताओं को सहायता देने; (घ) किसी भी बाजार क्षेत्र में अधिसूचित कृषि वस्तुओं की बिक्री पर एकल लेवी की व्यवस्था करने; (ङ) लाइसेंसिंग के स्थान पर बाजार कर्मचारियों का पंजीकरण करना जिससे कि उन्हें एक या अधिक बाजार

स्थलों में काम करने की अनुमति हो; (च) उपभोक्ताओं को कृषि उत्पादों की सीधी बिक्री की सुविधा मुहैया कराने के लिए 'उपभोक्ता' और किसान' बाजारों की स्थापना की अनुमति देने; और ए॰पी॰एम॰सी॰ द्वारा अर्जित राजस्व से बाजार की मूलभूत अवसंरचना का निर्माण करने की व्यवस्था की गई है।

मॉडल एपीएमसी अधिनियम में किसानों को कमोबेश आजादी है कि वे अपने कृषि उत्पादों को सीधे-सीधे कॉन्ट्रेक्ट प्रायोजकों, उपभोक्ता या उत्पादकों अथवा निजी व्यक्तियों द्वारा स्थापित बाजारों में बेच सकें। मॉडल एपीएमसी से कृषि उत्पादों के बाजार में प्रतिस्पर्धा भी बढ़ेगी जिससे बाजार के मध्यस्थों या दलालों के लिए एक समान पंजीकरण प्रक्रिया भी होगी, कई राज्यों ने मॉडल एपीएमसी अधिनियम के उपबंधों को अंशत: अपनाने और मानते हुए अपने अपने एपीएमसी अधिनियम को सुधारना शुरू कर दिया है। कुछ राज्यों ने संशोधित प्रावधानों को लागू करने के लिए नियम नहीं बनाए हैं, यह एपीएमसी के मार्फत देशभर में कहीं भी अपना कृषि उत्पाद बेचने की किसानों के अधिकार को बहाल करने के क्रम में उनकी हिचक को दर्शाता है। कर्नाटक सरीखे कुछ राज्यों ने तो राज्यों में अधिक स्पर्धा पैदा कराने की दृष्टि से इन परिवर्तनों को यथेष्ट तौर पर अपनाया है।

8.5 कर्नाटक मॉडल

कर्नाटक में 155 प्रमुख बाजार यार्डों और 354 उप-यार्डों में से 51 को एकल लाइसेंसिंग प्रणाली के अंतर्गत लाया गया है। सरकार द्वारा सृजित एक संयुक्त उपक्रम, राष्ट्रीय ई-मार्केट सर्विस लिमि॰ (आरईएमएस) और एन॰सी॰डी॰ई॰एक्स॰ स्पॉट एम्सचेंज ने ऑटोमेटेड ऑक्शन, पोस्ट ऑक्शन सहूलियतों (यथा-तौल-माप, बाजार शुल्क का संग्रहण, लेखांकन), बाजार में उपलब्ध सुविधाओं के आकलन, उत्पाद के लिए भण्डारण क्षमता को सुकर बनाने, वस्तुगत वित्तपोषण की सुविधाएं सुलभ कराने, प्रौद्योगिकी का लाभ उठाकर मौजूदा मूल्य का प्रचार-प्रसार आदि के जरिए बाजार अवसरंचना में निजी क्षेत्र के निवेश को प्रोत्साहन दिया है। खंडित बाजार को व्यापक और विशाल भौगोलिक क्षेत्र में तब्दील करने से बाजार अवसंरचना में निजी क्षेत्र का निवेश बढ़ाने के अवसर मिलेंगे।

8.6 मॉडल ए.पी.एम.सी. अधिनियम की कमियां

मॉडल ए॰पी॰एम॰सी॰ अधिनियम के प्रावधान कृषि वस्तुओं के राष्ट्रीय अथवा राज्य स्तरीय साझा बाजार बनाने की दृष्टि से पर्याप्त नहीं हैं। वजह ये है कि ए॰पी॰एम॰सी॰ अधिनियम खरीददारों की बाध्यकारी जरूरतों पर ही ध्यान देता है जिसमें कहा गया है कि भले ही कृषि उत्पाद को कॉन्ट्रेक्ट प्रायोजक अथवा निजी व्यक्तियों द्वारा स्थापित बाजार में या ए॰पी॰एम॰सी॰ क्षेत्र से बाहर क्यों न बेचा गया हो, फिर भी उसे ए॰पी॰एम॰सी॰ को प्रभार भुगतान अदा करने होंगे। भले ही अपने ए॰पी॰एम॰सी॰ द्वारा यथा उपलब्ध सुविधा या सहूलियतों का उपयोग न किया हो। मॉडल ए॰पी॰एम॰सी॰ अधिनियम के संगत प्रावधान (सं. 42) में कहा गया है कि:-

''बाजार शुल्क प्रभारित करने की की शक्ति'' (एकल केन्द्रीय वसूली): प्रत्येक बाजार (i) अधिसूचित कृषि उत्पादों की खरीद या बिक्री पर बाजार शुल्क वसूल करेगा, भले ही वह वस्तु राज्य के भीतर से लाई गई हो या राज्य के बाहर कहीं से बाजार क्षेत्र में लाई गई हो।''

यद्यपि मॉडल ए॰पी॰एम॰सी॰ अधिनियम में ए॰पी॰एम॰सी. और कमीशन एजेन्टों को विक्रेताओं से बाजार शुल्क/ कमीशन काटने से मना किया गया है, इन शुल्कों/कमीशन का प्रभाव किसानों पर पड़ता है क्योंकि खरीददार ए॰पी॰एम॰सी॰ और कमीशन एजेंटों द्वारा लिए गए शुल्क/कमीशन की सीमा तक अपनी बोली में छूट या रियायत चाहता है।

यद्यपि मॉडल ए॰पी॰एम॰सी॰ अधिनियम निजी क्षेत्र द्वारा बाजार की स्थापना की बात करता है किन्तु राज्य के भीतर भी स्पर्धात्मक स्थिति के सृजन की दृष्टि से भी यह प्रावधान यथेष्ट नहीं है, क्योंकि निजी बाजार का मालिक ए॰पी॰एम॰सी॰ के लिए या उनके पक्ष में खरीददारों और विक्रेताओं से ए॰पी॰एम॰सी॰ शुल्क/कमीशन इकट्ठा करेगा और यह सब कुछ उन शुल्कों और प्रभारों के अतिरिक्त होगा, जिन्हें कि वह ट्रेडिंग मंच मुहैया कराने तथा उन अतिरिक्त सेवाओं यथा-लदाई-उतराई, ग्रेडिंग, तोल तथा माप आदि सेवाओं की उपलब्धता के एवज में प्रभारित करना चाहता है।

8.7 कृषि उत्पादों के लिए राष्ट्रीय बाजार सृजित करने के वैकल्पिक उपाय

बजट 2014 में राष्ट्रीय बाजार स्थापित करने की जरूरत महसूस की गई थी और निजी बाजार यार्डों/निजी बाजार की स्थापना की दृष्टि से उनके ए॰पी॰एम॰सी॰ अधिनियम को संशाधित व अद्यतन करने के लिए केन्द्र सरकर द्वारा सभी राज्य सरकारों के साथ घनिष्ठ तालमेल करते हुए काम करने की बात कही गई थी। बजट में यह भी घोषणा की गई थी कि कस्बों, गांवों में अपने कृषि उत्पाद सीधे-बेचने हेतु प्रोत्साहित करने के लिए किसानों का बाजार विकसित करने में राज्य सरकारों को मदद दी जाएगी।

इस संबंध में और कदम उठाए जाने की जरूरत हो सकती है। इन उपायों को और आगे बढ़ाया जाए। इसके लिए इन राज्यों द्वारा अभी और विचार किया जाना जरूरी है। जैसाकि यह सभी राज्यों के लिए संभव हो सकता है कि वे ए॰पी॰एम॰सी॰ अनुसूची की विनियमित वस्तुओं से फल तथा सब्जियां हटाएं, बाद में यह प्रक्रिया अनाजों, दलहनों, तिलहन की स्थिति में अपनाई जा सकती है और बाद में शेष वस्तुओं के लिए भी इसे अपनाया जा सकता है।

चूंकि निजी क्षेत्र के खिलाड़ी ए॰पी॰एम॰सी॰ जिनमें भूमि तथा अन्य अवसंरचनात्मक शुरूआती निवेश राज्य सरकार द्वारा किए गए हैं, ए॰पी॰एम॰सी॰ की सुविधाओं का मुकाबला नहीं कर सकते हैं। लिहाजा, निजी क्षेत्र में विशेष बाजारों या वैकल्पिक उपायों के लिए जमीन उपलब्ध कराते हुए नीतिगत समर्थन और सहयोग मुहैया कराने के लिए राज्य सरकारों को भी सक्रिय भूमिका निभानी होगी।

बाजार अवसरंचना विशेषकर भांडागार, शीतगृह, रीफर वैनों, प्रयोगशालाओं, ग्रेडिंग सहूलियतों आदि विपणन अवसंरचना की स्थापना के लिए घरेलू पूंजी आकृष्ट करने में होने वाली कठिनाई के निवारण के लिए खुदरा व्यापार में एफ॰डी॰आई॰ से भारी मात्रा में निवेश प्राप्त होगा जो अवसंरचनात्मक की कमी को पूरा कर सकेगा जिसके परिणामस्वरूप आपूर्ति श्रृंखला की अपर्याप्तता को कारगर तरीके से दूर किया जा सकता है।

8.8 साझा बाजार स्थापित करने के लिए संवैधानिक प्रावधानों का उपयोग करना:

यदि अनुनय-विनय का कोई सार्थक-फल न हो (और इसके लिए यह 2003 से लंबे समय से कोशिश की जा रही है), यह जरूरी है कि यह तय किया जाए कि भारत के संविधान के अधीन आबंटित विषयों के मद्देनजर केन्द्र सरकार क्या कर सकती है। भारत का संविधान सातवीं अनुसूची की सूची II (राज्य सूची) यथा प्रविष्टि 14, ''कृषि... प्रविष्टि 26: ''राज्य में व्यापार और वाणिज्य और प्रविष्टि - 28: ''बाजार तथा मेले'' के अंतर्गत एपीएमसी लागू कराने की शक्ति प्रदान करती है।

तथापि, यह मानना कि राष्ट्रीय बाजार बनाने में केन्द्र को निर्णायक भूमिका निभाने के लिए यदि संविधान में संशोधन किया जा सकता है तो यह भारत के संविधान की सातवीं अनुसूची (समवर्ती सूची) की तीसरी सूची में यथा उपलबध प्रविष्टियों यथा - प्रविष्टि - 33 जिसमें खाद्य तेलों, तिलहनों, कच्ची कपास, कच्चा जूट आदि के साथ व्यापार-वाणिज्य और उत्पादन, आपूर्ति और खाद्य सामग्री का वितरण शामिल है, के लिए राष्ट्रीय साझा बाजार बनाने के लिए कानून बनाया व लागू किया जा सकता है। संघीय सूची में प्रविष्टि 42 अर्थात् - अन्तर राज्यीय व्यापार और वाणिज्य'' भी इसमें केंन्द्र की भूमिका की अनुमति देती है। एक बार जब विशिष्टिकृत कृषि उत्पादों के व्यापार को नियमित करने के लिए संसद कानून पारित करती है तो राज्य एपीएमसी कानूनों को भी आसानी से लागू किया जा सकेगा। और इस प्रकार देश में एक साझे राष्ट्रीय बाजार का सृजन किया जा सकेगा। लेकिन इस रवैये को केंद्र की ओर से कठोर कार्रवाई समझा जा सकता है और यह सहयोगात्मक संघवाद की नई भावना के प्रतिकूल होगा।

कार्बन सब्सिडी से कार्बन कर की ओर; भारत का पर्यावरण संबंधी कार्य[1]

09 अध्याय

9.1 प्रस्तावना

अंतरराष्ट्रीय तेल की कीमतों में तेजी से हालिया गिरावट को बहुतों द्वारा कार्बन का प्रयोग करने और सब्सिडी के भारी बोझ से छुटकारा पाकर ऊर्जा कीमतों को युक्तिसंगत बनाने के अवसर के रूप मे देखा जाता है। यह न केवल वित्तीय रूप से विवेकसम्मत उपाय होगा अपितु कार्बन पर कर लगाने जैसे उपाय शुरू करने का सुनहरा अवसर होगा, जो जलवायु परिवर्तन के खतरे से जूझने में अभी तक अत्यन्त सक्षम साधन है।

हालांकि विश्व के ऐसे बहुत कम देश हैं जिन्होंने इस पर प्रतिक्रिया की या इस दिशा में कोई प्रयास किया है किंतु डीजल की कीमतों को नियंत्रणमुक्त करने तथा साथ ही साथ वैश्विक कीमतों में आने वाली गिरावट के समनुरूप बनाने के लिए समय-समय पर पेट्रोल और डीजल पर

चित्र 9.1: वसूलियों और सीमा शुल्क के अन्तर्गत डीजल, 2012-2015 (रू/लीटर)

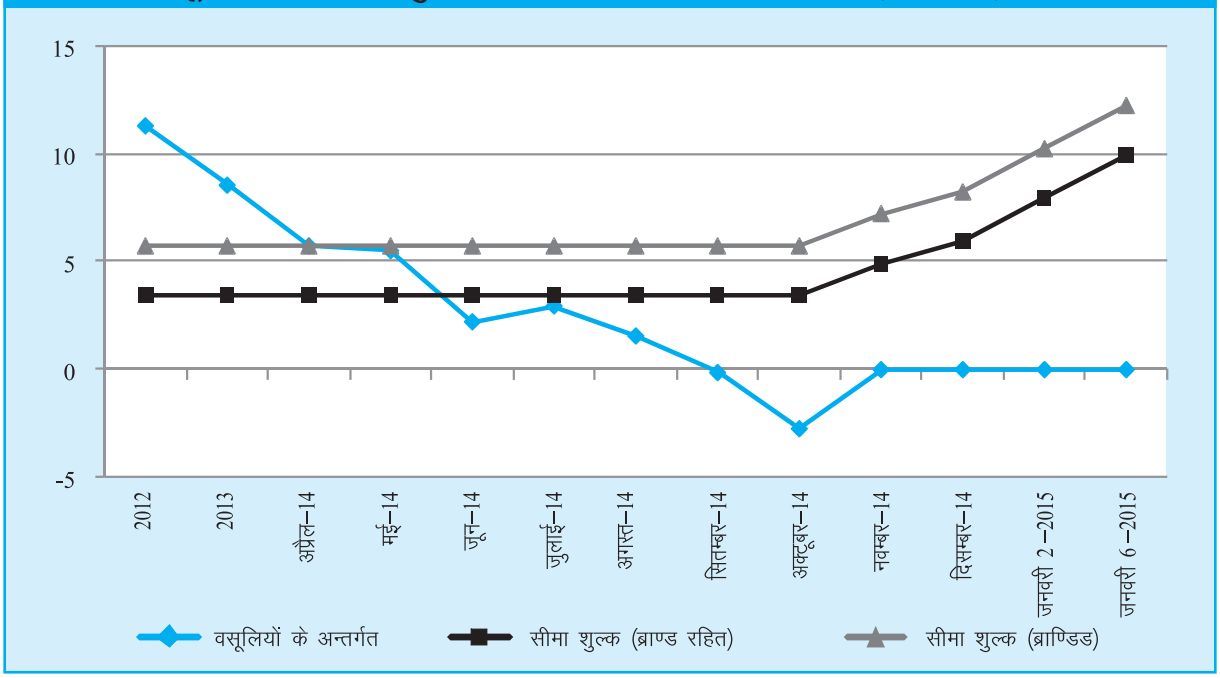

***स्रोत* : पेट्रोलियम आयोजना और विश्लेषण प्रकोष्ठ, पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस मंत्रालय**

---

1 मुत्तूकुमार मणि और फैन झांग, मुख्य अर्थशास्त्री का कार्यालय, दक्षिण एशिया क्षेत्र, विश्व बैंक की इस अधयाय को तैयार करने में दी गई सहायता के लिए आभारी हैं।

2 ''सीज द डे'' द इकोनॉमिस्ट, जनवरी 17, 2015

3 कार्बन कर ईंधन में कार्बन तत्वों (मुख्यत: कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस) पर लगाया जाने वाला कर है, जिनके जलने पर कार्बन का उत्सर्जन होता है। यह कर प्रति टन कोयला, प्रति बैरल तेल या प्रति मिलियन क्यूबिक फीट गैस की दर से लागू होगा। यह राशि कार्बन तत्वों पर लागू करों के समकक्ष समायोजित होगी। ऐसे कर का यौक्तिकीकरण जलवायु परिवर्तन के लिए उत्तरदायी प्रमुख जीएचजी उत्सर्जन को कम करने में है।

चित्र 9.2: वसूलियों और सीमा शुल्क के अन्तर्गत पेट्रोल 2014-2015 (रू/लीटर)

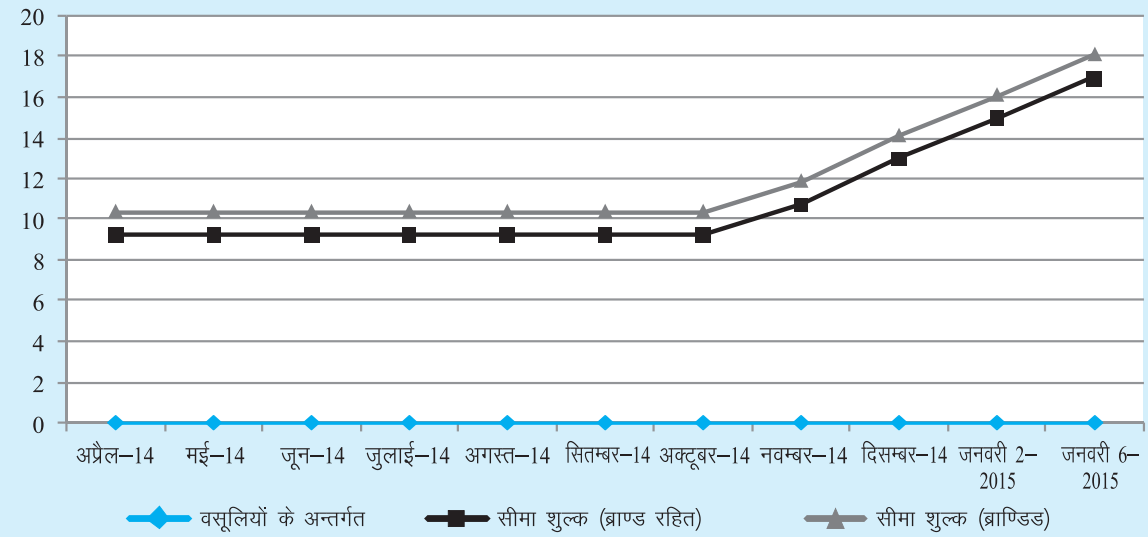

स्रोत : पेट्रोलियम आयोजना और विश्लेषण प्रकोष्ठ, पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस मंत्रालय

उत्पाद शुल्क बढ़ाने के लिए भारत सरकार द्वारा किए गए उपाय इस दिशा में भारत सरकार की अधिक सक्रिय भूमिका को दर्शाता है। जैसाकि चित्र 9.1 दर्शाता है, कम वसूली–जो अंतर्राष्ट्रीय कीमतों की तुलना में कम घरेलू कीमतों के संबंध में दी जानी वाली सब्सिडी का पैमाना है–को समाप्त कर दिया गया है (चित्र 9.2)। अक्तूबर, 2014 से कार्रवाई की श्रृंखला में डीजल और पेट्रोल पर उत्पाद शुल्क अधिरोपित किया गया है इससे पूर्व, कोयले पर उपकर 50 रु०/टन से दोगुना करके 100 रु० /टन किया गया, ये भी सरकार द्वारा पर्यावरण सुरक्षा के लिए की गई कार्रवाई का हिस्सा है।

9.2 अप्रत्यक्ष कार्बन कर के रूप में पेट्रोल और डीजल पर उत्पाद शुल्क

पेट्रोल या डीजल पर उत्पाद शुल्क–उत्सर्जन पर प्रभावी कीमत लगाने से अप्रत्यक्ष रूप से कार्बन कर के रूप में कार्य करते हैं। उदाहरण के लिए कार में जितनी अधिक मात्रा में ईंधन जलेगा उत्सर्जन भी उतना ही अधिक होगा, चुकाया गया कर भी उतना ही अधिक होगा। ईंधन के जलने की कम करने के लिए कीमत संकेत हैं, और कार्बनडाइक्साइड उत्सर्जन के लिए भी कार्बन कर के रूप में कार्य करने के अलावा पेट्रोल और डीजल पर उत्पाद शुल्क नि:संदेह पेट्रोल या डीजल के साथ जलने वाले अन्य संबंधित तत्वों का भी मूल्य निर्धारण करते हैं। इसमें शामिल हैं–भीड़–भाड़ की लागत (वाहन उपयोग करने से) शोर और स्थानीय वायु प्रदूषण (विभिन्न रूपों में), जो स्वास्थ्य के लिए बहुत अधिक खतरनाक हैं[4]। कार्बन उत्सर्जन से अनुमानित खतरों को अन्य अवांछित उप प्रभावों से कम किया जाता है। उपलब्ध अधिकतम अनुमानों पर जलवायु परिवर्तन पर प्रभाव भीड़–भाड़ तथा वायु प्रदूषण से संबंधित लागत का केवल 7 प्रतिशत होता है[5]। नि:संदेह कोई भी सामाजिक संवितरण के लिए काफी अधिक राजस्व जुटाने में उनकी भूमिका को कम नहीं आंक सकता है। बहुत से देशों में यह दूसरा कारण कार्बन कर की तुलना में फॉसिल ईंधन पर कराधान को प्रेरित किया है। भारत में सब्सिडी से फॉसिल ईंधन पर कराधान से हालिया दिशा परिवर्तन नि:संदेह राजस्व और बृहत आर्थिक सरोकारों से जुड़े हैं परंतु इनके भी जलवायु परिवर्तन पर प्रभाव पड़ते हैं।

[4] हैमिल्टन (2014) में सुझाव दिया गया है कि भारत में प्रदूषण (मुख्यत: कोयला और डीजल के जलने के कारण होता है) शायद प्रति वर्ष स०घ०उ० का 6 प्रतिशत से भी अधिक है (हैमिल्टन 2014 ''शीर्ष उत्सर्जकों के लिए पीएम 2.5 नुकसान परिकलित करता है: एक तकनीकी नोट''। नई जलवायु अर्थव्यवस्था पृष्ठभूमि नोट। http://newclimateeconomy.net).

[5] प्रूष्ट, स्टेफ और कर्ट वान डेन्डर ''व्हाट लॉग टर्म रोड ट्रांसपोर्ट फ्यूचर? ट्रेंड्स एंड पॉलिसी ऑप्शन्स'' 2011, पर्यावरणीय अर्थव्यवस्था और नीति की समीक्षा 5(1): 44–65

भारत में उत्पाद शुल्क में बढ़ोतरी के समकक्ष कार्बन कर का अनुमान लगाया जा सकता है और इसके द्वारा कार्बन उत्सर्जन में कटौती के लाभों को परिचालित किया जा सकता है। यह विशेष रूप से जलवायु परिवर्तन से जूझने के लिए वैश्विक प्रयासों के संदर्भ में महत्वपूर्ण है। जहां भारत तीसरा सबसे बड़ा जीएचजी का उत्सर्जक है। इसे इस लक्ष्य [6]की प्राप्ति की और प्रयास के लिए बहुध सराहा जाता है।

उत्पाद शुल्क के समकक्ष कार्बन कर और सब्सिडी समाप्त करने का अनुमान लेख से मानक उत्सर्जन तत्वों का उपयोग करके लगाया गया था (सारणी 9.1 देखें)।

सारणी 9.1 में उत्सर्जन तत्वों का उपयोग करते हुए पेट्रोल और डीजल के लिए निवल उत्पाद शुल्क के समकक्ष कार्बन कर (उत्पाद शुल्क से कम वसूली की राशि घटाकर) चित्र 9.3 में दर्शाया गया है। महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि भारत कार्बन सब्सिडी के क्षेत्र से महत्वपूर्ण कार्बन कराधान क्षेत्र की ओर बढ़ा है- कार्बन उत्सर्जन पर ऋणात्मक मूल्य से धनात्मक मूल्य की ओर। यह परिवर्तन बहुत बड़ा है। उदाहरण के लिए अक्तूबर, 2014 से हालिया कार्यों के प्रभाव से कार्बन कर पेट्रोल के मामले में प्रति टन कार्बन डाइऑक्साइड लगभग 60 अमरीकी डॉलर और डीजल के मामले में प्रति टन लगभग 42 अमरीकी डॉलर बढ़ गया है। वास्तविक अर्थ में अप्रत्यक्ष कार्बन कर (पेट्रोल के लिए 140 अमरीकी डॉलर और डीजल के लिए 64 अमरकी डॉलर) बहुत अधिक है। जो अब कार्बन डाइऑक्साइड के उत्सर्जन पर 25 अमरीकी डॉलर 35 अमरीकी डॉलर समुचित आरंभिक कर समझा जाता है (तथापि यह नीचे उल्लेख किए गए की तरह कोयला उपकर के लिए लागू नहीं होगा)[7]। केवल हालियां कार्यों में भारत के ग्रीन और जलवायु परिर्वतन विश्वसनीयता को बहुत अधिक बढ़ाया है।

सारणी 9.1: उत्सर्जन तत्व[1]

विवरण	मूल्य	यूनिट	स्रोत
कार्बन उत्सर्जन तत्व			
कोयला	25.8	tC/TJ	IPCC[2]
डीजल	20.2	tC/TJ	IPCC[2]
पेट्रोल	18.9	tC/TJ	IPCC[2]
निवल कैलोरिक मूल्य			
कोयला	18.8	TJ/000 t	IEA[3]
डीजल	43.3	TJ/000 t	IPCC[2]
पेट्रोल	44.8	TJ/000 t	IPCC[2]
आक्सीडेशन दरें			
ठोस	100.0	प्रतिशत	IPCC[2]
द्रव्य	100.0	प्रतिशत	IPCC[2]
कार्बन उत्सर्जन तत्व			
कोयला	1.782	tCO2 /t	
डीजल	3.210	tCO2 /t	
पेट्रोल	3.105	tCO2 /t	

[1] **टिप्पणी** : पेट्रोल और डीजल के उत्सर्जन तत्व वैश्विक औसत पर हैं। कोयले के लिए उत्सर्जन तत्व भारत में कोयले के औसत ताप घटक को प्रदर्शित करने के लिए समायोजित किया जाता है। राष्ट्रीय ग्रीन हाउस गैस इन्वैन्ट्रिज के लिए 2006 आईपीसी सी से दिशा-निर्देश। अंतरराष्ट्रीय ऊर्जा एजेंसी 2012, भारत में ऊर्जा चुनौतियों को समझना टी॰सी॰: टन कार्बन, टी॰ जे॰ तेराजूल, टी: टन, टीसीटू: टन ऑफ कार्बन डाइऑक्साइड।

[6] हाल में अमरीका और चीन जो दो सबसे बड़े उत्सर्जक हैं ने जलवायु परिवर्तन संबंधी करार पर हस्ताक्षर किए हैं, जिसके द्वावा चीन 2030 तक उत्सर्जन संबंधी कार्य जोरों से करने के लिए सहमत हुआ है और अमरीका सहमत हुआ है कि 2005 की तुलना में यह 2025 में 26 प्रतिशत से 28 प्रतिशत कम कार्बन उत्सर्जित करेगा। बदलते जलवायु पर अपने प्रभाव के अर्थ में जबकि पहले भी ऐसे प्रयास किए गए, फिर भी दो सबसे बड़े उत्सर्जकों के बीच सहयोग के संकेत से विश्व भारत की भावी जलवायु के प्रति बचनबद्धता की सराहना करने लगा है।

[7] अभी भी इस संख्या के बारे में लेख में बहुत अधिक चर्चा है। उदाहरण के लिए स्टर्न (2013) में उल्लेख है कि कार्बन से खतरों और नुकसानों को देखते हुए इसे कम करके आंका गया है। (स्टर्न सं॰ 2013 ''द स्ट्रक्चर ऑफ इकॉनोमिक मॉडलिंग ऑफ द पोर्टशियल इम्पैक्ट्स ऑफ क्लाइमेट चेंज: ग्राफिटंग ग्रॉस अंडर एस्टीमेशन ऑफ रिस्क ऑलरेडी नैरो साइंस मॉडल्स'' जर्नल ऑफ इकॉनोमिका लिटरेचर 51: 838-859).

चित्र 9.3: पेट्रोल तथा डीजल पर बढ़ते उत्पाद शुल्क से अप्रत्यक्ष कार्बन कर मई 2014 से जनवरी 2015 (अमरीकी डॉलर/टीसीओ2)

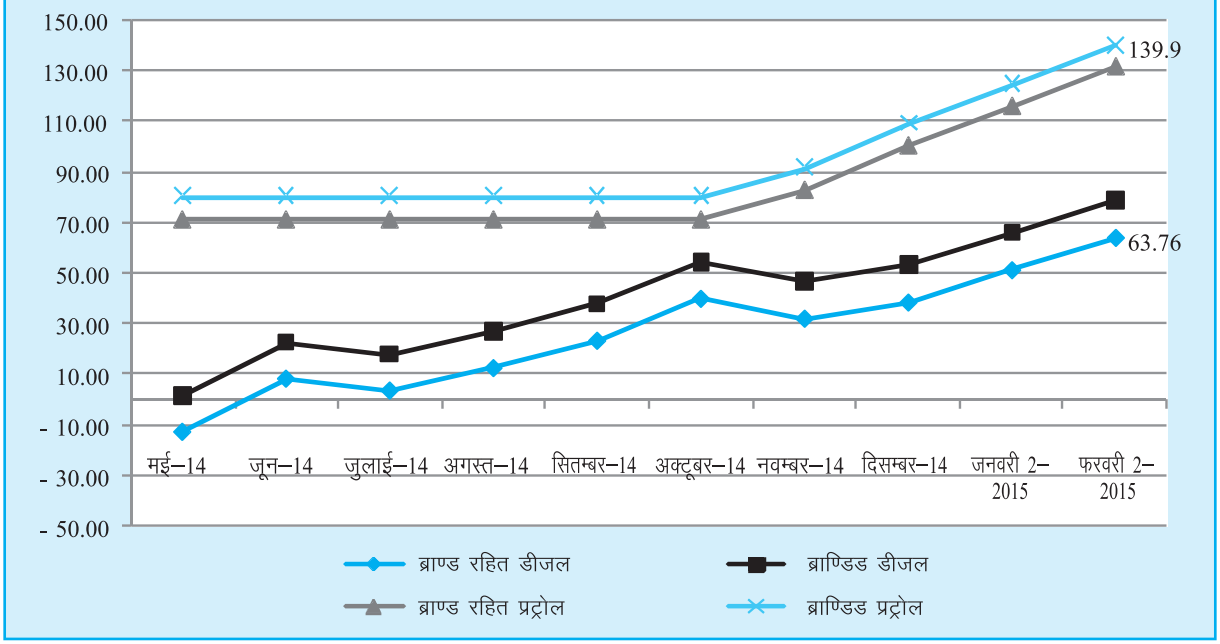

यह उल्लेखनीय है कि अप्रत्यक्ष कार्बन कर के पूर्ण आकलन में डीजल और पेट्रोल के कुल कराधान और अप्रत्यक्ष कराधान की औसत दर के बीच अंतर का अनुमान लगाना शामिल है। अंतिम परिणाम चित्र 9.3 में प्रस्तुत किए गए परिणाम से अलग हो सकता है और राज्यों के अलग-अलग कराधान की मौजूदा प्रणाली को देखते हुए अलग-अलग राज्यों में इसमें भिन्नता होगी। कुछ हद तक कार्बनडाइऑक्साइड कर अनुमान यह देखते हुए कि राज्य पेट्रोलियम उत्पादों पर उच्च अप्रत्यक्ष कर अधिरोपित करते हैं, इसमें कमी प्रदर्शित करते हैं।

9.3 अन्य देशों की तुलना में भारत की स्थिति

जबकि पेट्रोल और डीजल की कीमत को नियंत्रणमुक्त करने में भारत ने हाल में काफी प्रगति की है और विश्व में गिरती तेल कीमतों के लिए क्षतिपूर्ति करने हेतु उत्पाद शुल्क को यौक्तिक बनाया है, यह पूछना प्रासंगिक होगा कि वैश्विक रूप से विशेषकर, अन्य देशों के संबंध में भारत का स्थान क्या है। भारत के कार्बन कर के आकड़े अन्य सरकारी एजेंसियों, वित्तीय संस्थाओं और अग्रणी निजी कंपनियों द्वारा अपनाई गई दरों के बहुत अनुकूल हैं।

चित्र 9.4 में भारत की तुलना अधिकांश गैर ओईसीडी देशों और संयुक्त राज्य अमरीका तथा यूरोपीय संघ के साथ बैंच मार्क के रूप में की गई है। इसमें उल्लेख किया गया है कि यद्यपि 2012 और 2015 के बीच कीमत में उल्लेखनीय वृद्धि) हुई है, पेट्रोलियम के मूल्य निर्धारण नीतियों में और अधिक सुधार करने की अभी भी गुंजाइश है। जिसे परिवहन ईंधन की सामाजिक कीमत के लिए सबसे कम माना जा सकता है। लाल लाइन में 2012 और 2015 में भारत की कीमतें हैं।

9.4 पेट्रोल और डीजल करों एवं कोयला उपकर से कार्बनडाइऑक्साइड के उत्सर्जन में कमी

पेट्रोल और डीजल के लिए किए गए उपायों के लिए कार्बनडाइऑक्साइड के उत्सर्जन में कमी के परिकलन से पता चलता है कि एक वर्ष से कम समय में कार्बनडाईऑक्साइड के उत्सर्जन में 11 मिलियन टन की कमी आएगी जो आधार लाइन (चित्र 9.5 देखें) यह 0.6 प्रतिशत भारत के वार्षिक उत्सर्जन की तुलना में 2012 में लग्जमबर्ग के समग्र कार्बनडाईऑक्साइड के उत्सर्जन से अधिक है[8]।

9.5 कोयला उप कर को कार्बन कर में बदलना

हाल ही में भारत सरकार ने अपने कोयला उपकर में संशोधन करके 50 रु॰ प्रति टन से 100 रु॰ प्रति टन किया है सारणी 9.1 में उत्सर्जन तत्वों का उपयोग करते हुए इसके समकक्ष कार्बन कर से यह पता चलता है कि कार्बन कर लगभग 1 अमरीकी डॉलर प्रति टन है (2014 में

[8] संयुक्त राज्य-चीन के करार से 2030 तक 640 बिलियन टन कार्बनडाइऑक्साइड से बचा जा सकता है।

चित्र 9.4: पेट्रोल की तुलनात्मक कीमतें 2012 (लीटर/अमरीकी डॉलर)

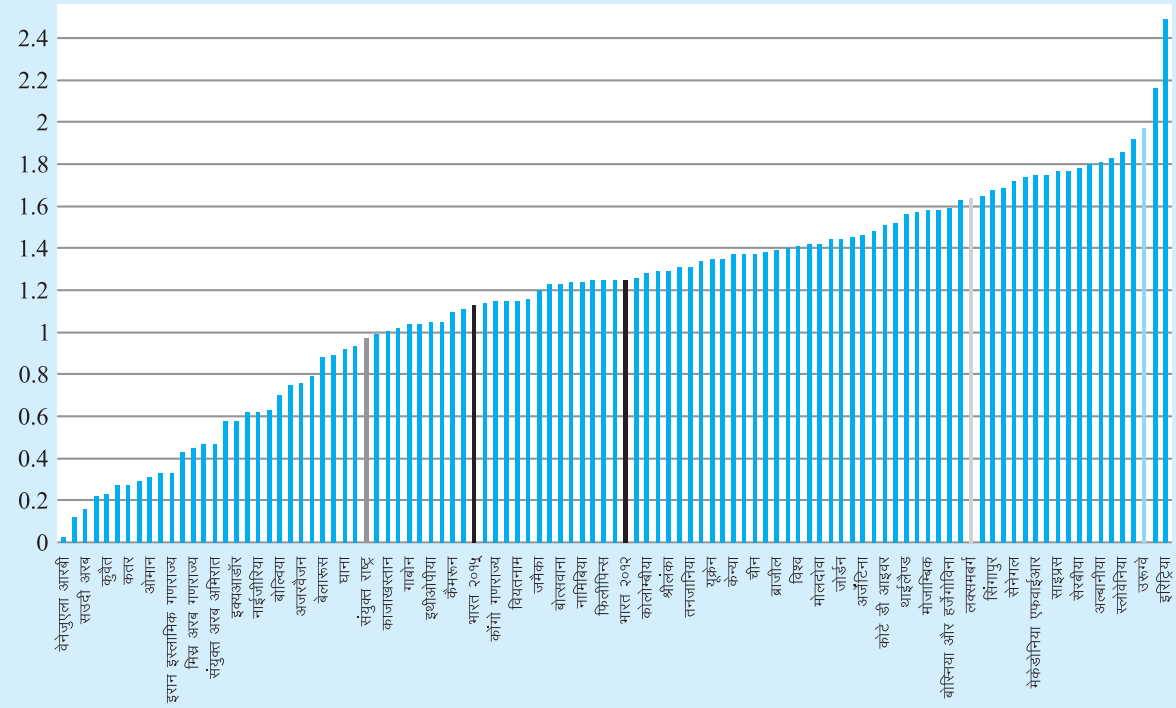

चित्र 9.4: डीजल की तुलनात्मक कीमतें 2012 (लीटर/अमरीकी डॉलर)

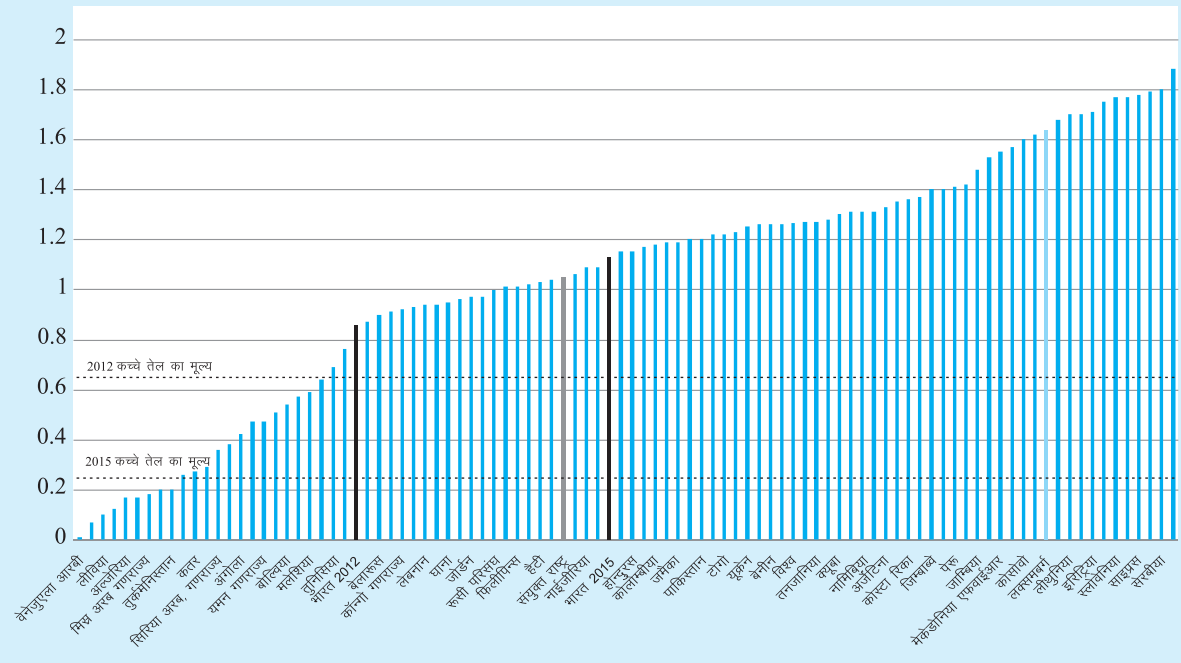

स्रोत : *जर्मन अंतर्राष्ट्रीय सहयोग एजेंसी* 2012 अति अद्यतन वर्ष है जिसके लिए आंकड़े उपलबध हैं। पीली लाइन संयुक्त राज्य 2012 की कीमत दर्शाती है, यह गैर सब्सिडी प्राप्त सड़क परिवहन नीति के लिए अंतराष्ट्रीय न्यूनतम बैंच मार्क है। हरी लाइन लग्जमबर्ग में कीमतों को दर्शाती है जो यूरोपीय संघ 15 में सबसे कम है जो कि परिवहन मूल्य के समाजिक कीमत सबसे निचला स्तर है। लाल लाइनें भारत की कीमतों को 2012 और 2015 में दर्शाती हैं।

चित्र 9.5: पेट्रोल से होने वाले सीओटू उत्सर्जन में कमी तथा 2014 में डीजल मूल्य निर्धारण संबंधी उपाय

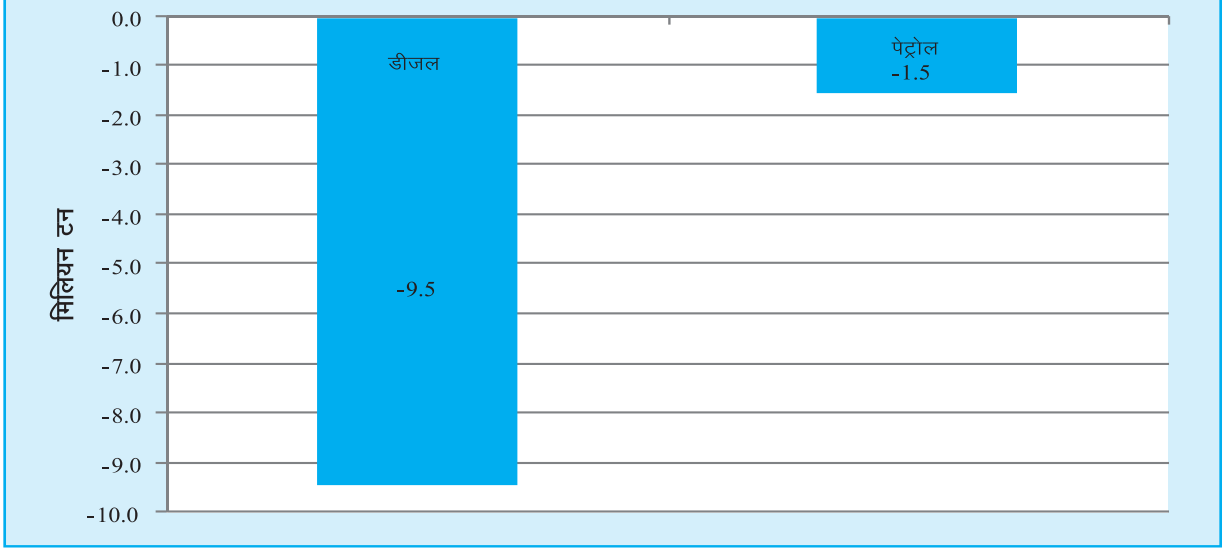

स्रोत : विश्व बैंक अनुमान

0.5 अमरीकी डॉलर प्रति टन से बढ़ोतरी हुई है)। यद्यपि यह सरकार को राजस्व की बड़ी राशि (17,000 करोड़ रुपये अब तक) जुटाने में समर्थ बनाता हैं, यह कोयला के जलने से उत्पन्न बर्हिमुखता को नहीं दर्शाता या किसी सुझाए गए वैश्विक कार्बन कर को नहीं दर्शाता है। हालिया गिरती कोयला कीमतों को और स्थानीय तथा वैश्विक दोनों प्रकार के प्रदूषण में कोयल के योगदान के आलोक में कोयला मूल्य निर्धारण को और अधिक संगत बनाने की संभावना बनी हुई है। कोयला मूल्य निर्धारण के किसी यौक्तिकीकरण में विद्युत कीमतों के निहितार्थ को ध्यान में रखा जाना है और इसलिए भारत में सबसे निर्धन के लिए ऊर्जा की सुलभता भी आवश्यकता है जो नीति का मूल्य उद्देश्य है और बना रहेगा।[9]

चित्र 9.6: वैकल्पिक कोयला कर-निर्धारण निहितार्थ; कोयला मूल्य वृद्धि तथा सीओटू में कमी

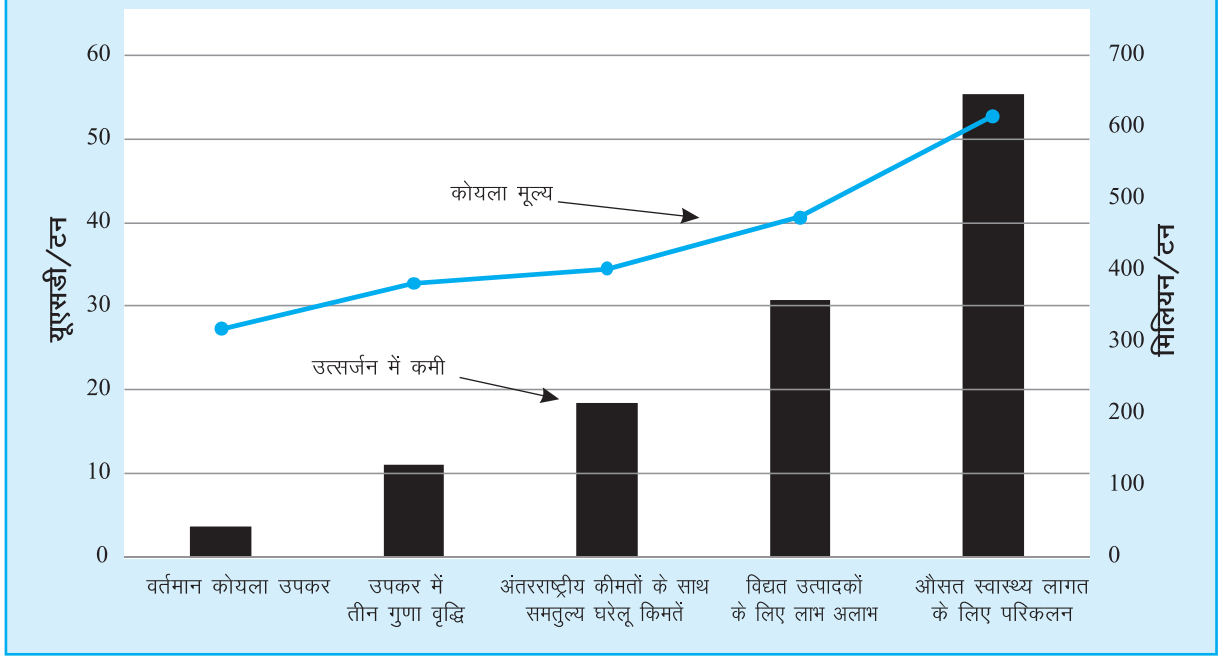

स्रोत : विश्व बैंक अनुमान

[9] यह भारत सरकार के उच्च प्राथमिकता वाले क्षेत्रों में से एक अर्थात् अक्षय ऊर्जा के साधनों के जरिए लोगों तक पहुंच और उनका सशक्तिकरण करने के अलावा है। यह सुदूर क्षेत्रों में ग्रिड की सीमित पहुंच वालों के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण है।

4 परिकाल्पनिक परिदृश्य इस प्रकार हैं (चित्र 9.6):

क. मौजूदा उप कर में तीन गुना वृद्धि

ख. उप कर में वृद्धि जो आयातित कोयले के साथ घरेलू कोयले की कीमत समतुल्य करेगी (घरेलू और आयातित कोयले के बीच ताप और राख तत्व में अंतर के लिए समायोजन)[10]

ग. केवल घरेलू बहिर्मुखता को अंतर्मुख करने के लिए उप कर में वृद्धि अनिवार्य है-मुख्यतया: कार्बन प्रदूषण से स्वस्थ्य संबंधी लागतें संबंधित हैं।

घ. उपकर में अधिकतम संभावित वृद्धि जिसे कोयला आधारित विद्युत उत्पादक वहन कर सकें।

सारणी 9.1 में दिए गए उत्सर्जन तत्वों का उपयोग करते हुए परिकलन और कोयला के लिए (-)0.5 प्रतिशत मांग की लोच मान लेने से यह पता चलता है कि मौजूदा उपकर से तीन गुना वृद्धि के परिणामस्वरूप वार्षिक कार्बनडाइऑक्साइड उत्सर्जन में 129 मिलियन टन की कमी आएगी या कुल वार्षिक उत्सर्जन का लगभग 7 प्रतिशत कम होगा। घरेलू कीमतों को अंतरराष्ट्रीय कीमतों के समकक्ष लाने में 9 अमरीकी डॉलर प्रति टन उप कर में वृद्धि या 498 रुपये (पांच गुना वृद्धि) करने की आवश्यकता होगी। इस प्रकार के कोयले की कीमत में सुधार से कार्बनडाइऑक्साइड के उत्सर्जन में 214 मिलियन टन कमी आ सकती है, जो भारत के वार्षिक उत्सर्जन का 11 प्रतिशत है या आधार लाइन की तुलना में 2012 में इंडोनेशिया के समग्र उत्सर्जन का आधार हो सकता है। मौजूदा प्रशुल्क संरचना को देखते हुए अब भी अधिकांश कोयला आधारित विद्युत संयंत्रों को लाभकारी स्थिति में बनाए रखना संभव होगा।

भारत में विद्युत उत्पादन के लिए कोयला की स्वस्थ्य क्षेत्र में **लागत 3.41** अमरीकी डॉलर/टन से 51.11 अमरीकी डॉलर/टन के दायरे में अनुमानित है, यह संख्यिकीय जीवन के मूल्य पर निर्भर करती है। औसत संख्या 27.26 अमरीकी डॉलर/टन हैं। कोयला चालित विद्युत संयंत्रों से उत्सर्जन की स्वास्थ्य क्षेत्र की लागत में परिपक्वता पूर्व हृदय संबंधी रोग से मृत्यु और अधिक समय तक सम्पर्क में रहने के दीर्घकालिक प्रभावों से बीमारियां और कम समय तक सम्पर्क में रहने के तीक्ष्ण प्रभाव से संबंधित लागत शामिल हैं। कार्बनडाइऑक्साइड की वार्षिक उत्सर्जन कमी के समतुल्य कोयला की कीमत 644 मिलियन/टन (कुल उत्सर्जन का 33 प्रतिशत) औसत स्वास्थ्य लागत को शामिल करना और कुल वार्षिक उत्सर्जन कमी के प्रतिशत के समतुल्य 3.41 अमरीकी डॉलर में समतुल्य तथा 51.11 अमरीकी डॉलर/टन का उपकर क्रमश: 4 प्रतिशत और 61 प्रतिशत है। इसमें बहुत अधिक स्वास्थ्य संबंधी लाभ भी हैं।

उपकर अधिकतम, बढ़ाया जा सकता है ताकि कोयला आधारित विद्युत उत्पादक 15 अमरीकी डालर प्रति टन पर अब भी भरपाई कर सकते हैं। इससे बड़े पैमाने पर विद्युत संयंत्र अपने लागत की भरपाई करेंगे और इसके परिणामस्वरूप प्रतिवर्ष 358 मिलियन टन कार्बन डाइऑक्साइड के उत्सर्जन में कमी आ सकती है जो फ्रांस के समग्र कार्बन डाई ऑक्साइड के उत्सर्जन से अधिक है। यह परिकाल्पनिक कार्य है क्योंकि विद्युत संयंत्रों के फायदे में कमी आने से विद्युत प्रशुल्क को युक्ति संगत बनाने की आवश्यकता होगी जो बहुत अधिक बाधक हो सकती है।

9.6 निष्कर्ष और मुख्य संदेश

- भारत ने सब्सिडियों में करौती की है और कार्बन सब्सिडी व्यवस्था को कार्बन कराधान में परिवर्तित करते हुए जीवाश्म ईंधनों (पेट्रोल और डीजल) पर कर बढ़ा दिया गया है।
- वार्षिक कार्बन डाईऑक्साइड उत्सर्जनों को कम करते समय यह इसमें पेट्रोल और डीजल की कीमत को महत्वपूर्ण रूप से वढ़ा दिया गया है।
- किन्तु अभी भी लम्बी दूरी तय करना है और काफी बड़ी क्षमताओं के साथ अभी भी कोयला कीमतों के निर्धारण में सुधार किया जाता हैं और आगे भी पेट्रोलियम की कीमत निर्धारण नीतियों में सुधार करना है।
- कुल मिलाकर, भारत के महत्वाकांक्षी सौर ऊर्जा कार्यक्रम के संयुक्त प्रर्याप्त कार्बन कराधान का यह पहल दर्शाता है कि जलवायु परिवर्तन पर होने वाले पेरिस वार्ता में भारत पर्याप्त योगदान दे सकता है।

---

[10] जनवरी 2015 में, जबकि औसत अंतरराष्ट्रीय मूल्य 46 टन अमरीकी डालर था, औसतन घरेलू मूल्य 25 टन अमरीकी डालर था, ऊश्मा और राख की मात्रा का समायोजन किए बिना।

[11] करौपर. एम.एस. गमखर, के. मलिक, ए. लिमोनोव और आई. पार्टरिज, ''द हेल्थ इंफेक्टस ऑफ कोल इलेक्ट्रिसिटी जैनरेशन इन इंडिया,'' 2012, आरएफएफ कार्य कागज।

चौदहवां वित्त आयोग – भारत में राजकोषीय संघवाद के लिए निहितार्थ[1]

10
अध्याय

''मेरा यह मानना है कि हमें सत्ता के ऊपरी स्तर से नहीं बल्कि बुनियादी स्तर से काम करना चाहिए ... सत्ता के बहुत अधिक केन्द्रीकरण से पूरी व्यवस्था विकृत होकर, आखिकार ठप्प हो जाती है''

– पंडित जवाहर लाल नेहरू

''हम देश में सहयोगात्मक संघवाद को बढ़ावा देना चाहते हैं। साथ ही, हम राज्यों में प्रतिस्पर्धा की भावना भी चाहते हैं। मैं इसे संघवाद, सहकारिता और प्रतिस्पर्धात्मक संघवाद का नया रूप कहना चाहता हूं''

– प्रधान मंत्री नरेन्द्र मोदी

10.1 प्रस्तावना

वित्त आयोग, भारत के संविधान के अनुच्छेद 280 के अधीन गठित किए जाने वाला एक संवैधानिक निकाय है। यह संघ और राज्यों के वित्त साधनों की स्थिति की समीक्षा करने, और एक स्थिर और स्थायी राजकोषीय परिवेश बनाए रखने के लिए सुझाव देने हेतु, भारत के राष्ट्रपति द्वारा प्रत्येक पांच वर्ष की समाप्ति पर गठित किया जाता है। यह विभाज्य पूल से केन्द्र और राज्यों के बीच करों के अंतरण के संबंध में भी सिफारिश करता है। इस पूल के अंतर्गत, अधिभार और उपकर के सिवाय सभी केन्द्रीय कर आते हैं। इन्हें राज्यों के बीच विभाजित करने का केन्द्र को संवैधानिक रूप से अधिदेश प्राप्त है।

चौदहवां वित्त आयोग डॉ॰ वाई॰वी॰ रेड्डी की अध्यक्षता में 2 जनवरी, 2013 को गठित किया गया था। उपर्युक्त मूल उद्देश्यों के अलावा, आयोग के विचारार्थ विषयों के लिए सहायता-अनुदानों (राज्यों को आयोजना-भिन्न अनुदान) की राशि और वितरण को अधिशासित करने वाले सिद्धांतों, स्थानीय सरकार के संसाधनों की अनुपूर्ति के लिए राज्य सरकार के वित्तसाधनों को बढ़ाने के लिए उपायों, यदि आवश्यक हैं, तथा सरकार के विभिन्न स्तरों पर वित्त साधनों की स्थिति, घाटा और ऋण-शर्तों की समीक्षा करने के संबंध में सुझाव मांगे गए थे।

10.2 14वें वित्त आयोग की मुख्य सिफारिशें

14वें वित्त आयोग ने 2015-16 से 2020-21 की अवधि के लिए अपनी सिफारिशें प्रस्तुत कर दी हैं। इनसे केन्द्र-राज्य संबंधों पर, बजट-निर्धारण पर, और केन्द्र एवं राज्यों की वित्तीय स्थिति पर मुख्य प्रभाव पडने होने की संभावना है। कुछ मुख्य सिफारिशें निम्नवत हैं:

- ***14वें वित्त आयोग ने केन्द्रीय विभाज्य पूल में राज्यों का हिस्सा वर्तमान 32 प्रतिशत से बढ़ाकर मूलतः 42 प्रतिशत कर दिया है, जो उर्ध्वाधर अंतरण में अब तक का सबसे अधिक है।*** पिछले दो वित्त आयोगों अर्थात् 12वें (अवधि 2005-2010) और 13वें (अवधि 2010-2015) ने केन्द्रीय विभाज्य पूल में राज्य हिस्सा क्रमशः 30.5 प्रतिशत (1 प्रतिशत की वृद्धि) और 32 प्रतिशत (1.5 प्रतिशत की वृद्धि) की सिफारिश की थी।
- 14वें वित्त आयोग ने राज्यों के बीच विभाज्य पूल में राज्य हिस्से के वितरण के लिए नए क्षैतिज सूत्र (सारणी 10.1) का भी सुझाव दिया है। सम्मिलित/असम्मिलित परिवर्तनीय कारकों तथा उन्हें सौंपे जाने वाले भारांशों, दोनों में बदलाव हैं। 13वें वित्त आयोग की अपेक्षा, 14वें वित्त आयोग ने दो नए परिवर्तनीय कारक जोड़े हैं - 2011 की जनसंख्या और वन क्षेत्र; और राजकोषीय अनुपालन कारक को निकाल दिया है। (बाक्स-1)।

[1] बजट प्रस्तुत किए जाने के बाद इस अध्याय का एक विस्तृत रूप finmin.nic.in पर उपलब्ध होगा।

बाक्स-10.1 : वित्त आयोग - अवधारणाएं और परिभाषाएं

कर अंतरण

संविधान के अनुच्छेद 280 (3)(क) में की गई व्यवस्था के अनुसार, वित्त आयोग के मुख्य कार्यों में से एक मुख्य कार्य करों के शुद्ध आगमों का केन्द्र और राज्यों के बीच वितरण के संबंध में सिफारिश करना है। यह किसी वित्त आयोग का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य है क्योंकि केन्द्रीय करों के शुद्ध आगमों में राज्य का हिस्सा केन्द्र से राज्यों को किए जाने वाले संसाधन अंतरण का प्रधान माध्यम है।

विभाज्य पूल

विभाज्य पूल सकल कर राजस्व का वह भाग होता है, जो केन्द्र और राज्यों के बीच बांटा जाता हे। विभाज्य पूल निर्दिष्ट उद्देश्य के लिए उद्गृहीत अधिभारों और उप-कर के सिवाय, सभी करों, निवल संग्रहण प्रभार से मिलकर बनता है।

संविधान (80वां संशोधन) अधिनियम, 2000 के अधिनियमित किए जाने से पूर्व, केन्द्रीय कर राजस्वों में राज्यों का हिस्सा उस समय लागू अनुच्छेद 270 और 272 के उपबंधों के अनुसार था। संविधान के अस्सीवें संशोधन ने केन्द्रीय करों में विभाजन की प्रक्रिया मूल रूप से बदल दी। इस संशोधन के अंतर्गत अनुच्छेद 272 निकाल दिया गया तथा अनुच्छेद 270 में काफी बदलाव कर दिया गया। नया अनुच्छेद 270 में केन्द्रीय सूची में निर्दिष्ट सभी करों और शुल्कों, अनुच्छेद 268 और अनुच्छेद 269 में क्रमशः निर्दिष्ट करों और शुल्कों, तथा अनुच्छेद 271 में निर्दिष्ट करों और शुल्कों पर अधिभार तथा विशिष्ट उद्देश्यों के लिए उद्गृहीत कोई उप-कर को छोड़कर, के विभाजन की व्यवस्था है।

सहायता अनुदान

क्षैतिज असंतुलनों का समाधान वित्त आयोग और कर अंतरण और अनुदानों की पद्धति के माध्यम से किया जाता है, पहले वाली लिखत का प्रयोग प्रमुखता से किया जाता है। संविधान के अनुच्छेद 275 के अधीन, वित्त आयोगों को सहायता की आवश्यकता वाले राज्यों को, अनुदानों के सिद्धांत और धनराशि की सिफारिश करने का अधिदेश है तथा भिन्न-भिन्न धनराशियां नियत की जा सकेंगी। इस प्रकार अनुदानों की पूर्वापेक्षाओं में से एक पूर्वापेक्षा राज्यों की आवश्यकताओं का आकलन करना है।

पहला, वित्त आयोग ने अनुदान के लिए राज्य की पात्रता अवधारित करने के पांच विस्तृत सिद्धांत निश्चित किए थे। पहला था, किसी राज्य का बजट उसकी आवश्यकता की जांच के लिए प्रारंभिक बिन्दु है। दूसरा, राज्यों द्वारा क्षमता साकार करने के लिए किया गया प्रयास था। तीसरा, सभी राज्यों में मूल सेवाओं के मानकों को समान करने में अनुदानों से मदद मिलनी चाहिए। चौथा, राज्य के कार्यक्षेत्र के अंतर्गत राष्ट्रीय हितों के कोई विशिष्ट भार या बाध्यताओं को भी ध्यान में रखा जाए। पांचवां, कम विकसित राज्यों के लिए राष्ट्रीय हितों के किसी फायदे वाली सेवा के लिए अनुदान अवश्य दिए जाएं।

वित्त आयोग द्वारा संस्तुत अनुदान मुख्यतया सामान्य उद्देश्य के अनुदानों के स्वरूप के होते हैं जिनके माध्यम से प्रत्येक राज्य के आयोजना-भिन्न राजस्व मदें आकलित व्यय तथा केन्द्रीय करों में राज्य के हिस्से लक्षित राजस्व के बीच अंतर की पूर्ति की जाती है। इन्हें प्रायः ''अंतर-पूर्त अनुदानों'' के रूप में जाना जाता है। पिछले वर्षों में राज्य के लिए अनुदानों का क्षेत्र और भी काफी बढ़ गया जिनसे कि उनकी विशिष्ट सेवाएं शामिल की जा सकें। संविधान में 73वां और 74वां संशोधन करने के पश्चात् वित्त आयोग को स्थानीय निकायों के संसाधनों की अनुपूर्ति के लिए राज्य की संचित निधि में इजाफा करने के उपाय सुझाने का अतिरिक्त उत्तरदायित्व सौंपा गया था। इससे वित्त आयोग अनुदानों के क्षेत्र में और विस्तार हो गया है। 10वां वित्त आयोग पहला आयोग था, जिसने ग्रामीण और शहरी स्थानीय निकायों के लिए अनुदानों की सिफारिश की । इस प्रकार, पिछले वर्षों में सहायता अनुदानों के क्षेत्र में काफी विस्तार हुआ है।

वित्तीय क्षमता/आय में अंतर

आय में अंतर का मापदण्ड पहली बार 12वें वित्त आयोग द्वारा प्रयोग किया गया था। कर क्षमता में राज्यों के बीच अंतर प्रोक्सी के रूप में प्रति व्यक्ति जीएसडीपी द्वारा मापा गया था। जब इस प्रकार प्रोक्सी किया गया, प्रक्रिया में स्पष्ट रूप से राज्यों के बीच राजकोषीय क्षमता अंतर को अवधारित करने के लिए एकल औसतन कर - से जीएसडी अनुपात में यह प्रक्रिया स्पष्ट रूप से लागू की जाती है। 13वें वित्त आयोग ने यह फार्मूले में मामूली बदलाव किया है और कर क्षमता मापने के लिए अलग-अलग औसत के प्रयोग की सिफारिश की थी: एक सामान्य श्रेणी के राज्यों के लिए और दूसरी विशेष श्रेणी के राज्यों के लिए।

राजकोषीय अनुशासन

कर अंतरण के लिए मापदण्ड के रूप में राजकोषीय अनुशासन का प्रयोग 11वें और 12वें वित्त आयोग द्वारा किया गया था ताकि राज्यों को अपने वित्त साधन विवेकपूर्ण ढंग से व्यवस्थित करने के लिए प्रोत्साहन दिया जा सके। यह मापदण्ड 13वें वित्त आयोग में बगैर किसी बदलाव के जारी रहा। राजकोषीय अनुशासन के सूचकांक पर किसी राज्य की अपनी राजस्व प्राप्तियों को उसके कुल राजस्व व्यय से सुधारों से तुलना करने पर पहुंचा जा सकता है। इससे सभी राज्यों के तदनुरूपी औसत से भी तुलना होती है।

सारणी 10.1 : 13वें और 14वें वित्त आयोगों में क्षैतिज अंतरण

परिवर्तनीय कारक	प्रदत्त भारांश	
	13वां	14वां
जनसंख्या (1971)	25	17.5
जनसंख्या (2011)	0	10
राजकोषीय क्षमता/आय वितरण (बाक्स-1 देखें)	47.5	50
क्षेत्रफल	10	15
वन क्षेत्र	0	7.5
राजकोषीय अनुशासन (बाक्स-1 देखें)	17.5	0
जोड़	100	100

स्रोत : 13वें और 14वें वित्त आयोग की रिपोर्टें।

- कई अन्य प्रकार के अंतरणों का सुझाव दिया गया है, जिनके अंतर्गत ग्रामीण और शहरी स्थानीय निकायों को अनुदान, आपदा राहत के लिए अनुदानों सहित निष्पादन अनुदान और राजस्व घाटा सम्मिलित हैं। 2015-20 की अवधि के लिए ये अंतरण कुल मिलाकर लगभग 5.3 लाख करोड़ रुपए के हैं।[2]
- 14वें वित्त आयोग ने 13वें वित्त आयोग के विपरीत सैक्टर विशिष्ट अनुदानों से संबंधित कोई सिफारिश नहीं की है।

10.3 राजकोषीय संघवाद के लिए 14वें वित्त आयोग की सिफारिशों के निहितार्थ – आगामी व्यवस्था

14वें वित्त आयोग ने अपनी सिफारिशों और लक्ष्यों के आधार पर, राज्यों के राजस्वों के लिए विवक्षाओं का आकलन और निर्धारण आवश्यक है। इस विश्लेषण में राजस्व विवक्षाओं का आकलन अधिक हालिया डाटा (2014-15) के लिए के आधार पर लगाया जाता है और मामूली रूप से सकल घरेलू उत्पाद, कर बढ़ोत्तरी और अन्य राजकोषीय पैरामीटरों के बारे में धारणाओं से भिन्न है। वित्त वर्ष 2014-15 और वित्त वर्ष 2015-16 से संबंधित कतिपय धारणाओं पर आधारित अनुमानित लाभ (कर अंतरण से तथा 14वें वित्त आयोग अनुदान दोनों से) सारणी 10.2 में दर्शाए गए हैं। वित्त वर्ष 2014-15 के मुकाबले वित्त वर्ष 2015-16 में 14वें वित्त आयोग के अंतरणों में कुल वृद्धि लगभग 2 लाख करोड़ रुपए (कर राजस्व और 14वें वित्त आयोग अनुदानों दोनों से) होने का अनुमान है। कई मुद्दों का उल्लेख करना आवश्यक है।

समग्र संदर्भों में एफ.एफ.सी. अंतरणों से ***सभी राज्य लाभान्वित*** होते हैं। तथापि, संवितरण प्रभावों के आकलन के लिए, वर्तमान बाजार मूल्य[4] पर निवल राज्य घरेलू उत्पाद (एनएसडीपी), आबादी; या राज्य की अपनी कर राजस्व प्राप्तियों[5] आदि को मानक बनाया जाता है। इन्हें सारणी 10.2 के कॉलम 4-6 में दिखाया गया है। सामान्य श्रेणी के राज्यों (बॉक्स-10.2) के अंतर्गत समग्र संदर्भों में, सबसे ज्यादा लाभान्वित होने वाले राज्य उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश हैं जबकि विशेष श्रेणी प्राप्त राज्यों में जम्मू और कश्मीर, हिमाचल प्रदेश और असम हैं। इसके प्रभाव का बेहतर पैमाना आय प्रति व्यक्ति लाभ है। प्रति व्यक्ति लाभ के संदर्भ में, प्रमुख लाभांन्वित राज्यों में सामान्य श्रेणी के राज्यों

बॉक्स 10.2: विशेष श्रेणी के राज्य (एससीएस) और सामान्य श्रेणी के राज्य (जीसीएस)

विशेष श्रेणी के राज्यों की अवधारणा सबसे पहले कतिपय सुविध हीन और जरूरतमंद राज्यों की केन्द्रीय सहायता और टैक्स ब्रेक के रूप में प्राथमिकता देने की दृष्टि से पांचवें वित्त आयोग द्वारा 1969 में शुरू की गई थी। आरम्भ में **असम, नागालैण्ड और जम्मू-कश्मीर आदि तीन ही राज्य इसमें शामिल थे किन्तु 8 और राज्यों (अरूणाचल प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, सिक्किम, त्रिपुरा, और उत्तराखण्ड)** और जुड़ गए। इनके अलावा, अन्य सभी राज्य सामान्य श्रेणी के राज्य हैं। इन राज्यों को विशेष दर्जा देने के पीछे मुख्य वजह संसाधन आधार का कम होना और विकास के लिए अपेक्षित संसाधनों को न जुटा पाना जैसे पुराने कारण हैं। विशेष श्रेणी के लिए अपेक्षित कतिपय अन्य कारणों में- (i) पर्वतीय और दुर्गम क्षेत्र होना (ii) आबादी का घनत्व कम होना या आबादी में अधिकतर जनजातीए आबादी, (iii) पड़ोसी देशों से जुड़ी सीमाओं वाले रणनीति महत्व का राज्य होना, (iv) आर्थिक और अवसंरचनात्मक पिछड़ापन और (v) राज्य की वित्तीय स्थिति का डांवाडोल होना है।

[2] कर अंतरण को छोड़कर (ऊर्ध्वाधर और क्षैतिज) जो प्रतिशतता में निर्दिष्ट की जाती है, अन्य अंतरण सापेक्ष अंकों में निर्दिष्ट किए जाते हैं। चूंकि हम विभिन्न राजस्व अंकों का प्रयोग करते हैं, हमने यह मान लिया है कि ये अंतरण सामान्य स.घ.उ. वृद्धि की तर्ज पर मोटे तौर पर बढ़ेंगे।

[3] सकल घरेलू उत्पाद या राष्ट्रीय आय में वृद्धि के संबंध में राजस्व जुटाने की दक्षता और जवाबदेही मापने के लिए टैक्साबोयांसी एक संकेतक है। इसे सकल घरेलू उत्पाद में कर राजस्व के वृद्धि के अनुपात के रूप में मापा जाता है। यदि टैक्सबोयांसी एक से अधिक है तो कर संग्रहण में वृद्धि सकल घरेलू उत्पाद की दर में हुई वृद्धि से अधिक होगी।

[4] वर्ष 2012-13 के लिए वर्तमान बाजार मूल्यों पर एनएसडीपी

[5] वर्ष 2011-12 के लिए निजी कर राजस्व

सारणी 10.2 : अतिरक्त एफ.एफ.सी. अंतरण (2014-15 की तुलना में 2015-16 में)

राज्य	श्रेणी	एफ.एफ.सी. से लाभ (करोड़ रुपये)	प्रतिव्यक्ति लाभ (रुपए में)	ओटी आर के % के रूप में लाभ (रुपए में)	एन एस डी पी के % के रूप में लाभ
1	2	3	4	5	6
आंध्र प्रदेश (संयुक्त)	जीसीएस	14620	1728	27.4	2.2
अरुणाचल प्रदेश	एससीएस	5585	40359	1758.1	51.0
असम	एससीएस	7295	2338	95.5	5.8
बिहार	जीसीएस	13279	1276	105.3	4.9
छत्तीसगढ़	जीसीएस	7227	2829	67.5	5.2
गोवा	जीसीएस	1107	7591	44.1	3.0
गुजरात	जीसीएस	4551	753	10.3	0.8
हरियाणा	जीसीएस	1592	628	7.8	0.5
हिमाचल प्रदेश	एससीएस	8533	12430	207.7	14.6
जम्मू एंड कश्मीर	एससीएस	13970	11140	294.4	22.4
झारखण्ड	जीसीएस	6196	1878	89.1	4.8
कर्नाटक	जीसीएस	8401	1375	18.1	1.8
केरल	जीसीएस	9508	2846	37.0	3.1
मध्य प्रदेश	जीसीएस	15072	2075	55.9	4.5
महाराष्ट्र	जीसीएस	10682	951	12.2	0.9
मणिपुर	एससीएस	2130	8286	578.7	19.5
मेघालय	एससीएस	1381	4655	198.0	8.6
मिजोरम	एससीएस	2519	22962	1410.1	33.3
नागालैंड	एससीएस	2694	13616	886.5	18.7
ओडिशा	जीसीएस	6752	1609	50.2	3.2
पंजाब	जीसीएस	3457	1246	18.3	1.4
राजस्थान	जीसीएस	6479	945	25.5	1.6
सिक्किम	एससीएस	1010	16543	343.7	10.7
तमिलनाडु	जीसीएस	5973	828	10.0	0.9
त्रिपुरा	एससीएस	1560	4247	181.8	6.9
उत्तर प्रदेश	जीसीएस	24608	1232	46.8	3.5
उत्तराखंड	एससीएस	1303	1292	23.2	1.4
पश्चिम बंगाल	जीसीएस	16714	1831	67.0	3.0
कुल		204198	1715		

स्रोत **: वित्त मंत्रालय।**

जीसीएस : सामान्य श्रेणी के राज्य; एससीएस : विशेष श्रेणी के राज्य

में केरल, छत्तीसगढ़ और मध्य प्रदेश हैं। जबकि विशेष श्रेणी के राज्यों में अरूणाचल प्रदेश, मिजोरम और सिक्किम हैं।

उम्मीद की जाती है कि 14वें आयोग की सिफारिशें *राज्य के बजट की व्यय क्षमता में महत्वपूर्ण* इजाफा करेगी। अतिरिक्त व्यय क्षमता को चालू बाजार मूल्यों पर एन.एस.डी.पी. या राज्य को अपने कर राजस्व को लाभ प्राप्ति के अनुसार मापा जा सकता है। एनएसडीपी पर आधारित प्रभाव के संदर्भ में देखें तो सामान्य सेवा के राज्यों में 14वें वित्त आयोग के अंतरणों का अधिकतम लाभ छत्तीसगढ़, बिहार, झारखण्ड, को हुआ है और जबकि विशेष श्रेणी के राज्यों में अरूणाचल प्रदेश, मिजोरम, जम्मू कश्मीर प्रमुख हैं। राज्यों के अपने कर राजस्व के संदर्भ में देखें तो सामान्य श्रेणी के राज्यों में बिहार, झारखण्ड और छत्तीसगढ़ है तथा विशेष श्रेणी के राज्यों में अरूणाचल प्रदेश, मिजोरम और नागालैंड है।

14वें वित्त आयोग के अंतरणों का ज्यादा बेहतर प्रभाव अपेक्षाकृत कम विकसित राज्यों की तुलना में सामान्य श्रेणी के राज्यों के लिए ज्यादा लाभदायक है, जोकि इस बात का द्योतक है कि एफ.एफ.सी. के अंतरण प्रगतिशील हैं अर्थात् कम प्रति व्यक्ति एन.एस.डी.पी. वाले राज्यों के लिए अपेक्षाकृत ज्यादा अंतरण है। (चित्र 10.1)। एनएसडीपी और एफएफसी अंतरणों के बीच-0.72 का संबंध है जो कि दर्शाता है कि 14वें वेतन आयोग की सिफारिशें प्रमुख राज्यों के बीच आय और राजकोषीय विषमताओं को समान महत्व देने की दिशा में केन्द्रित है। तथापि, 14वें वित्त आयोग के अंतरण

चित्र 10.1: प्रति व्यक्ति एफएफसी अन्तरण और प्रति व्यक्ति एनएसडीपी

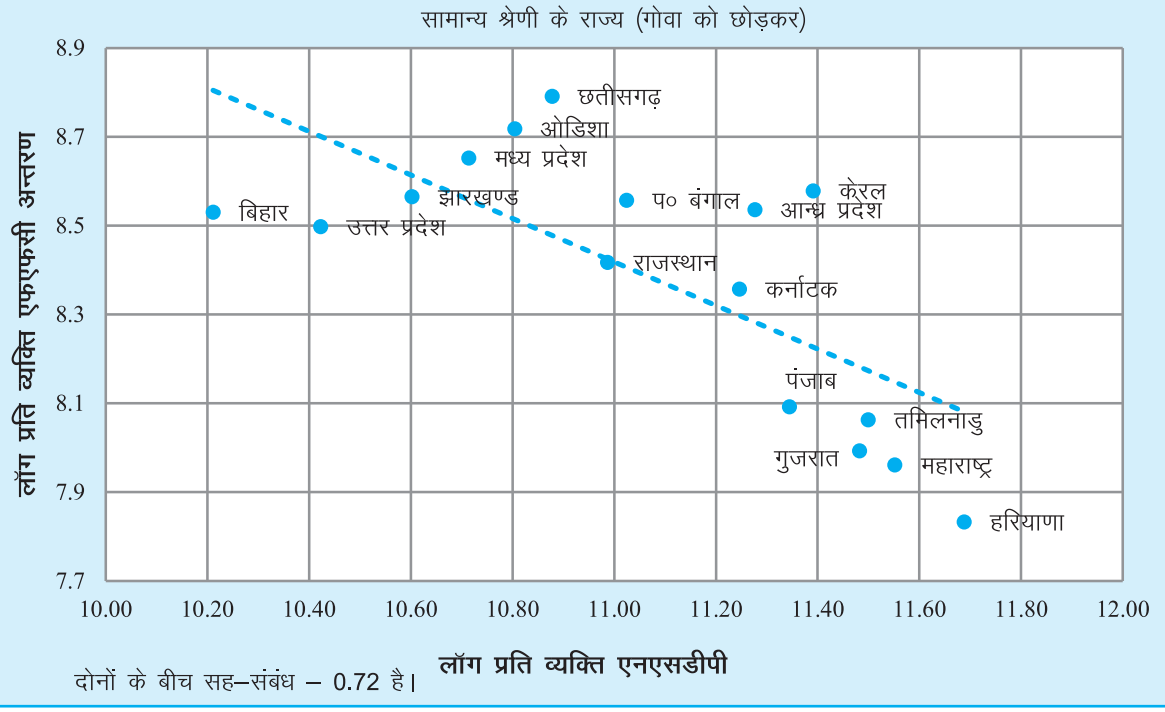

दोनों के बीच सह–संबंध – 0.72 है।

13वें वित्त आयोग (टीएफसी) की तुलना में थोड़ी कम प्रगतिशील हैं। प्रति व्यक्त एनएसडीपी और टीएफसी (2011-12; 2012-13 और 2013-14 का औसत) के बीच सहप्रभाव और सहसंबंध प्रति व्यक्ति-0.84 है। (चित्र 10.2)।

अंतिम रुचिकर निष्कर्ष यथा विभाज्य पूल में वृद्धि के कारण क्षैतिज्य हस्तांतरण के जरिए, कर के हस्तांतरण के जरिए संसाधन अंतरण का विखंडन से संबंधित है। विभाज्य पूल में वृद्धि के कारण महत्वपूर्ण प्रभाव उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, पश्चिम बंगाल और आंध्र प्रदेश जैसे राज्यों पर पड़ा

चित्र 10.2: प्रति व्यक्ति एफएफसी अन्तरण और प्रति व्यक्ति एनएसडीपी

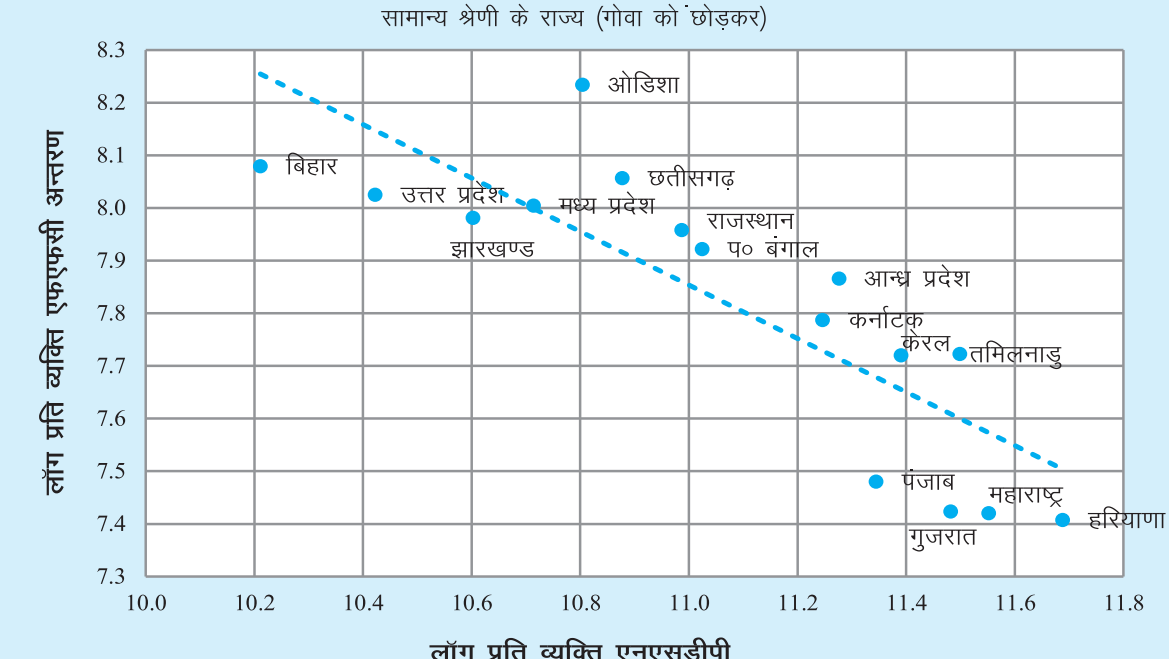

दोनों के बीच सह–संबंध – 0.84 है।

जबकि अरुणाचल प्रदेश, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, कर्नाटक और झारखण्ड जैसे राज्य क्षैतिज्य अंतरण सूत्र में परिवर्तन के कारण प्रमुख लाभ प्राप्तकर्ता हैं, अब इसके लिए वन विस्तार को अधिक भरांश दिया जाता है (सारणी 10.3)।

10.4 राजकोषीय स्वायत्तता और राजकोषीय संभावना में संतुलन

एफएफसी सिफारिशों के पीछे लक्ष्य राज्यों को स्वत: अंतरण करने की है ताकि उन्हें अधिकाधिक राजकोषीय स्वायत्तता दी जा सके और यह विभाज्य पूल से राज्यों का हिस्सा बढ़ाकर 32 से 42 प्रतिशत करके सुनिश्चित किया जाना है। एफएफसी की अनुशंसाओं को यथावत क्रियान्वित करने से यह समस्या है कि राजकोषीय संभावना या केन्द्र के राजकोषीय सुदृढ़ीकरण के मार्ग पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। तथापि, यह सुनिश्चित करने के लिए कि केन्द्र की राजकोषीय संभावनाएं हासिल की जाएं, यह सुझाव दिया जाता है कि राज्यों को केन्द्र की सहायता में आनुपतिक कटौती की जाएगी, जिसे ''आयोजना अंतरण'' के रूप में जाना जाता है।

एक तत्काल ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि सीएएस अंतरण केवल मामूली रूप से प्रगामी हैं (चित्र 10.3)। राज्य प्रति व्यक्ति सघउ के साथ सह-संबंध-घातांक - 0.29 है। यह

सारणी 10.3 : राज्यों को एफएफसी के अंतरणों का वियोजन

राज्य	14वें वित्त आयोग में राज्य का हिस्सा	13वें वित्त आयोग में राज्य का हिस्सा	एफएफसी अंतरणों का वियोजन	
			विभाज्य पूल में परिवर्तन के कारण	हिस्से में परिवर्तन के कारण
आंध्र प्रदेश (संयुक्त)	0.06742	0.06937	107.5	-7.5
अरुणाचल प्रदेश	0.0137	0.00328	24.9	75.1
असम	0.03311	0.03628	129.0	-29.0
बिहार	0.09665	0.10917	142.8	-42.8
छत्तीसगढ़	0.0308	0.0247	64.9	35.1
गोवा	0.00378	0.00266	53.9	46.1
गुजरात	0.03084	0.03041	96.7	3.3
हरियाणा	0.01084	0.01048	92.3	7.7
हिमाचल प्रदेश	0.00713	0.00781	128.9	-28.9
जम्मू एंड कश्मीर	0.01854	0.01551	69.5	30.5
झारखण्ड	0.03139	0.02802	78.2	21.8
कर्नाटक	0.04713	0.04328	82.7	17.3
केरल	0.025	0.02341	86.1	13.9
मध्य प्रदेश	0.07548	0.0712	87.4	12.6
महाराष्ट्र	0.05521	0.05199	87.1	12.9
मणिपुर	0.00617	0.00451	56.6	43.4
मेघालय	0.00642	0.00408	47.7	52.3
मिजोरम	0.0046	0.00269	43.7	56.3
नागालैंड	0.00498	0.00314	47.3	52.7
ओडिशा	0.04642	0.04779	107.7	-7.7
पंजाब	0.01577	0.01389	76.2	23.8
राजस्थान	0.05495	0.05853	118.4	-18.4
सिक्किम	0.00367	0.00239	49.0	51.0
तमिलनाडु	0.04023	0.04969	207.5	-107.5
त्रिपुरा	0.00642	0.00511	64.1	35.9
उत्तर प्रदेश	0.17959	0.19677	129.0	-29.0
उत्तराखंड	0.01052	0.0112	118.2	-18.2
पश्चिम बंगाल	0.07324	0.07264	98.0	2.0

स्रोत : वित्त मंत्रालय एवं वित्त आयोगों की रिपोर्टें

आयोजना अंतरण का परिणाम है, यह गाडगिल सूत्र से हटकर विगत कुछ वर्षों में अधिकाधिक विवेकाधीन होता जा रहा है। अधिक केन्द्रीय विवेकाधीनता से स्पष्ट रूप से प्रगति कम होती है। उप-प्रमेय यह है कि एफएफसी की सिफारिशों को क्रियान्वित करने से प्रगति बढ़ेगी क्योंकि प्रगामी कर अंतरण बढ़ेगा और विवेकाधीनता और कम प्रगामी आयोजना अंतरण कम होगा।

राज्यों की बढ़ी हुई राजकोषीय स्वायत्तता को, केन्द्र की राजकोषीय गुंजाइश को बनाए रखने के साथ संतुलित करने में सीएएस अंतरणों में कटौती किया जाना शामिल है। लेकिन उत्तरोक्त कार्य करने के ऐसे अनेक तरीके हैं जो विवेकाधीन तरीकों से लेकर फॉर्मूला आधारित हैं। उत्तरोक्त तरीके में भी कई विकल्प हैं; (i) सीएएस अंतरणों के संबंध में विभिन्न राज्यों में आनुपातिक कटौती; (ii) कानूनी समर्थन प्राप्त/अधिदेशात्मक योजनाओं[6] का कार्यान्वयन सुनिश्चित करने और फिर अवशिष्ट में आनुपातिक कटौती करना। (iii) सीएएस अंतरणों का प्रतिव्यक्ति समान वितरण; (iv) कानूनी समर्थन प्राप्त योजनाओं का कार्यान्वयन करना और फिर शेष राशि का वितरण, कर-अंतरण से संबंधित एफएफसी फार्मूला की तर्ज पर करना इत्यादि; बात को समझने में असानी के लिए यहां हम सिर्फ विकल्प (i) की चर्चा करेंगे। हम राज्यों को दिए गए निवल अधिशेष की गणना करते हैं, अर्थात् सीएसी अंतरणों में कटौती को घटाकर एफएफसी अंतरणों में वृद्धि के बीच अंतर और ये परिणाम सारणी 10.4 में दिए गए हैं।

सारणी 10.4 में वर्ष 2015-16 में एफएफसी और सीएएस अंतरणों से मिलने वाले लाभों की राज्यवार तुलना की गई है। कॉलम 3 में दिखाया गया अधिशेष/कमी[7] का मूल्य 2014-15 की तुलना में 2015-16 में एफएफसी से प्राप्त कुल लाभ और सीएएस में कटौती के बीच अंतर को आकलित करके निकाला गया है। यह अंतर जनसंख्या, एनएसडीपी और अपने कर-राजस्व के संदर्भ में क्रमशः कालम 4, 5 और 6 में भी दिखाया गया है। इन कॉलमों में दिखाए गए आंकड़े मूलतः इस प्रश्न का भी उत्तर देते हैं कि क्या राज्य, यदि वह चाहें, विशेषकर कानूनी समर्थन प्राप्त योजनाओं पर, सीएएस द्वारा वित्तपोषित कार्यक्रमों पर व्यय करने का वही स्तर बनाए रख सकते हैं और फिर भी उनके पास अपने नए कार्यक्रमों को वित्तपोषित करने के लिए अतिरिक्त संसाधन बचे रहें। यदि वे केन्द्रीय प्रायोजित स्कीमें स्वीकारना नहीं चाहते तो एफएफसी अंतरणों में हुई वृद्धि नया, विलंगम रहित धन होगा।

चित्र 10.3: 2011-14 में प्रति व्यक्ति औसत सीएएस अंतरण और प्रति व्यक्ति एनएसडीपी

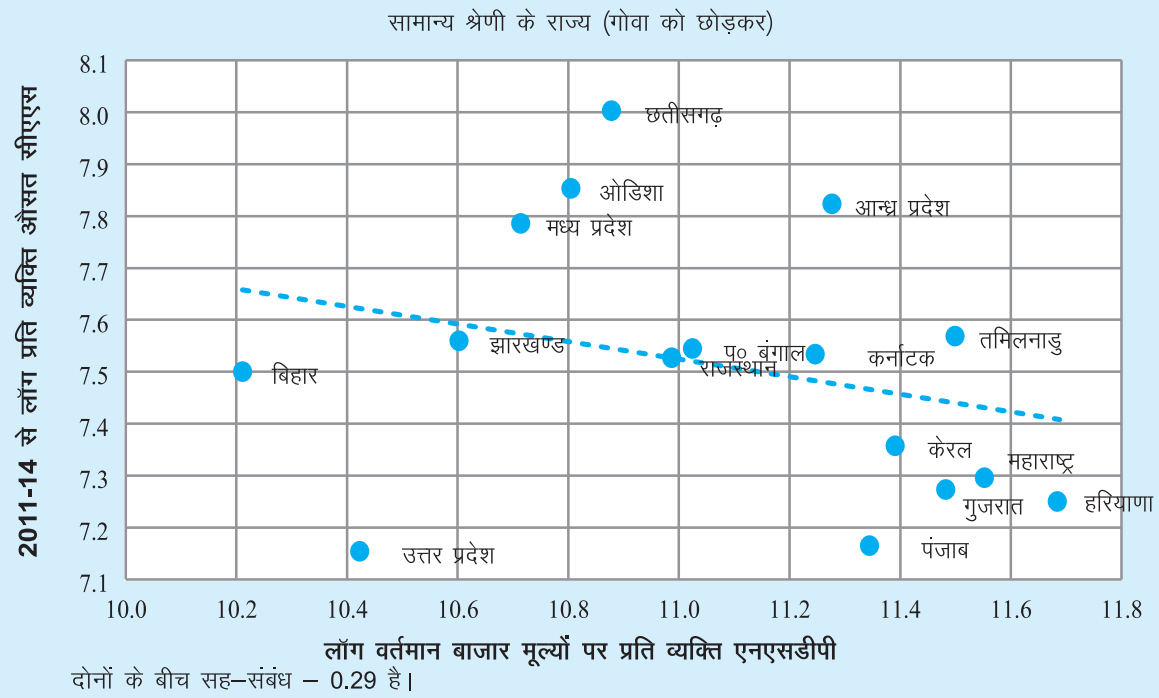

दोनों के बीच सह–संबंध – 0.29 है।

[6] कानूनी रूप से समर्थित स्कीमें हैं एसएसए, मनरेगा, एमपीएलएडी, एसपीए से ईएपी, पीएमजीएसवाई व अन्य।

[7] अधिशेष और कमी 2014-15 और 2015-16 में राज्यों को सीएएस आवंटनों के आकलन/अनुमान के बारे में कतिपय अवधारणाओं पर आधारित हैं। एक बार 2014-15 के सीएएस आवंटन के वास्तविक आंकड़े और राज्यों को अनुमानित सीएएस आवंटनों का पता लगाने के बाद, अधिशेष/कमी का आकलन भिन्न हो सकता है।

सारणी 10.4 : सीएएस के अंतर्गत अंतरण के बाद कुल अधिशेष/कमी, लेकिन केन्द्र के लिए राजकोषीय गुंजाइश बनाकर रखते हुए

राज्य	कानूनी समर्थन प्राप्त योजनाओं के अतिरिक्त सीएएस (करोड़ रू)	सीएएस के अंतर्गत अंतरण के बाद कुल अधिशेष/कमी, लेकिन केन्द्र के लिए राजकोषीय गुंजाइश बनाकर रखते हुए			
		संपूर्ण (करोड़ रू)	प्रति व्यक्ति (रू में)	एनएसडीपी का %	ओटीआर का %
आंध्र प्रदेश (संयुक्त)	5062	10134	1198	1.5	19.0
अरुणाचल प्रदेश	2555	4572	33038	41.8	1439.2
असम	5860	4378	1403	3.5	57.3
बिहार	6998	8783	844	3.2	69.6
छत्तीसगढ़	2673	5258	2058	3.8	49.1
गोवा	180	995	6820	2.7	39.6
गुजरात	4179	2454	406	0.4	5.5
हरियाणा	1509	714	282	0.2	3.5
हिमाचल प्रदेश	3593	6826	9944	11.7	166.2
जम्मू एंड कश्मीर	8185	10679	8515	17.1	225.0
झारखण्ड	2870	4650	1410	3.6	66.9
कर्नाटक	4873	5300	867	1.1	11.4
केरल	2778	7834	2345	2.5	30.5
मध्य प्रदेश	7959	10389	1431	3.1	38.5
महाराष्ट्र	5365	7496	667	0.6	8.6
मणिपुर	2029	1250	4861	11.4	339.5
मेघालय	1536	661	2229	4.1	94.8
मिजोरम	1157	1967	17925	26.0	1100.7
नागालैंड	2019	1839	9293	12.7	605.0
ओडिशा	6826	3497	833	1.7	26.0
पंजाब	1820	2478	893	1.0	13.2
राजस्थान	6618	2423	353	0.6	9.5
सिक्किम	1415	489	8006	5.2	166.3
तमिलनाडु	2376	2644	366	0.4	4.4
त्रिपुरा	2139	458	1246	2.0	53.3
उत्तर प्रदेश	9110	18716	937	2.7	35.6
उत्तराखंड	3014	-48	-48	-0.1	-0.9
पश्चिम बंगाल	8386	11365	1245	2.0	45.6
जोड़	113081	138198			

स्रोत : वित्त मंत्रालय।

एफएफसी अंतरणों से सीएएस कटौती घटाने के बावजूद समस्त जीसीएस राज्य लाभान्वित होते है। जीसीएस के अंतर्गत शीर्ष तीन लाभ प्राप्तकर्ता राज्य हैं-उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल और मध्य प्रदेश जबकि एससीएस के संबंध में ये राज्य हैं जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश और अरुणाचल प्रदेश। अधिशेष/कमी को मापने का बेहतर तरीका प्रति व्यक्ति संदर्भ में होगा। जीसीएस के मुख्य लाभ प्राप्तकर्ता राज्य हैं-गोवा, केरल और छत्तीसगढ़ तथा एससीएस के संबंध में अरुणाचल प्रदेश, मिज़ोरम और हिमाचल प्रदेश हैं।

वर्तमान बाज़ार मूल्य पर एनएसडीपी के प्रतिशत के रूप में अधिशेष/कमी सारणी 10.4 के कॉलम 5 में दिखाई गई है, जीसीएस के संबंध में राजकोषीय संसाधनों में अधिकतम वृद्धि करने वाले राज्य हैं-छत्तीसगढ़, झारखण्ड, बिहार और एससीएस के संबंध में ये राज्य हैं-अरुणाचल प्रदेश, मिज़ोरम,

जम्मू-कश्मीर। ये अधिशेष राज्यों के राजस्व में उल्लेखनीय वृद्धि करेंगे। जीसीएस के संबंध में ऐसे 'नौ' राज्य हैं जिनके द्वारा उनके अपने कर राजस्व के 25 प्रतिशत से अधिक प्राप्त होने की उम्मीद है (सारणी 10.4 का कॉलम 6)।

10.5 चेतावनियां और निष्कर्ष

इस कवायद के संबंध में कुछ चेतावनियां या पेचीदगियां नोट की जानी चाहिए। पहले तो यह कि वे 2014-15 और 2015-16 के संबंध में सकल घरेलू उत्पाद की वृद्धि, राजस्व और व्यय संबंधी अनुमानों के बारे में बुनियादी पूर्वानूमानों के प्रति संवेदनशील हैं। दूसरे, 2014-15 में सीएएस राशियों के बारे में और 2015-16 में सीएएस अनुमानों में कटौतियों के संबंध में भी अनुमान लगाए गए हैं। इसलिए इन्हें व्याख्यात्मक परिकलन ही माना जाना चाहिए। उदाहरणत:, एक और विकल्प यह होगा कि राज्य सूची में शामिल योजनाओं को वापिस राज्यों को ही अंतरित कर दिया जाए। इसके अलावा, अनुमान केवल वर्ष 2015-16 के लिए प्रस्तुत किए गए हैं जिसके बाद वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) के कार्यान्वयन और अगले वेतन आयोग का पंचाट जैसे अतिरिक्त कारक आगामी वर्ष से आगे के अनुमानों को प्रभावित करेंगे।

इन चेतावनियों के चलते, मुख्य निष्कर्ष ये हैं कि चौहदवें वित्त आयोग ने कर-अंतरण में ऐसे दूरगामी परिवर्तन किए हैं जो राज्यों को अधिक वित्तीय स्वायत्तता देते हुए देश को बेहतर राजकोषीय संघवाद की ओर ले जाएंगे। इसमें राज्यों को किए जाने वाले अन्य केन्द्रीय अंतरणों को कम करने के लिए एफएफसी द्वारा प्रेरित अनिवार्यता से भी वृद्धि होगी। दूसरे शब्दों में, राज्यों के पास राजस्व और व्यय के मोर्चों पर अधिक स्वायत्तता होगी। ये आंकड़े यह भी इंगित करते हैं कि यह जरुरी नहीं कि राजकोषीय संघवाद की दिशा में नए सिरे से दिया जा रहा यह महत्व केन्द्र की राजकोषीय क्षमता के प्रतिकूल होगा। सीएएस से हटकर एफएफसी अंतरणों की प्रक्रिया को अपनाने का एक संपार्श्विक लाभ यह होगा कि समग्र प्रगति में तेजी आएगी।

निश्चित रूप से, सीएएस अंतरणों में कटौती से कुछ संक्रमण लागतें भी होंगी। लेकिन अव्यवस्था की गुंजाइश कम कर दी गई है क्योंकि अतिरिक्त एफएफसी संसाधन सिर्फ उन्हीं राज्यों को दिए जाएंगे जिनकी सबसे बड़ी सीएएस वित्तपोषित स्कीमें है।

कुल मिलाकर, एफएफसी की दूरगामी प्रभाव वाली सिफारिशों के साथ-साथ नीति आयोग के सृजन से सरकार का सहयोगात्मक और प्रतिस्पर्द्धी संघवाद का सपना साकार करने में मदद मिलेगी। शहरों और अन्य स्थानीय निकायों को सहयोगात्मक और प्रतिस्पर्द्धी संघवाद की परिधि में शामिल करने का यह आवश्यक, बल्कि सच कहें तो अहम कार्य अब अगली नीतिगत चुनौती है।